॥ ॐ ॥

नव तत्त्व प्रकरण

शब्दार्थ अने भावार्थ.



प्रकाशकः-श्रावक भीमशी माणक

बारीआ बील्डींग, पायधुनी, मुबई ३.

प्रत २०००   आवृत्ति आठमी.

सर्व हक स्वाधीन.

संवत १९८६,   सन १९३०

PRINTED BY MAVJI D PATEL AT THE NEW LAXMI
PRINTING PRESS GATA BUILDING MANDVI
BOMBAY NO 3
AND
PUBLISHED BY SHA HIRJI GUPTABHAI PADAMSI
SOLE PROPRIETOR —
SHRAVAK BHIMSHI MANAK
PARIA BUILDING PYDHONIE BOMBAY 3

प्रस्तावना.

ज्व्य जीवोमां एवा थोमाज हशे के जेने सुखनी इछा उद्भवती न होय? परंतु ते इछा परिपूर्ण करवाने मनुष्योनेज अधिकार मळेल छे. कारण के सर्व प्राणीउंमां मनुष्योनेज विशिष्ट साधनो प्राप्त थयेल छे केजे वडे ते ईछितने परिपूर्ण प्राप्त करे छे, आने माटे दरेक मनुष्योने धर्म एटले शुं? ते समजवानी जरूर छे, एटले जेम कोइ उच्च स्थानपर चढवाने अनुकमे अकेक पगथीयुं चढवु पडे छे, तेम एने माटे पण तेनां विविध अंगोनुं वारीकीथी अध्ययन करवानी जरूर छे.

जीवाजीवना ज्रेदोथी अजाण एवो अबुध शुद्ध संयम केम पाळी शकशे?" आवुं श्री दशवैकालिक सूत्रनुं कथन आपणने एज उपदेशी रह्यु छे के–हे जव्यजनो! आत्मा अनात्मानां स्वरूपने उंळखो.

આત્મા અનાત્માના અનત ભાવભેદને અવલં-બતી અગાધ જ્ઞાનીઓને ગમ્ય એવી સ્યાદ્વાદ શૈ-લીથી તત્ત્વનું સપૂર્ણ જ્ઞાન તો સર્વજ્ઞ સર્વદર્શીને જ શક્ય છે, પરંતુ યથામતિ-શક્તિ નવતત્ત્વનું સ્વ રૂપ જાણવું સર્વ મનુષ્યોને શક્ય છે. તેનાં સ્મરણ મનનથી મનુષ્યોમાં વિવેકબુદ્ધિ જાગ્રત થાય છે, સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે, અને કલ્યાણકારી આત્મજ્ઞાનનો શુભ ઉદય થાય છે તદુપરાંત નવતત્ત્વમાં લોકાલોકનાં સપૂર્ણ સ્વરૂપનું સંક્ષિ-પ્ત વિવરણ હોઇ સાધારણ બોધવાળી વ્યક્તિઓ પણ આવશ્યક તત્ત્વજ્ઞાન મેળવી દ્રષ્ટિની વિશા-લતા અને સમભાવ પ્રાપ્ત કરી શકે છે, કે જેનાં પૂણ્યપ્રભાવે આત્મજ્ઞાનનો નિર્મળ રસ ઉદ્ભવે છે.

અનત જ્ઞાનના અધિષ્ઠાનરૂપ શ્રી તીર્થંકર ભગવાને જ્ઞાનપ્રભાવે લોકાલોકના અનંત ભાવ અને ભેદો જોયા તથાપિ જનસમૂહનાં કલ્યાણાર્થે

मोक्ष पथ प्रयाण अर्थे नवज पदार्थोमा तेमणे सर्व जावोनो समावेश कर्यो

भारतवर्षमां प्रचलित मुख्य धर्मोना भेद नीचे टुंकमा मुकावला खातर आप्या छे तेपरथी स्पष्ट समजी शकाय तेम छे के, ते सर्व धर्मोना सूक्ष्म विचार नवतत्त्वमा समाइ जाय छे राखथी ढकायला अग्निने प्रज्वलित करवा जेम पवननी लहेर पण बस छे, तेम आत्मानी अनत शक्तिओने प्रफुल्लित करवा श्री अर्हत भगवाननो नवतत्त्व विज्ञाननो पवित्र बोध सर्वोत्तम छे ए बोधनी कुंची वडे द्वादशांगी रूप पिटक–पेटी पण खुली जाय छे आ सर्व आपणने शुं एमनथी सूचवता के नवतत्त्वने अनत भेदे सपुर्ण जाणनार सर्वज्ञ अने सर्वदर्शी थइ शके छे !!

आ प्रस्तावनाने छेडे ए नवे तत्त्वो तेना सार सहित मूक्या छे तेना त्रण प्रकार छे:-ज्ञेय–तजवा

योग्य, ज्ञेय—जाणवा योग्य अने उपादेय—ग्रहण करवा योग्य."

श्रीमन् महावीर भगवानना प्ररूपेला शासनमां मतमतांतरो पडवानां एक मुख्य कारण रूपे-उपासक वर्गनी-तत्त्वज्ञान प्रत्येनी उदासीनता अने मात्र विधिविधानरूप क्रियाकाण्डमांज थती प्रवृत्ति गणी शकाय.

आ पृथ्वीतल पर वसती मानव मेदिनी दोढ अब्ज (लगभग) पैकीनी मात्र तेर लाख जेटली श्रमणोपासक जैन प्रजा लेखीए तो तेमांये नवतत्त्वने सारी रीते जाणनार फक्त गण्या गांठ्या—वढके आंगळीना वेढाये गणी शकाय तेटलाज हशे.

तत्त्वज्ञान संबंधीनी आ शोचनीय स्थितिने प्रतापेज मतमतांतरो सरजाय छे—एम कहेनार के माननारने आपणे खोटा नहि कही शकीए श्री नवतत्त्वनां पठन-मननथी पांच महाव्रतो

नुं मूल दृढ थई, श्री जिनेश्वरनां वचनामृतनुं फल आनंद प्रसादी प्राप्त थशे एटलुज नहि पण मुनिना आचार समजणपूर्वक पाळवानुं सरळ थतां ज्ञान अने क्रिया विशुद्ध थतां शुद्ध आत्मगुण प्राप्तिनी उषा प्रगटशे.

त्रिजगत्पूज्य श्रीजिनेन्द्र भगवाने प्ररूपेल आ तत्त्वोनुं स्वरूप आवुं छे.–जीव अने अजीवनां तत्त्वो द्रव्यरूपे तथा शेष सात तत्त्वो जीव अजीवना गुण के क्रियारूपे छे

१ बौद्धदर्शन विविधदर्शनो नीचे दर्शाव्या प्रमाणे तत्त्वो माने छे–मुख्य चार तत्त्वो १ दुःखतत्त्व २ समुदय तत्त्व, ३ मार्ग तत्त्व अने ४ मोक्ष तत्त्वोथी बनेलुं छे

दुःखतत्त्वमां समायला विज्ञान वेदना सञ्ज्ञा संस्कार अने रूप एवा पांच स्कंधथी भिन्न आत्मा आ दर्शनमां मानेलो नथी, अने स्कंधोपण

क्षणभंगुर मानेला छे एथी जैनदर्शननां जीव तथा अजीवरूप मुख्य तत्त्वोनो आ दर्शनमां अभाव छे

२ नैयायिक दर्शन १६ तत्त्वो माने छे. १ प्रमाण २ प्रमेय, ३ संशय, ४ प्रयोजन, ५ दृष्टांत, ६ सिद्धांत, ७ अवयव, ८ तर्क, ९ निर्णय, १० वाद, ११ जल्प, १२ वितंडा, १३ हेत्वाभास, १४ छळ, १५ जाति अने १६ निग्रहस्थानथी. तेमां आत्यंतिक दुःखध्वंस एज मोक्ष एवी मान्यता छे. मुक्तात्माने दुःख नथी होतुं, तेम बुद्धि सुख आदि नव विशेष गुणोनो पण उच्छेद थाय छे. एथी आत्मानी जड दशानेज नैयायिको मोक्ष माने छे

३ सांख्यमत २५ तत्त्वो माने छे ते नीचे प्रमाणे –१ पुरुष, २ प्रकृति, ३ महत्, ४ अहंकार, ५-९ पांच ज्ञानेंद्रिय, १०-१४ पांच कर्मेन्द्रिय, १५ मन, १६-२० पांच तन्मात्र अने २१-२५ पांच महाभूतो तेओ उपरोक्त २५ तत्त्वोनां ज्ञानद्वारा

विवेक ज्ञान प्राप्त थतां प्रकृतिनी प्रवृत्तिना वि-
रामनेज मोक्ष माने छे, अने आत्माने निर्गुण
माने छे एना बे भेद छे:--सेश्वर सांख्य अर्थात्
योगदर्शन जे ईश्वर माने छे अने निरीश्वर
सांख्य दर्शन जे ईश्वर मानतुं नथी

४ वैशेषिक दर्शन ६ तत्त्वे पहोंचायेल छेः--
१ द्रव्य, २ गुण, ३ कर्म, ४ सामान्य, ५ विशेष,
अने ६ समवाय केटलाएक अभावे नामनु सा
तमुं तत्त्व पण माने छे.

जैन सिद्धांत प्रमाणे आ मतनी उत्पत्ति रो-
हगुप्त नामना जैनमुनिथी थयेल गणाय छे परंतु
तेना कर्त्ता तरीके तो कणादमुनिज सुप्रसिद्ध छे.

उपरोक्त तत्त्वोनां यथार्थज्ञानथी आत्माना
विशेष गुणोना नाशरूप आत्यंतिक दुःखध्वंस
ते मोक्ष एम आ दर्शन माने छे

५ मीमांसादर्शन.--आमां पूर्वमीमांसा तथा

क्षणभंगुर मानेला छे एथी जैनदर्शननां जीव तथा अजीवरूप मुख्य तत्त्वोनो आ दर्शनमां अभाव छे

२ नैयायिक दर्शन १६ तत्त्वो माने छे. १ प्रमाण २ प्रमेय, ३ संशय, ४ प्रयोजन, ५ दृष्टांत, ६ सिद्धांत, ७ अवयव, ८ तर्क, ९ निर्णय, १० वाद, ११ जल्प, १२ वितंडा, १३ हेत्वाभास, १४ छळ, १५ जाति अने १६ निग्रहस्थानथी. तेमां आत्यंतिक दुःखध्वंस एज मोक्ष एवी मान्यता छे. मुक्तात्माने दुःख नथी होतुं, तेम बुद्धि सुख आदि नव विशेष गुणोनो पण उच्छेद थाय छे. एथी आत्मानी जड दशानेज नैयायिको मोक्ष माने छे

३ सांख्यमत २५ तत्त्वो माने छे ते नीचे प्रमाणे.—१ पुरुष, २ प्रकृति, ३ महत्, ४ अहंकार, ५-९ पांच ज्ञानेंद्रिय, १०-१४ पांच कर्मेन्द्रिय, १५ मन, १६-२० पांच तन्मात्र अने २१-२५ पांच महाभूतो तेउ उपरोक्त २५ तत्त्वोनां ज्ञानद्वारा

विवेक ज्ञान प्राप्त थतां प्रकृतिनी प्रवृत्तिना विरामनेज मोक्ष माने छे, अने आत्माने निर्गुण माने छे. एना बे भेद छे.—सेश्वर सांख्य अर्थात् योगदर्शन जे ईश्वर माने छे अने निरीश्वर सांख्य दर्शन जे ईश्वर मानतु नथी.

४ वैशेषिक दर्शन ६ तत्त्वे वहेंचायेल छेः—१ द्रव्य, २ गुण, ३ कर्म, ४ सामान्य, ५ विशेष, अने ६ समवाय केटलाएक अभाव नामनु सातमुं तत्त्व पण माने छे

जैन सिद्धांत प्रमाणे आ मतनी उत्पत्ति रोहगुप्त नामना जैनमुनिथी थयेल गणाय छे परंतु तेना कर्त्ता तरीके तो कणादमुनिज सुप्रसिद्ध छे.

उपरोक्त तत्त्वोना यथार्थज्ञानथी आत्माना विशेष गुणोना नाशरूप आत्यंतिक दुःखध्वंस ते मोक्ष एम आ दर्शन माने छे.

५ मीमांसादर्शन.—आमां पूर्वमीमांसा तथा

उत्तरमीमांसा नामक २ भेद छे पूर्व मीमांसको कर्मकांडमां अने उत्तरमीमांसको ब्रह्ममां एम एकेक तत्त्वज माने छे.

चार्वाक एटले नास्तिक दर्शन—ते मात्र १ पृथ्वी २ पाणी, ३ तेज, ४ वायु अने ५ आकाश एम ए पांच तत्त्वोने माने छे एना सयोगे चेतन्यवान् आत्मा उद्‌भवी पुन. तेमांज विलय पामे छे एटले मोक्ष वगेरेनी आकांक्षाउ मिथ्या गणी मात्र पार्थिव वैभवोनी भोगिकी क्रियाउमांज कृतकृत्यता समजे छे

आ प्रमाणे उपर वर्णवेला सर्व दर्शनोना वास्तविकतत्त्वोनो जैनदर्शनना कथित तत्त्वोमां समावेश थाय छे, तेम समजाववानु आटलुं जाणया पछी जाग्येज रहे

जैनदर्शन—ए मुख्य जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आश्रव, सवर, निर्जरा, बध अने मोक्ष ए

नव तत्त्वोथी योजायलु छे, एटले के आ नव प्रकारे तत्त्व ओळखी हेय तत्त्वोनो त्याग करी उपादेय तत्त्वनुं संपूर्ण ग्रहण थतां मोक्ष सुख आपोआप प्राप्त थाय छे

१ जीवमां—ससारी कर्मसहित ते ससारी तथा कर्मरहित ते सिद्ध मुक्त एम बे प्रकार दर्शावी जीवोनु स्वरूप, भेद, शक्तिओ, जीवनक्रियाओ आदि वर्णव्यां छे.

२ अजीवमां.—तेना पांच प्रकार तथा पांचे पदार्थोना भेद, गुण, आकार, संख्या वगेरे स्वरूपो समजाव्यां छे.

३ पुण्यमां—जीवनी शुभ क्रियाओ, तेवडे बंधातां आत्मा साथनां ४२ प्रकारनां शुभ कर्मो अने तेने भोगववाना प्रकारनुं विवरण करवामां आव्युं छे

४ पापमां—जीवनी अशुभ क्रियाओ, तेवडे बं-

धातां आत्मा साथनां ७१ प्रकारनां अशुभ कर्मो, तथा तेने भोगववाना प्रकारनुं विवेचन करेल छे.

५ आश्रवमां-कर्मागमनना ४१ कारणो त्रिविध प्रकारे वर्णव्यां छे.

संवरमां-चालु समय थी मांडी नवां कर्मोने लागता अटकाववा ५७ भेदी उपाय दर्शाव्या छे.

७ निर्जरामां-पूर्ववद्ध कर्मोना क्षय माटे १२ प्रकारनी तपश्चर्या समजावी छे.

८ बंधमां आत्मा साथे कर्मना संबंधना चार प्रकार तथा ते दरेकना पुन. आठआठ प्रकारनु वर्णन आप्युं छे

. ९ मोक्षनां मोक्ष एटले शुं ? तथा अनेक प्रकारना जीवोपैकी कया जीवो तेना अधिकारी छे, ते तथा सिद्ध मुक्त जीवोनुं स्वरूप वर्णव्युं छे

वांचक समक्ष आ ग्रथनी आठमी आवृत्ति छपाइ बहार पडे छे, तेज तेनी उपयोगिता तथा

तेना अंगेनुं वांचन, मनन वधवानी साविती पूरवार वरे छे.

अमोए आ आवृत्ति खूब संशोधन करावी पुष्कळ सुधारा वधारा साथे बहार पाडी छे जे तेना कदपरथी उपरक जोनारने पण जणाइ आवशे. आम तेना कदमां दोढो फेरफार थवा छतां अमोए तेनी किमतमां लेशमात्र पण फेरफार कर्या सिवाय मूळ किंमतज कायम राखी छे ए परथी सुज्ञ वांचकगण समजी जशे के आ ग्रंथ योजवामां प्रकाशकनो द्रव्योपार्जननो आशय न होतां मात्र सेवाभावज छे. अमोए सातमी आवृत्तिनी प्रस्तावनामां इन्फल्युएन्झा सबब रही गयेलो सुधारो पूरो करी आपवानुं वचन आ वखते पाळी वतावी शकया छीए ते माटे परमात्मानो आभार मानीए छीए

केटलाएक जाईर्ठ किंवा बहेनो मुख-पृष्ठपरनां मात्र नामपरथी किम्मतनो मुकावलो करी श्रेष्ठ-नेष्टनां प्रमाणपत्रो आपी देवानी रुचि वाळा होय ठे तेर्ठने एकवार आ ग्रंथ पूरेपूरो वांची जवा अमारी नम्र ठतां मजबुत विनती ठे.

ठेवटे प्रस्तावना संवधी उल्लेख पूर्ण करतां पहेलां विनंति ठे के–जोके ग्रंथनी शुद्धि अर्थे पूर्ण काळजी राखवामां आवी ठे, तथापि दृष्टि दोपथी रहेल जूलोने वांचकवर्ग क्षंतव्य गणशे. तेमज सिद्धांत विरुद्धनी कोइ बावतोने सुधारी वांचशे एम इच्छीशुं. अलं विस्तरेण.

लि०

बारीआ बिल्डींग, पायधुनी, मुंबई. ता. ११–१–३०

हीरजी घेलाजाइ पदमशी

ना जयाजनेंद्र

અનુક્રમણિકા.

३—पुण्यतत्त्वविचार.

४—पापतत्त्वविचार

५—आश्रवतत्त्वविचार.

६—संवरतत्त्वविचार.

७—निर्जरातत्त्वविचार

८—बंधतत्त्वविचार

९—मोक्षतत्त्वविचार.





॥ अथ ॥

।श्रीनवतत्त्वप्रकरणप्रारंभः।



जीवाऽजीवा पुणं,
पावाऽसवसंवरो यनिज्जरणंणा
वंधो मुक्खो य तहा,
नव तत्ता हुंति नायव्वा ॥१॥
चउदस चउदस वाया,-
लीसा वासी अ हुंति वायाला॥
सत्तावन्नं वारस,
चउ नव ‵ । कमेणेसिं ॥२॥

एगविहदुविहतिविहा,
चउव्विहा पंचछव्विहा जीवा ॥
चेयणतसइयरेहिं,
वेयगईकरणकाएहिं ॥३॥
एगिंदिय सुहुमियरा,
सन्नियरपणिंदिआ य सबि-
तिचउ ॥ अपजत्ता पजत्ता,
कमेण चउदस जियठाणा ४
नाणं च दंसणं चेव,
चरित्तं च तवो तहा ॥

वीरियं उवओगो अ,
एअं जीवस्स लक्खणं ॥ ५ ॥
आहारसरीरिंदिय,-
पज्जत्ती आणपाणभासमणे
चउ पंच पंच छप्पिअ,
इगविगलासन्निसन्नीणं ॥६॥
पणिंदिअत्तिबलूसा,-
साउदस पाण चउ छ सग अट्ठ
इगदुतिचउरिंदीणं,
असन्निसन्नीण नव दस य ॥७॥

॥इति जीवतत्त्वम्॥

धम्माऽधम्माऽगासा,
तियतियभेया तहेव अद्धा य
खंधा देस पएसा,
परमाणु अजीव चउदसहा ८
धम्माऽधम्मा पुग्गल,
नह कालो पंच हुंति अजीवा॥
चलणसहावो धम्मो,
थिरसंठाणो अहम्मो अ॥९॥
अवगाहो आगासं,

पुग्गलजीवाण पुग्गला चउहा
खंधा देस पएसा,
परमाणू चेव नायव्वा ॥१०॥
सद्दंधयार उज्जोअ,
पभा छाया तवेहि आ॥
वण्ण गंध रसा फासा,
पुग्गलाणं तु लक्खणं॥११॥
एगाकोडि सतसठि,
लक्खा सत्तहुत्तरी सहस्सा य॥
सोलहिया,

आवलिया इग मुहुत्तम्मि १२
समयाऽवली मुहुत्ता,
दीहा पक्खा य मास वरिसा य
नणिओ पलिआ सागर,
उस्सप्पिणी सप्पिणी कालो॥
परिणामि जीव मुत्तं,
सपएसा एग खित्त किरिआ य
णिच्चं कारण कत्ता,
सव्वगय इयरअप्पवेसे ॥१४॥
॥ इत्यजीवतत्त्वम् ॥

सा-उच्चगोअ-मणुदुग,
सुरदुग-पंचेंदिजाइ पणदेहा॥
आइ-तितणूणुवंगा,
आइम-संघयण-संठाणा १५
वणचउक्काऽगुरुलहु,
परघाऊसासआयवुज्जोयं ॥
सुभखगइनिमिणतसदस,
सुरनरतिरिआउतित्थयरं १६
तस-बायर-पज्जत्तं,
पत्तेअ थिरं सुभं च सुभगं च॥

सुस्सर-आइज्ज-जसं,
तसाइदसगं इमं होइ ॥ १७ ॥
॥ इति पुण्यतत्वम् ॥
नाणंतराय दसगं,
नव बीए नीअसायमिच्छत्तं ॥
थावरदस नरयतिगं,
कसायपणवीस तिरियदुगं १८
इग-बि-ति-चउ-जाईओ,
कुखगइ उवघाय हुंति पावस्स
अपसत्थं वण्णचऊ,

अपढम-संघयण-संठाणा १९
थावर-सुहुम-अपज्जं,
साहारणमथिरमसुभदुभ-
गाणि ॥ दुस्सरणाइज्जजसं,
थावरदसगं विवज्जत्थं ॥२०॥

॥ इति पापतत्त्वम् ॥

इंदिअ-कसाय-अव्वय,
जोगा पंचचउ पंच तिन्नि कमा
किरिआओ पणवीसं,
इमा उ ताओ अणुक्कमसो २१

काइत्र अहिगरणीया,
पाउसिया पारितावणीकिरिया
पाणाइवाइ रंभित्र,
परिग्गहिया मायवत्तीत्रा २२
मिच्छादंसणवत्ती,
अपच्चक्खाणी य दिठी पुठि त्र
पाडुच्चित्र सामंतो,-
वणीत्र नेसत्थि साहत्थी २३
आणवणि वित्रारणित्रा,
अणाभोगा अणवकंखपच्च-

इआ॥ अन्ना पओग समुदा,-
ए पिज दोसेरिआवहिआ ॥
॥ इत्याश्रवतत्त्वम् ॥
समिई-गुत्ति-परीसहा,
जइधम्मो न्नावणा चरित्ताणि
पण-ति-डुवीस-दस-बार,
पंचन्नेएहिं सगवन्ना ॥ २५ ॥
इरिया न्नासेणादाणे,
उच्चारे समिईसु अ ॥
मणगुत्ति वयगुत्ति,

कायगुत्ति तहेव य॥ २६ ॥
खुहा पिवासा सी-उएहं,
दंसा चेला रइ-त्थिओ ॥
चरित्रा निसिहिया सिजा,
अकोस वह जायणा ॥२७॥
अलाभ-रोग-तणफासा,
मल-सक्कार-परीसहा ॥
पन्ना अन्नाण सम्मत्तं,
इअ बावीस परीसहा ॥२८॥
खंती मद्दव अज्जव,

मुत्ती तव संजमे अ बोद्धव्वे ॥
सच्चं सोअं आकिं,-
चणं च बंभं च जइधम्मो २९
पढममणिच्चमसरणं,
संसारो एगया य अन्नत्तं ॥
असुइत्तं आसव सं,-
वरो अ तह णिज्जरा नवमी ३०
लोगसहावो बोही,
दुल्लहा धम्मस्स साहगा अ-
रिहा ॥ एआओ भावणाओ,

न्नावेअव्वा पयत्तेणं ॥ ३१ ॥
सामाइ अत्थ पढमं,
छेओवठावणं न्नवे बीअं ॥
परिहारविसुध्धीअं,
सुहुमं तह संपरायं च ॥३२॥
तत्तो अ अहरकायं,
खायं सव्वंमि जीवलोगंमि ॥
जं चरिऊण सुविहिआ,
वच्चंति अयरामरं ठाणं ॥३३॥
॥ इति संवरतत्वम् ॥

वारसविहं तवो णि,-
ज्जरा यवंधो चउ विगप्पो अ॥
पयई-ठिइ-अणुभाग,-
पएसभेएहिं नायव्वो ॥ ३४ ॥
अणसणमूणोअरिया,
वित्तीसंखेवणं रसच्चाओ ॥
कायकिलेसो संली,-
णया य बज्झो तवो होई॥३५॥
पायच्छित्तं विणओ,
वेयावच्चं तहेव सज्झाओ ॥

झाणं उस्सग्गो वि अ,
अभिंतरओ तवो होई ॥३६॥
॥ इति निर्जरातत्वम् ॥
पयइ सहावो वुत्तो,
ठिइ कालावहारणं ॥
अणुभागो रसो णेओ,
पएसो दलसंचओ ॥ ३७ ॥
पड-पडिहार-सि-मज्ज-,
हड-चित्त-कुलाल-भंडगारीणं
जह एएसिं भावा,

कम्माणवि जाण तह न्नावा ॥
इह नाण-दंसणावर,-
ण-वेय मोहाउ नाम गोआणि
विग्घं च पण-नव-दु-अ,-
ठवीस चउ तिसय दु पण विहं
नाणे अ दंसणावरणे,
वेअणिए चेव अंतराए अ ॥
तीसं कोमाकोमी,
अयराणं ठिइ य उक्कोसा ४०
सत्तरि कोमाकोमी,

मोहणिए वीस नामगोएसु ॥
तित्तीसं अयराइं,
आउठिइबंध उक्कोसा ॥४१॥
बारसमुहुत्त जहन्ना,
वेयणिए अठ नामगोएसु ॥
सेसाणंतमुहुत्तं,
एयं बंधठिईमाणं ॥ ४२ ॥
॥ इति बंधतत्त्वम् ॥
संतपयपरूवणया,
दव्वपमाणं च खित्त फुसणाय॥

कालो अ अंतर भाग,
भावे अप्पाबहू चेव ॥ ४३ ॥
संतं सुद्धपयत्ता,
विज्जंतं खकुसुमव्व न असंतं॥
मुक्त्ति पयं तस्स उ,
परूवणा मग्गणाईहिं ॥४४॥
गइ इंदीए अ काए,
जोए वेए कसाय नाणे य॥
संजम दंसण लेसा,
भव सम्मे सन्नि आहारे॥४५॥

नरगइ-पणिंदि-तस-भव,-
सन्नि-अहक्खाय-खइअसम्मत्ते
मुक्खो णाहार-केवल,-
दंसण-नाणे न सेसेसु ॥४६॥
दव्वपमाणे सिध्धा,-
णं जीवदव्वाणि हुंति णंताणि ॥
लोगस्स असंखिज्जे,
भागे इक्को य सव्वेवि ॥ ४७ ॥
फुसणा अहिआ कालो,
इग सिद्ध पडुच्च साइओणंतो ॥

पञ्चिवायाजावाओ,
सिद्धाणं अतरं नत्थि ॥४८॥
सव्वजियाणमणंते,
जागे ते तेसिं दंसणं नाणं ॥
खइए जावे परिणा,-
मिए अ पुण होइ जीवत्तं॥४ए॥
थोवा नपुंससिध्धा,
त्थीनर सिध्धा कमेण संखगुणा
इअ मुरकतत्तमेअं,
नव तत्ता लेसओ जणिआ ॥

जीवाइनवपयत्थे,
जो जाणइ तस्स होइ सम्मत्त
भावेण सद्दहंतो,
अयाणमाणेवि सम्मत्तं ।५१
सव्वाइ जिणेसरभा,-
सिआइं वयणाइ नन्नहा हुंति
इअ बुध्धी जस्स मणे,
सम्मत्तं निच्चलं तस्स ॥५२
अंतोमुहुत्तमित्तं,-
पि फासिअं हुज्ज जेहिं सम्मत्त

तेसिं अवड्ढपुग्गल,
परिअट्टो चेव संसारो ॥५३॥
उस्सप्पिणी अणंता,
पुग्गलपरिअट्टओ मुणेअव्वो
तेणंतातीअध्धा,
अणागयध्धा अणंतगुणा ५४
जिण-अजिण-तित्थतित्था,
गिहि-अन्न-सलिंग-थी-नर-
नपुंसा ॥ पत्तेअ-सयं-
बुध्धा, बुध्धबोहि क्कणिक्क

सिध्दा (य सिध्दणिकाय)।५५।
जिणसिध्दा अरिहंता,
अजिणसिध्दा य पुंडरिअपमु-
हा ॥ गणहारि तित्थसिध्दा,
अतित्थसिध्दा य मरुदेवी।५६।
गिहिलिंगसिध्द भरहो,
वक्कलचीरी य अन्नलिंगम्मि।
साहू सलिंगसिध्दा,
थीसिध्दा चंदणापमुहा॥५७॥
पुंसिध्दा गोयमाई,

गांगेयपमुह नपुंसया सिध्दा ॥
पत्तेयसयंबुध्दा,
नणिया करकंकु कविलाई ५८
तह बुध्दबोहि गुरुबो,-
हिया इग समय इग सिध्दाय ॥
इग समएवि अणेगा,
सिध्दा ते णेगसिध्दाय ॥ ५ए ॥
इति मोक्षतत्त्वम् ॥
इति श्री नवतत्त्वं समाप्तम् ॥

श्रीवीतरागाय नमः

॥ अथ ॥

श्रीबालावबोधसहितं नवतत्वप्रकरणं

॥ प्रारभ्यते ॥

श्रीवीरजिन नत्वा, मत्वा तद्दिष्टजावचक्रं च ॥
नवतत्त्वार्थ विवरण, कुर्वेऽहं बालबोधाय ॥ १ ॥

प्रथम ग्रंथकार श्रीधर्मसूरि महाराज वस्तुसंकीर्तनरूप मंगलद्वारा नव तत्त्वनां नाम कहे छे.

आर्यावृत्तं.

जीवाऽजीवा पुण्णं, पावाऽसव संवरो
य निज्जरणा ॥ बंधो मुक्खो य तहा,
नव तत्ता हुंति नायव्वा ॥ १ ॥

गाथा १ लीना छूटा शब्दना अर्थ

जीव–जीवतत्त्व	बंधो–बंधतत्त्व.
अजीवा–अजीवतत्त्व	मुरको–मोक्षतत्त्व
पुण–पुण्यतत्त्व	य–अने
पाव–पापतत्त्व	तहा–तेमज
आसव–आश्रवतत्त्व	नव–नव
य–अने	तत्ता–तत्त्वो
संवरो–संवरतत्त्व	हुंति–छे
निज्जरणा–निर्जरातत्त्व	नायव्वा–जाणवा योग्य

विस्तारार्थः–(जीवाजीवा के०) जीवाजीवौ, एटले व्यवहार नये करी जे शुभाशुभ कर्मोनो कर्त्ता, हर्त्ता तथा भोक्ता छे, अने निश्चय नये करी ज्ञान, दर्शन तथा चारित्ररूप निज गुणोनोज कर्त्ता तथा भोक्ता छे, अथवा दुःख सुख ज्ञानोपयोगलक्षणवंत चेतना सहित होय, तथा प्राण धारण करे, ते प्रथम जीवतत्त्व कहेवाय.

---

१ स्थूलदृष्टिए

तेथी विपरीत जे चेतना रहित जम् स्वनाव-वाळो होय, ते वीजु अजीवतत्त्व कहेवाय, जेणे करी शुन कर्मनां पुजलोनो संचय थवाथी सुखनो अनुनव थाय ठे, ते त्रीजुं (पुण्यं के०) पुण्यं, एटले पुण्यतत्त्व कहेवाय, ते पुण्यना वे नेद ठे एक द्रव्यपुण्य, अने वीजुं नावपुण्य, तेमां जीवने सुख नोगववामां कारणरूप जे शुन कर्म, ते द्रव्यपुण्य अने शुनकर्मनी उत्पत्तिमां कारणरूप जे शुन आत्मपरिणाम, ते नावपुण्य कहेवाय अथवा पुण्यानुबंधी पुण्य अने पापानुबंधी पुण्य, एम पण वे नेद थाय, तेमां पुण्य नोगवतां नवुं पुण्य बधाय, ते पुण्यानुबंधी पुण्य अने पुण्य नोगवतां नवुं पाप बंधाय, ते पापानुबंधी पुण्य कहेवाय. तेथी विपरीत जेणे करी अशुन कर्मनां पुजलोनो संचय थवाथी डुःखनो अनुनव थाय ठे, ते

चोथुं (पाव क०) पाप, एटले पापतत्त्व कहेवाय, तेमां जीवने दुःख भोगववामां कारणरूप अशुभ कर्म, ते द्रव्यपाप अने दुःखने उत्पन्न करवामां कारणरूप आत्माना जे अशुभ परिणाम, ते भावपाप कहेवाय, अथवा पापानुबंधी पाप अने पुण्यानुबंधी पाप, ते पुण्यतत्त्वथी विपरीत पणे जाणवा जेणे करी नवां कर्म बंधाय छे, अशुभ कर्मोपादानहेतु हिंसादिक ते पांचमु (आसव के०) आश्रव, एटले आश्रवतत्त्व कहेवाय, तेमा जीवमां कर्मनु आववुं, ते द्रव्य आश्रव अने कर्म आववाना कारणरूप रागादियुक्त आत्मपरिणाम, ते भावआश्रव, एम बे भेदे सवर जाणवो जेणे करी आवतां कर्म रोकाय, अर्थात् पांच समिति अने त्रण गुप्ति तेणे करी जे आश्रव रोध करवो, ते छट्ठु (सवरो के०) संवर, एटले संवरतत्त्व, तेमां जीवमां आवतां

कर्मोनु रोकावुं, ते द्रव्य संवर, अने आवतां कर्मोने रोकवामां कारणरूप जे आत्मानो शुद्ध परिणाम, ते भाव संवर, एम बे भेदवाळुं संवर तत्त्व कहेवाय, (य के०) च, एटले अने जेणे करी आत्मप्रदेशमाथी देशथकी कर्म जूदां थाय छे, अथवा पूर्वे करेलां कर्मोनो जे क्षय थाय छे, एटले तप प्रमुखे करी कर्मनु पचाववुं थाय छे, ते सातमुं (निज्जरणा के०) निर्जरणा, एटले निर्जरातत्त्व कहेवाय, तेमां कर्मोनो देशथी क्षय थाय, ते द्रव्यनिर्जरा अने ते क्षय थवामां कारणरूप जीवनो जे विशुद्ध परिणाम, ते भावनिर्जरा, अथवा समकीती जीवनी सकाम निर्जरा अने मिथ्यात्वीनी अकाम निर्जरा, एम पण बे भेदे निर्जरा कहेवाय जे नवां कर्मोनुं ग्रहण करीने तेनी साथे जीवनुं बंधन थवुं, क्षीरनीरनी पेठे मळी जवुं थाय, ते आठमुं

(बंधो के०) बंधः, एटले बंधतत्त्व कहेवाय, तेमां जीव साथे कर्मनुं परस्पर मळी जवुं, ते द्रव्य-बंध, अने ते बंधमां कारणरूप जे आत्मानो रागादि युक्त परिणाम, ते नावबंध कहेवाय. (य के०) च, एटले अने जे आत्मप्रदेशथकी सर्वथा कर्मोनो क्षय थवो, ते नवमुं (मुक्खो के०) मोक्ष, एटले मोक्षतत्त्व कहेवाय; ए नव तत्त्व-रूप वस्तुनु यथास्थित स्वरूप जे प्रमाणे सि-द्धांतोने विषे कह्युं छे, (तह्रा के०) तथा, एटले तेमज सम्यग्दृष्टि जीवोने ए (नव तत्ता के०) नव तत्त्वानि, एटले नव तत्त्वो ते ज्ञ परिज्ञाए करी (नायव्वा के०) ज्ञातव्यानि, एटले जाणवा योग्य (हुंति के०) नवति, एटले छे, अने केटला एक प्रत्याख्यान परिज्ञाए करी छांमवा योग्य छे. मूलमा बे ठेकाणे जे चकार वापर्यो छे, ते चकार वाचक होवाथी उनयान्वयी अव्यय

समजी लेवो ते चकारथी ए नव तत्त्वने विषे सर्व पदार्थोनो समावेश थाय ठे, अर्थात एथी वधारे तत्त्व कोइ नथी, एवी सूचना करी ठे॥१॥

ए नव तत्त्वमांहेला जीव अने अजीव, ए बे तत्त्व मात्र जाणवा योग्य ठे पुण्य, संवर, निर्जरा अने मोक्ष, ए चार तत्त्व ग्रहण करवा योग्य ठे परंतु एमांनु पुण्यतत्व जे ठे, ते व्यवहार नये करी श्रावकोने ग्रहण करवुं योग्य ठे, अने निश्चय नयवडे त्याग करवुं योग्य ठे, तेमज मुनिने उत्सर्गे त्याग करवुं योग्य ठे, अने अपवादे ग्रहण करवुं योग्य ठे, तथा पाप, आश्रव अने बंध, ए त्रण तत्त्व तो सर्वथा सर्वने त्याग करवा योग्यज ठे॥ उक्तं च॥ हेया बंधाऽसव पा, वा जीवाऽजीव हुंति विन्नेया॥ संवर 'निज्जर मुक्खो पुण हुंति उवाए॥१॥

ए नव तत्त्वनां नाम कह्यां, अन्यथा संक्षेपथी तो जीव अने अजीव, ए बे तत्त्वज श्री

गांगेयपमुह नपुंसया सिद्धा ॥
पत्तेयसयंबुद्धा,
भणिया करकंडु कविलाई ५७
तह बुद्धबोहि गुरुबो,-
हिया इग समय इग सिद्धाय ॥
इग समएवि अणेगा,
सिद्धा ते णेगसिद्धाय ॥ ५८ ॥
इति मोक्षतत्त्वम् ॥
इति श्री नवतत्त्वं समाप्तम् ॥

श्रीवीतरागाय नमः

॥ अथ ॥

श्रीबालावबोधसहितं नवतत्त्वप्रकरणं

॥ प्रारभ्यते ॥



श्रीवीरजिन नत्वा, मत्वा तद्दिष्टतत्त्वचक्रं च ॥
नवतत्त्वार्थ विवरणं, कुर्वेऽहं बालबोधाय ॥ १ ॥

प्रथम ग्रंथकार श्रीधर्मसूरि महाराज वस्तुसंकीर्तनरूप मंगलद्वारा नव तत्त्वनां नाम कहे छे.

आर्यावृत्तं.

जीवाऽजीवा पुण्णं, पावाऽसव संवरो
य निज्जरणा ॥ बंधो मुक्खो य तहा,
नव तत्ता हुंति नायव्वा ॥ २ ॥

गाथा १ लीना जूटा शब्दना अर्थ.

जीव–जीवतत्त्व	बंधो–बंधतत्त्व
अजीवा–अजीवतत्त्व	मुक्खो–मोक्षतत्त्व
पुण–पुण्यतत्त्व.	य–अने
पाव–पापतत्त्व	तहा–तेमज
आसव–आश्रवतत्त्व	नव–नव
य–अने	तत्ता–तत्त्वो
संवरो–संवरतत्त्व	हुंति–छे
निज्जरणा–निर्जरातत्त्व.	नायव्वा–जाणवा योग्य

विस्तारार्थ –(जीवाजीवा के०) जीवाजीवो, एटले व्यवहार नये करी जे शुभाशुभ कर्मोनो कर्त्ता, हर्त्ता तथा भोक्ता छे, अने निश्चय नये करी ज्ञान, दर्शन तथा चारित्ररूप निज गुणोनोज कर्त्ता तथा भोक्ता छे, अथवा दुःख सुख ज्ञानोपयोगलक्षणवंत चेतना सहित होय, तथा प्राण धारण करे, ते प्रथम जीवतत्त्व कहेवाय.

---

१ स्तुल्दष्टिए

तेथी विपरीत जे चेतना रहित जम स्वनाव-
वालो होय, ते वीजुं अजीवतत्त्व कहेवाय; जेणे
करी शुन कर्मनां पुफलोनो संचय थवाथी
सुखनो अनुनव थाय ठे, ते त्रीजुं (पुणं के०)
पुण्य, एटले पुण्यतत्त्व कहेवाय; ते पुण्यना वे
नेद ठे एक फव्यपुण्य, अने वीजु नावपुण्य,
तेमां जीवने सुख नोगववामां कारणरूप जे
शुन कर्म, ते फव्यपुण्य अने शुनकर्मनी उत्प-
त्तिमां कारणरूप जे शुन आत्मपरिणाम, ते
नावपुण्य कहेवाय अथवा पुण्यानुवंधी पुण्य
अने पापानुवंधी पुण्य, एम पण वे नेद थाय,
तेमां पुण्य नोगवतां नवुं पुण्य वधाय, ते पुण्या-
नुवंधी पुण्य अने पुण्य नोगवतां नवुं पाप
वंधाय, ते पापानुवंधी पुण्य कहेवाय. तेथी
विपरीत जेणे करी अशुन कर्मनां पुफलोनो
संचय थवाथी ङुःखनो अनुनव थाय ठे, ते

चोथुं (पाव कें०) पाप, एटले पापतत्त्व कहेवाय; तेमां जीवने दुःख जोगववामां कारणरूप अशुभ कर्म, ते द्रव्यपाप अने दुःखने उत्पन्न करवामां कारणरूप आत्माना जे अशुभ परिणाम, ते भावपाप कहेवाय, अथवा पापानुबंधी पाप अने पुण्यानुबंधी पाप, ते पुण्यतत्त्वथी विपरीत पणे जाणवां. जेणे करी नवां कर्म बंधाय छे, अशुभ कर्मोपादानहेतु हिंसादिक ते पांचमु (आसव कें०) आश्रव, एटले आश्रवतत्त्व कहेवाय, तेमां जीवमां कर्मनुं आववुं, ते द्रव्य आश्रव अने कर्म आववाना कारणरूप रागादियुक्त आत्मपरिणाम, ते भावआश्रव, एम बे भेदे सवर जाणवो जेणे करी आवतां कर्म रोकाय, अर्थात् पांच समिति अने त्रण गुप्ति तेणे करी जे आश्रव रोध करवो, ते छठु (संवरो कें०) संवर, ते संवरतत्त्व, तेमां जीव

कर्मोनुं रोकावुं, ते द्रव्य सवर, अने आवतां कर्मोने रोकवामा कारणरूप जे आत्मानो शुद्ध परिणाम, ते जाव संवर, एम बे जेदवाळुं सवर तत्त्व कहेवाय, (य के०) च, एटले अने जेणे करी आत्मप्रदेशमांथी देशथकी कर्म जूदां थाय ठे, अथवा पूर्वे करेलां कर्मोनो जे क्षय थाय ठे, एटले तप प्रमुखे करी कर्मनुं पचाववुं थाय ठे, ते सातमुं (निज्जरणा के०) निर्जरणा, एटले निर्जरातत्त्व कहेवाय, तेमां कर्मोनो देशथी क्षय थाय, ते द्रव्यनिर्जरा अने ते क्षय थवामां कारणरूप जीवनो जे विशुद्ध परिणाम, ते जाव-निर्जरा, अथवा समकीती जीवनी सकाम निर्जरा अने मिथ्यात्वीनी अकाम निर्जरा, एम पण बे जेदे निर्जरा कहेवाय जे नवां कर्मोनुं ग्रहण करीने तेनी साथे जीवनुं बंधन थवुं, क्षीरनीरनी पेठे मळी जवुं थाय, ते आठमुं

(वंधो के०) वंध, एटले वंधतत्त्व कहेवाय, तेमां जीव साथे कर्मनुं परस्पर मळी जवुं, ते द्रव्यवंध, अने ते वंधमां कारणरूप जे आत्मानो रागादि युक्त परिणाम, ते भाववंध कहेवाय. (य के०) च, एटले अने जे आत्मप्रदेशथकी सर्वथा कर्मोनो क्षय थवो, ते नवमुं (मुक्खो के०) मोक्ष, एटले मोक्षतत्त्व कहेवाय, ए नव तत्त्वरूप वस्तुनु यथास्थित स्वरूप जे प्रमाणे सिद्धांतोने विषे कह्युं छे, (तहा के०) तथा, एटले तेमज सम्यग्दृष्टि जीवोने ए (नव तत्ता के०) नव तत्त्वानि, एटले नव तत्त्वो ते ज्ञ परिज्ञाए करी (नायव्वा के०) ज्ञातव्यानि, एटले जाणवा योग्य (हुंति के०) भवति, एटले छे, अने केटला एक प्रत्याख्यान परिज्ञाए करी छांडवा योग्य छे. मूलमां वे ठेकाणे जे यकार वापर्यो छे, ते चकार वाचक होवाथी उभयान्वयी अव्यय

समजी लेवो ते चकारथी ए नव तत्त्वने विषे सर्व पदार्थोनो समावेश थाय छे, अर्थात् एथी वधारे तत्त्व कोइ नथी, एवी सूचना करी छे॥१॥

ए नव तत्त्वमांहेला जीव अने अजीव, ए बे तत्त्व मात्र जाणवा योग्य छे पुण्य, संवर, निर्जरा अने मोक्ष, ए चार तत्त्व ग्रहण करवा योग्य छे परंतु एमांनु पुण्यतत्त्व जे छे, ते व्यवहार नये करी श्रावकोने ग्रहण करवुं योग्य छे, अने निश्चय नयवडे त्याग करवुं योग्य छे, तेमज मुनिने उत्सर्गे त्याग करवुं योग्य छे, अने अपवादे ग्रहण करवुं योग्य छे, तथा पाप, आश्रव अने बंध, ए त्रण तत्त्व तो सर्वथा सर्वने त्याग करवा योग्यज छे॥ उक्तं च॥ हेया बंधाऽसव पा, वा जीवाऽजीव हुंति विन्नेया॥ संवर निज्जर मुक्खो पुण हुंति उवाए॥१॥

ए नव तत्त्वनां नाम कह्यां, अन्यथा संक्षेपथी तो जीव अने अजीव, ए बे तत्त्वज श्री

ठाणांगमांहे कह्यां छे, केमके जीवने पुण्य तथा पापनो संजव छे, तथा कर्मनो बंध पण तादात्मिक छे, अने कर्म जे छे, ते पुजल परिणाम छे, अने पुजल ते अजीव छे, तथा आश्रव जे छे, ते पण मिथ्यादर्शनादिरूप उपाधिए करी जीवनो मलिन स्वजाव छे, ए पण आत्माना प्रदेश अने पुजल विना बीजो कोइ नथी, तथा संवर जे छे, ते पण आश्रव निरोध लक्षण देश सर्व जेदे आत्मानो निवृत्तिरूप स्वजाव परिणाम ज्ञानात्मक छे, तथा निर्जरा जे छे, ते पण जीव अने कर्मने पृथक् उपजाववाने कारणे दधि मथनमंथान न्याये करी कर्मनो परिशाट छे, तथा सर्व शक्तिए करी सकल कर्मडुःखनो क्षय नवनीतगत दग्धजल निर्मल घृत प्रगटनरूप दृष्टांते चिदानदमय आत्मानु प्रगट थवुं, ते मोक्षतत्त्व छे, ते माटे जीव अने अजीव ए बे तत्त्वज कहीए

तथा अन्यत्र मतांतरे सात तत्त्व पण छे, केमके पुण्य अने पाप, ए बे तत्त्वनो अंतर्भाव, बंधतत्त्वमांहेज थाय छे, कारण के जे शुभ प्रकृतिकर्मबंध ते पुण्यतत्त्व अने अशुभ प्रकृतिकर्मबंध ते पापतत्त्व छे, माटे पुण्य पाप रहित सात तत्त्व कहीए तेमज वळी पांच तत्त्व पण कह्यां छे, इत्यादिक घणो विस्तार विशेषावश्यक तथा तत्त्वार्थ अने लोकप्रकाशादि ग्रंथोथकी जाणवो.

हवे प्रत्येक तत्त्वना जुदा जुदा भेद कहे छे.

चउदस चउदस बाया,-लीसा बासी
अ हुंति बायाला ॥ सत्तावन्नं बारस,
चउ नव भेआ कमेणेसिं ॥ ५ ॥

गाथा ५ जीना छूटा शब्दना अर्थ

चउदस–चौद.	बासी–ब्याशी
चउदस–चौद	अ–अने
बायालीसा–बेंतालीश.	हुंति–थाय छे

बायाला-बेंतालीश.	नव-नव
सत्तावन्न-सत्तावन	भेआ-भेदो
बारस-बार.	कमेण-अनुक्रमे करी
चउ-चार	एसि-एओना

विस्तारार्थ.-प्रथम जीवतत्त्वना (चउदस के०) चतुर्दश, एटले चोद, बीजा अजीवतत्त्वना (चउदस के०) चतुर्दश, एटले चोद, त्रीजा पुण्यतत्त्वना (बायालीसा के०) द्विचत्वारिंशत्, एटले बेतालीश, चोथा पापतत्त्वना (बासी के०) द्व्यशीति. एटले ब्याशी, (य के०) च, एटले अने पांचमा आश्रवतत्त्वना (बायाला के०) द्विचत्वारिंशत्, एटले बेतालीश, छठा संवरतत्त्वनो (सत्तावन्न के०) सप्तपंचाशत्, एटले सत्तावन्न, सातमा निर्जरातत्त्वना (बारस के०) द्वादश, एटले बार, आठमा बंधतत्त्वना (चउ के०) चत्वारः, एटले चार अने नवमा मोक्षतत्त्वना (नव के०) नव, एटले नव, एवी रीते (एसि के०) एषां, एटले

ए नवे तत्त्वना (कमेण के०) क्रमेण, एटले क्रमे करी (जेआ के०) जेदा· एटले जेद (हुंति के०) जवंति एटले थाय ठे

उपर कहेलां नव तत्त्वना सर्व जेदनी संख्या बसे ने ठोतेर थाय ठे तेउमां अठ्याशी जेद अ-रूपी ठे, अने एकसो ने अठ्याशी जेद रूपी ठे॥ उक्त च ॥ धम्माऽधम्माऽगासा, तिय तिय अद्धा अजीव दसगा य।। सत्तावन्नं संवर, निज्जर छु-दस मुत्ति नवगा य॥१॥ अठासि अरुवि हवइ, संपइ जणामि चेव रूवीणं ॥ परमाणु देस पए-सा, खंध चउ अजीव रूवीण॥२॥ जीवे दस चउ छु चउ, वासी बायाल हुंति चत्तारी॥ सय अठासी रूवी, छुसय ठस्सत्त नव तत्ते॥३॥ गाथार्थः–धर्मा, अधर्मा, अन आकाशास्तिकाय, ए दरेकना त्रण त्रण तथा अद्धा एटले काळ ए अजीव, तेना १० जेद, तथा संवरना ५७ जेद,

तथा निर्जराना १२ भेद, तथा मोक्षना ए भेद ॥ १ ॥ ए अठ्याशी भेद अरूपी होय छे, हवे निश्चयथी रूपीना भेद कहु छुं परमाणु, देश, प्रदेश अने स्कध ए चार पुद्गलना भेदो रूपी अजीवना ॥ २ ॥ तथा संसारी जीवना १४ भेद, पुण्यना ४२ भेद, पापना ८२ भेद, आश्रवना ४२ भेद, बंधना ४ भेद, ए सर्व मळी १०० भेद रूपीना जाणवा. सर्व मळी नवे तत्त्वना २७६ भेद थाय. ॥ ३ ॥ एमां पहेली गाथा वडे अठ्याशी भेद अरूपी कह्या, अने पाछल बे गाथा वडे एकसो अठ्याशी भेद रूपी कह्या छे ॥ इति ॥ २ ॥

एटले संवर, निर्जरा अने मोक्ष, ए त्रण तत्त्व आत्माना सहज स्वभावपणामाटे अरूपी छे, तथा जीव, पुण्य, पाप, आश्रव अने बंध, ए पांच तत्त्व आठ कर्मना भेदमांहे अंतरभवे छे, ते माटे रूपी जाणवां यद्यपि जीव अरूपी

ठे, तथापि जीव नेदे करी कर्म सहित संसारी पणामाटे अहीं रूपीमां गण्यो ठे, तथा अजीवतत्त्वमांहेला पुजल ऽव्यना चार नेद रूपी अने धर्मास्तिकायादिक चार द्रव्यना दश नेद अरूपी ठे.

ए नवे तत्त्वना २७६ नेदमां जीव अजीव, रूपी अरूपी नेदोनी संख्यानो तथा हेय ज्ञेयादिनो यंत्र नीचे प्रमाणे ठे

नाम	जीव	अजीव	रूपी	अरूपी	हेय	ज्ञेय	उपादेय.
जीवतत्त्व	१४		१४			१४	
अजीवतत्त्व		१४	४	१०		१४	
पुण्यतत्त्व		४२	४२				४२
पापतत्त्व		८२	८२		८२		
आश्रवतत्त्व		४२	४२		४२		
संवरतत्त्व	५७	.		५७			५७
निर्जरातत्त्व	१२			१२			१२
बंधतत्त्व		४	४		४		.
मोक्षतत्त्व	९			९			९
	९२	१८४	१८८	८८	१२८	२८	१२०

हवे प्रथम जीवतत्त्वनो विचार कहेता थका आ गाथामां जीवनी जाणवा योग्य ठ जातिओ देखाडे ठे.

एगविह-डुविह-तिविहा, चउविहा पंच-ठविहा जीवा ॥ चेयण-तस-इ-यरेहिं, वेय-गई-करण-काएहिं ॥ ३ ॥

गाथा ३ जीना ठूटा शब्दना अर्थ.

एगविह–एकविध	चेयण-चेतना
दुविह–द्विविध	तस–त्रस.
तिविहा–त्रिविध	इयरेहिं–इतर (स्थावर)
चउव्विहा–चतुर्विध.	वेय–वेद.
पच–पच (विध)	गई–गति
छव्विहा–षड्विध	करण–इंद्रियो.
जीवा–जीवतत्त्व.	काएहिं–काये करीने

विस्तारार्थः–(एगविह-डुविह तिविहा के०) एकविधद्विविधत्रिविधाः, एटले एकविध, द्विविध, तथा त्रिविध (चउविहा के०) चतु

चतुर्विध, (पंच छव्विहा के०) पंचषड्विधा', एटले पंचविध, तथा षड्विध, एटले छ प्रकारना (जीवा के०) जीवा , एटले जीवो छे. तेमां सर्व जीवने श्रुतज्ञाननो अनंतमो जाग उघाडो रहेवाथी तेउं (चेयण तसइयरेहिं के०) चेतनत्रसेतरैः, ते चेतन एटले चेतना लक्षणवान् छे, माटे एकविध जाणवुं. त्रस एटले जे चलन शक्तिमान् होय, तडकाथी छायाए आवे, अने छायाथी तडकामां आवे, तथा जय देखी त्रास पामे, तेने त्रस कहीए; अने इतर ते बीजा स्थावर एटले जे स्थिरतावान् होय, एम सर्व जीव द्विविध जाणवा. (वेय गइकरणकाएहिं के०) वेदगतिकरणकायैः, एटले वेद त्रण, स्त्रीवेद, पुरुषवेद अने नपुंसकवेद, एम सर्व जीव त्रिविध जाणवा. गति चार, देवता, मनुष्य, नारकी अने तिर्यंच, एम सर्व जीव चतुर्विध जाणवा. करण ते इंद्रिय पांच,

एकेंद्रिय बेंद्रिय, तेंद्रिय, चोरिंद्रिय, अने पचेंद्रिय, एम सर्व जीव पचविध जाणवा अने (काएहिं के०) काय छ–पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वाउकाय, वनस्पतिकाय तथा त्रसकाय, एम सर्व जीव षड्विध जाणवा ॥ इति ॥ ३ ॥

अहीं कोइ आशंका करे के, प्रथम नव तत्त्वोना भेदोनी संख्यामां जीवतत्त्वना जे चौद भेद कह्या छे, तेउमां ए छ जातिनो समावेश थाय छे, के जाति अने भेदनी कांइ जुदी व्यवस्था छे? तेनो उत्तर–यद्यपि ते चौद भेद पण चौद जातिना जीवनी पद्धति जुदी होवाथी पहेलां चौद प्रकारना भेद एवी संज्ञा करी छे, अने आ तो प्रकारनी जाति एवी संज्ञा कहवामां आवी छे॥ इति

जीवतत्त्वना चौद भेद कहे छे

एगिंदिय सुहुमियरा, सन्नियर-पणि-
दिआ य सवितिचउ ॥ अपजत्ता
पजत्ता, कमेण चउदस जियठाण॥४॥

गाथा ४ थीना बूटा शब्दना अर्थ.

एगिंदिय-एकेंद्रिय	ति-तेंद्रिय.
सुहुम-सूक्ष्म	चउ-चउरिंद्रिय
इयरा-इतर (बादर)	अपजत्ता-अपर्याप्ता.
सन्नि-सञ्ज्ञी	पज्जत्ता-पर्याप्ता
इयर-इतर (असञ्ज्ञी).	कमेण-अनुक्रमे.
पणिंदिआ-पंचेंद्रिय.	चउदस-चोद
स-सहित, साथे	जियट्ठाणा-जीवना स्थान.
बि-बेंद्रिय.	

विस्तारार्थः-(एगिंदिय के०) एकेंद्रियाः, एटले एकेंद्रियना बे भेद छे, (सुहुमियरा के०) सूक्ष्मेतरा. एटले एक सूक्ष्मबीजा इतर एटले बादर, पांचे स्थावरने एकेंद्रिय कहे छे. तेमां जे चौद राजलोकमां व्यापी रह्या छे, पर्वत प्रमुखने भेदीने जाय आवे, कोइ वस्तुथी भेदाय नहीं, ने छेदाय पण नहीं, अग्नि जेने बाली शके नहीं, चर्मदृष्टिए देखाय नहीं, मनुष्यादिक कोइ प्राणीना उपयोग

मां आवे नहीं, एवा अदृश्य अने निरतिशयी सूक्ष्मनामकर्मोदयवंतने सूक्ष्मएकेंद्रिय कहे छे. जे नियतस्थानवर्त्ती छे, परंतु कोइ वस्तुने भेदी शके नहीं; पण जेनो भेद तथा छेद बीजी वस्तुथी थइ शके, जेने अग्नि बाली शके, जे चर्मदृष्टिनो विषय थइशके, जे मनुष्यादिक सर्व प्राणीउंना उपयोग-मांआवे एवा दृश्य अने सातिशयी बादरनाम-कर्मोदयवतने बादर एकेंद्रिय कहे छे, अने (सन्नि-यरपणिंदिआ के०) संज्ञितर पचेंद्रिया, एटले पचेंद्रियना बे भेद छे, एक सज्ञी, बीजो इतर एटले असंज्ञी. अहीं श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, घ्राण, जिह्वा तथा नेत्र, ए पांच इंद्रियो जेने होय, तेने पचेंद्रिय कहे छे. तेमा जे मन संज्ञा सहित होय, तेने संज्ञी कहे छे. अने जे मन संज्ञा रहित होय, तेने असंज्ञी कहे छे. एव चार भेद थया तेने (सबितिचउ के०) सद्वित्रिचतु.,

एटले बेंद्रिय, तेंद्रिय, चोरिंद्रिय, ए प्रत्येकनो एक एक ज्ञेद कह्यो ठे. तेणे करी सहित करीए, ते वारे सात ज्ञेद थाय

एवी रीते एकेंद्रियना बे ज्ञेद, बेंद्रियनो एक ज्ञेद, तेंद्रियनो एक ज्ञेद, चोरिंद्रियनो एक ज्ञेद तथा पचेंद्रियना बे ज्ञेद, मलीने सात ज्ञेद थया ए साते ज्ञेदना जीवो बे प्रकारे होय ठे–एक (अपजत्ता के०) अपर्याप्ताः, एटले अपर्याप्ता तथा बीजा (पज्जत्ता के०) पर्याप्ताः एटले पर्याप्ता. तेमां जेने जेटली पर्याप्ति कही ठे, ते पूरी कीधी न होय, अने मरण पामे, तेने अपर्याप्ता कहे ठे तथा जेने जेटली पर्याप्ति कही ठे, ते पूरी कीधी होय, अने पठी मरण पामे, तेने पर्याप्ता कहे ठे.

पूर्वे कहेला सात ज्ञेदना अपर्याप्ता अने सात ज्ञेदना पर्याप्ता, ए बे प्रकार होवाथी (कमेण के०) क्रमेण, एटले उक्त अनुक्रमे करी (चउदस के०)

चतुर्दश, एटले चौद (जियठाणा के०) जीव-स्थानानि, एटले जीवनां स्थान छे ए रीते सर्व संसारी जीवो विषे चौद भेद जाणी लेवा यद्यपि शास्त्रांतरमां वली जीवना बीजा पण घणा भेद कह्या छे, परंतु सर्व औपाधिक छे स्वाभाविक भेद तो एकज चेतना लक्षण छे. मूलमां (य के०) चयार छे, ते उत्तयान्वयी अव्यय छे

वली प्रकारातरे सर्व संसारी जीवना बत्रीश भेद पण थाय छे, ते कहे छे ॥ गाथा ॥ पण थावर सुहुमियरा, परितवण सन्नि असन्नि विगलतिग ॥ इय सोलस पज्जत्ता, अपजत्ता, जीव बत्तीसं ॥१॥ (पण थावर सुहुम के०) पांच सूक्ष्म स्थावर, तथा (इयरा के०) पांच इतर एटले बादर स्थावर, ए दश भेद, (परितवण के०) प्रत्येक वनस्पतिनो अग्यारमो भेद, (सन्नि के०) सज्ञी पचेंद्रियनो बारमो भेद, (असन्नि के०) असंज्ञी

पंचेंडियनो तेरमो नेद, (विगलतिगं के०) विकत्रिक एटले बेंद्रिय, तेंद्रिय तथा चौरडियना त्रण नेद मलीने सोल नेद थाय ठे, (इय सोलस के०) ए सोल नेदोना जीव बे प्रकारना ठे, एक (पज्जत्ता के०) पर्याप्ता, बीजा (अपज्जत्ता के०) अपर्याप्ता मलीने (जीव के०) जीवना (बत्तीसं के०) बत्रीश नेद थाय ठे

शास्त्रांतरमां सर्व संसारी जीवोना पांचसें ने त्रेसठ नेद पण कह्या ठे. तेमां मनुष्योना त्रणसें ने त्रण नेद थाय ठे, ते आवी रीते–पांच महाविदेह क्षेत्र, पांच नरत क्षेत्र, तथा पांच ऐरवत क्षेत्र, मलीने पंदर कर्मनूमि क्षेत्र ठे. तेमज त्रीश अकर्मनूमि युगलियानां क्षेत्र ठे, अने ठप्पन अंतर्द्वीप ठे. ए सर्व मलीने पर्याप्ताना एकसो ने एक नेद, अपर्याप्ताना एकसो ने एक नेद, तथा संमूर्छिम अपर्याप्ताना एकसो ने एक नेद, मलीने त्रणसो ने त्रण नेद थाय

देवताउंना एकसो ने अट्ठाणुं भेद थाय छे, ते आवी रीते–दश भुवनपति, सोल व्यंतर, पंदर परमाधामी, दश तिर्यग्जृंभक, पांच चर ज्योतिषी, पांच स्थिर ज्योतिषी, नव लोकांतिक त्रण किल्विषिया, बार देवलोकना नव ग्रैवेयकना, तथा पांच अणुत्तर विमानना, मलीने नवाणुं पर्याप्ता तथा नवाणु अपर्याप्ता गणतां एकसो ने अट्ठाणु भेद थाय

नारकीना जे सात भेद कह्या छे, तेना पर्याप्ता तथा अपर्याप्ता ए बे प्रकार करतां चौद भेद थाय.

तिर्यंचना अम्तालीश भेद छे, ते आवी रीते– पांच सूक्ष्म स्थावर, पांच बादर स्थावर, त्रण विकलेंद्रिय अने एक प्रत्येक वनस्पति मलीने चौद पर्याप्ताना तथा चौद अपर्याप्ताना गणतां अव्यावीश भेद थाय, अने जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपरिसर्प तथा भुजपरिसर्प ए पांच संमूर्छिम तथा गर्भज मलीने दश थाय, तेना

पर्याप्ता तथा अपर्याप्ता ए बे प्रकार करतां वीश भेद थाय. तथा पूर्वना अठ्यावीश अने ए वीश मलीने अडतालीश भेद थया.

एवी रीते मनुष्योना त्रणसो ने त्रण भेद, देवताना एकसो ने अठाणु भेद, नारकीना चौद भेद, अने तिर्यंचना अडतालीश भेद ए सर्व मली पांचसो ने त्रेसठ भेद थया ॥ इति ॥ ४ ॥

हवे जीवनुं लक्षण कहे छे.

अनुष्टुपवृत्त ॥ नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा ॥ वीरियं उवओगो अ, एअं जीवस्स लक्खणं ॥ ५ ॥

गाथा ५ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

नाण–ज्ञान
च–अने
दंसण–दर्शन.
चेव–निश्चे
चरित्त–चारित्र
च–अने.
तवो–तप.
तहा–तेमज
वीरिय–वीर्य
उवओगो–उपयोग.
अ–अने,
एअ–ए, आ.
जीवस्स–जीवनु.
लक्खण–लक्षण

विस्तारार्थ.-(नाण के०) ज्ञान, ते मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन.पर्यवज्ञान तथा केवलज्ञान, ए पांच ज्ञान सम्यक्त्व आश्रयीने कह्यां छे, एनी साथे मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, तथा विभंगज्ञान, ए त्रण अज्ञान मिथ्यात्वाश्रयी छे, ते लेतां आठनी संख्या थाय छे. एठमांनुं गमे ते एक अथवा अधिक ज्ञान (एटले जीवनो विशेष उपयोग अथवा साकार उपयोग जेमां होय, (च के०) पुन. वली (दंसण के०) दर्शन ते चक्षु, अचक्षु, अवधि तथा केवल, ए चार प्रकारनां दर्शनमांनुं गमे ते एक अथवा अधिक दर्शन (एटले जीवनो सामान्य उपयोग अथवा निराकार उपयोग) जेमां होय, (चेव के०) चेव, एटले निश्चे (चरित्त के०) चारित्र, ते सामायिक छेदोपस्थानीय, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसपराय, यथाख्यात, देशविरति तथा अविरति ए

प्रकारनां हिंसादिक अशुभ परिणामथी निवृत्ति तथा व्यवहारथी क्रियानिरोधरुप चारित्रमांनुं गमे ते एक अथवा अधिक चारित्र (एटले ज्ञानादि गुणमां रमणता करवी ते,) जेमां होय, (च के०) तथा (तवो के०) तपः, एटले तप बे प्रकारनु कह्यु छे, तेमां एक द्रव्यथी, एना बार भेद छे. तेना नाम निर्जरातत्त्वमां कहेवाशे. बीजुं इच्छानिरोधरुप भावथी एमांनुं गमे ते एक अथवा अधिक तप जेमां होय, (तहा के०) तथा, एटले तेमज (वीरिय के०) वीर्य, ते करण तथा लब्धिरुप अथवा बल पराक्रमरुप ए बे प्रकारनां वीर्यमांनु गमे ते एक अथवा वधारे वीर्य (एटले आत्मानी शक्ति) जेमां होय, तथा (उवओगो के०) उपयोगः, ते पांच ज्ञान, त्रण अज्ञान तथा चार दर्शन, ए बार प्रकारना साकार तथा निराकाररुप उपयोगमांनो गमे ते

एक अथवा वधारे उपयोग (एटले जेना वडे ज्ञान अने दर्शननी प्रवृत्ति थाय ते) जेमां होय, तेने संसारी अथवा सिद्ध जीव कहीए. ए गुण जीव विना वीजा कोइमां होय नहीं. (एअ के०) एतद् ए (जीवस्स के०) जीवस्य, एटले जीवनु (लरकण के०) लक्षण, चिह्न जाणवुं आ गाथामां वीजा वे चकार छे, ते पादपूरणार्थ तथा उभयान्वयी अव्यय छे

हवे पर्याप्ता जीवोनु वर्णन करतां प्रथम छ पर्याप्तिनु स्वरुप दर्शावे छे—आर्यावृत्त ॥

आहारसरीरिंदिय,-पज्जत्ती आण-
पाणभासमणे ॥ चउ पंच पंच छप्पि
अ, इगविगलासन्निसन्नीणं ॥ ६ ॥

गाथा ६ ठीना छूटा शब्दना अर्थ.

आहार–आहार	पच–पाच.
सरीर–शरीर.	छप्पि–छए पण.
इंदिय–इंद्रिय	य–अने
पज्जत्ती–पर्याप्ति	इग–एकेंद्रियने.
आणपाण–श्वासोच्छ्वास	विगल–विकलेंद्रियने.
भास–भाषा.	असन्नि–असज्ञीने
मणे–मन.	सन्नीण–सज्ञीने.
चउ–चार.	

विस्तारार्थः–पुद्गलना उपचयथी थयेजे पुद्गलपरिणमनहेतु शक्ति विशेष, तेने पर्याप्ति कहे छे. एना वे भेद छे–एक लब्धिपर्याप्ति अने बीजी करणपर्याप्ति. जे कर्मना उदयथी आरंभेली स्वयोग्य पर्याप्ति सर्व पूरी करी नथी, पण करशे, तेने लब्धिपर्याप्ति कहे छे, अने जेणे स्वयोग्य पर्याप्ति सर्व पूरी करी लीधी, तेने करणपर्याप्ति कहे छे

अपर्याप्ति पण बे प्रकारनी छे–एक लब्धिअपर्याप्ति, बीजी करणअपर्याप्ति आरंभेली स्वयोग्य पर्याप्ति पूरी करे नहीं, तेने लब्धिअपर्याप्ति कहे छे, अने जे स्वयोग्य पर्याप्ति सर्व पूरी करशे, पण हजु कीधी नथी, तेने करणअपर्याप्ति कहे छे.

वैक्रिय शरीरने एक शरीरपर्याप्ति अंत मुहूर्त्तनी होय छे, ने बाकीनी पांच एक समयनी जाणवी, अने औदारिक शरीरने आहारपर्याप्ति एक समयनी होय छे, बाकीनी पांच अंतर्मुहूर्त्तनी जाणवी उत्पत्ति समयने विषे ए सर्व पर्याप्ति सर्व जीवो यथायोग्य रीते साथे आरंभे छे, पण पूरी अनुक्रमे करे छे, एटलुं विशेष समजवुं

ते पर्याप्ति छ प्रकारे छे. (आहारसरीरिंदि-पज्जत्ती के०) आहारशरीरेंद्रियपर्याप्तय., एटले हरेक जीवने भवांतरनी उत्पत्ति समये जे शक्ति

वडे आहार लइने तेने रसपणे परिणमाववानी जे शक्तिविशेष, ते आहार एटले आहारपर्याप्ति कहेवाय छे. पछी ते रसरूप परिणामने रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा तथा वीर्य, ए सात धातुपणे परिणमावीने शरीर बांधवानी जे शक्ति विशेष, ते शरीर एटले शरीरपर्याप्ति कहेवाय छे. पछी ते सात धातुपणे परिणमाव्यो जे रस, ते जेने जेटलां द्रव्य इंद्रिय जोइए, तेने तेटलां इंद्रियपणे परिणमाववानी जे शक्तिविशेष, ते इंद्रिय एटले इंद्रियपर्याप्ति कहेवाय छे पर्याप्ति ए शब्द सर्वनी साथे जोमवो, केमके कहेली त्रण पर्याप्ति पूरी कर्या विना कोइ जीव मरण पामे नहीं, माटे पर्याप्ति शब्द वचमां कह्यो छे. ए त्रण पर्याप्ति बांधीने पछी (आणपाणसासमणे के०) आनप्राणसासामनांसि, एटले श्वासोश्वास योग्य वर्गणानां दलिक लइ श्वासोश्वासपणे

परिणमावीने अवलंबी मूकवानी जे शक्तिविशेष, ते आनप्राण एटले श्वसोच्छ्वास पर्याप्ति कहेवाय छे. जाषा योग्य पुजल लइ जाषापणे परिणमावीने अवलंबी मूकवानी जे शक्तिविशेष, ते जाषा, एटले जाषापर्याप्ति कहेवाय छे, अने मनो-वर्गणायोग्य पुजल लइ मनपणे परिणमावीने अवलंबी मूकवानी जे शक्तिविशेष, ते मन, एटले मन-पर्याप्ति कहेवाय छे, एवी रीते ए ठ प्रकारे पर्याप्ति कही छे

(इगविगलासन्निसन्नीण के०) एकविकला संज्ञिसंज्ञिनां, एटले एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय, असन्नी पंचेंद्रिय तथा सन्नी पंचेंद्रिय, ए चारनी अनुक्रमे (चउ के०) चतस्र., एटले चार, (पंच के०) पंच, एटले पांच य के०) च, वली (छप्प के०) षडपि, एटले छए पण पर्याप्तिओ होय छे· ते आवी रीते समजवुं–

आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति इंद्रियपर्याप्ति तथा श्वसोच्छ्वासपर्याप्ति, ए चार पर्याप्ति एकेंद्रियने होय. कहेली चार पर्याप्तिउनी साथे पांचमी नाषापर्याप्ति जोमीने पांच पर्याप्ति विकलेंद्रिय, एटले बेंद्रिय, तेंद्रिय तथा चोरिंद्रियने प्रत्येके होय एज पांच पर्याप्तिश्रो असंज्ञी पचेंद्रियने होय, अने उए पर्याप्तिश्रो संज्ञी पंचेंद्रियने होय ॥ इति ॥ ६ ॥

अहींआं जे पंचेंद्रियनी अपेक्षाए न्यून इंद्रिय होय, तेने विकलेंद्रिय कहीए. आ ठेकाणे कोइ एवी आशंका करे, के एकेंद्रिय पण पंचेंद्रियनी अपेक्षाए न्यून ठे, तो तेने केम विकलेंद्रिय कहेता नथी? तेने उत्तर कहे ठे के, त्रस अने स्थावर जीव ठे, तेमां स्थावरव्यापक सकल लोक ठे, अने विकलेंद्रियनो सद्भाव तिर्यग्लोके ज ठे, ते माटे त्रसमांहे विकलेंद्रियपणुं कहेवाय

छे. ए हेतु माटे एकेंद्रियने विकलेंद्रिय न कह्या.

तथा वली कोइ पूछे क, प्राण अने पर्याप्ति-मां शो फेर छे? तेने उत्तर कहे छे, के जे प्राण छे, ते शरीर संबंधी जवोपग्राही आत्मसंबंध छे, अने पर्याप्ति ते परिणमन निवर्तन लक्षण छे, जेम दुग्ध मध्ये श्वेतता अने स्नेहता वेछ छे, तेम जाणवुं

वली कोइ पूछे जे, तमे प्रथम आहारपर्याप्ति कहो छो, अने पछी शरीरपर्याप्ति कहो छो, तो शरीर विना आहार केम लेवाय? तेने उत्तर कहे छे जे–कार्मण अने तैजस ए बे शरीर तथा आयु लक्षण एक प्राण, ए परजव जतां जीवने सहचारी छे, ते माटे ते शरीरने बले आहारपर्याप्ति प्रथम करीने पछी औदारिक अथवा वैक्रिय जवधारणीय शरीर करीने शरीरपर्याप्ति करे.

प्रसंगे प्राप्त थयेलो पाच इंद्रियोना त्रेवीश विषय कहे छे-हलवो, भारी, सुंवालो, खरखरो, लूखो, चोपड्यो, टाढो, उनो ए आठ विषय स्पर्शनेंद्रियज जाणे, पण बीजी चार इंद्रियो जाणे नहीं तीखो, कडवो, कषायेलो, खाटो, मीठो ए पांच विषय रसनेंद्रियज जाणे, पण बीजी चार इंद्रियो न जाणे सुरभिगंध, दुरभिगंध, ए बे विषय घ्राणेंद्रियज जाणे, पण बीजी चार इंद्रियो न जाणे कालो, नीलो, रातो, पीलो, धोलो ए पांच विषय चक्षुरिंद्रियज जाणे, पण बीजी चार इंद्रियो न जाणे जीवशब्द, अजीवशब्द, मिश्र शब्द ए त्रण विषय श्रोत्रेंद्रियज जाणे, पण बीजी चार इंद्रियो जाणे नहीं. ए पांचे इंद्रियोना विषय एकठा करन त्रेवीश थाय तेनु जाणपणुं मन सहित जीव, ते जे इंद्रियमां भले, ते इंद्रिय पोताना विषयने जाणे, पण जीवना व्यापार विना इंद्रियो सर्व जडरूप छे, माटे विषयने न जाणे

हवे जेना सयोगवियोगमां जीवनु जीवन मरण कही शकाय, अथवा जेनावडे जीव ओळखाय, एवा बाह्य लक्षणरूप जे प्राण धारण करे, तेने जीव कहीए तेमां द्रव्यप्राण दश छे तेमां कया जीवने केटला प्राण होय? ते बतावबापूर्वक दश प्राणनु वर्णन करे छे.

पणिंदिअत्तिबलूसा,-साउ दस पाण
चउ छ सग अठ॥ इगदुतिचउरिंदीणं
असन्निसन्नीण नव दस य ॥ ७ ॥

गाथा ७ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

पणिंदिअ-पांच इंद्रिओ	इग-एकेंद्रियने
त्तिबल-त्रण बळ.	दु-बेंद्रियने
उसास-श्वासोश्वास	ति-तेंद्रियने
आउ-आउखु, आयुष्य	चउरिंदीण-चतुरिंद्रियन
दस-दश	असन्नि-असञ्ज्ञी पचेंद्रियने.
पाण-प्राण	सन्नीण-सञ्ज्ञी पचेंद्रियने
चउ-चार.	नव-नव
छ-छ.	दस-दश
सग-सात	य-अने
अठ-आठ	

विस्तारार्थ.-(पणिंदियत्तिबलूसासआउ के०) पंचेंद्रियत्रिबलोच्छ्वासायुंषि, एटले स्पर्शनेंद्रिय, रसनेंद्रिय, घ्राणेंद्रिय, चक्षुरिंद्रिय तथा श्रोत्रेंद्रिय ए पांच इंद्रिय, मनोबल, वचनबल तथा कायबल, ए त्रण बल, श्वासोच्छ्वास, अने आयुष्य, एटले जे जीवने जवनी साथे नियत बंधक होय, ते ए (दस पाण के०) दश प्राणाः, एटले दश प्राण जाणवा.

कया कया जीवने केटला केटला प्राण होय? ते कहे छे-पृथिव्यादि पांच स्थावररूप (इगदुतिचउरिंदिण के०) एकद्वित्रिचतुरिंद्रियाणां, एटले एकेंद्रि, बेइंद्रि, तेइंद्रि तथा चोइंद्रियना अनुक्रमे (चउ छ सग अठ के०) चत्वारः षट् सप्त अष्ट, एटले चार, छ सात अने आठ प्राण होय, ते आ रीते एकेंद्रियने एक स्पर्शनेंद्रिय,

वीजुं श्वासोश्वास, त्रीजुं कायबल, चोथु आउखुं, ए चार प्राण होय. दक्षिणावर्त्त शंख प्रमुख वेंद्रियने उपर कहेला चार प्राणनी साथे रसनेंद्रिय तथा वचनबल जोड्याथी ठ प्राण होय. कानखजूरा, मांकम, जू, कीमी तथा मकोमा प्रमुख तेंद्रियने उपर कहेला ठ प्राणनी साथे घ्राणेंद्रिय जोड्याथी सात प्राण होय वींठी तथा भ्रमरी आदिक चतुरिंद्रियने उपर कहेला सात प्राणनी साथे चक्षुरिंद्रिय जोड्याथी आठ प्राण होय. तथा (असन्निसन्नीण के०) असंज्ञिसंज्ञिनां, एटले असंज्ञि समूर्छिम पचेंद्रिय अने संज्ञी पचेंद्रियना अनुक्रमे (नव दस य के०) नव अने दस प्राण होय. ते विस्तारथी कहे ठे मातापिताना संयोग विना एटले गर्भ विना मनुष्यनां मल मूत्रादिक चौद स्थानके उपजनारा जे संमूर्छिम मनुष्य, तथा कादव प्रमुखने विषे उपजनारा

जे समूर्छिम तिर्यंच, ए असंज्ञी संमूर्छिम पचेंद्रियने उपर कहेला आठ प्राणनी साथे श्रोत्रेंद्रिय जोड्याथी (नव के०) नव प्राण होय. एमां एटलु विशेष समजवानुं छे के, संमूर्छिम बे प्रकारना होय छे एक संमूर्छिम मनुष्य अने बीजा संमूर्छिम तिर्यंच, तेउमां संमूर्छिं तिर्यंचने तो कहेला नव प्राण होय छे, एवो नियम छे; पण संमूर्छिम मनुष्यने वचनबल नहीं होवाने लीधे आठज प्राण होय छे, तेमां पण जो श्वासोश्वास पर्याप्ति बांधतो छतो मरण पामे, तो सातज प्राण रहे छे, अने जे मातापिताना संयोगे करी गर्भने विषे उत्पन्न थाय छे, एवा मनुष्य तथा तिर्यंच, जे गर्भज जातिना होय, तथा नारकी कुंभीमां उपजे छे, अने देवता उत्पादशय्यामां उपजे छे, पण मातापिताना संयोगे गर्भमां उपजता नथी, तोपण देवता अने नारकी संज्ञी

पंचेंद्रिय कहीए, ए सङ्गी पचेड्रियने उपर कहेला नव प्राणनी साथे मनोवल जोड्याथी दश प्राण होय ठे ए सर्वे द्रव्यप्राण जाणवा, अने जाव-प्राण तो आत्माना ज्ञानादि गुण ठे ते जाणवा॥१॥

उपर जीवना वाह्य लक्षणरूप दश प्राणनां नाम कह्या ठे. ते पचेंद्रियादि पदोनो अर्थ कहेवाय ठे. प्रथम आत्मा जेना वडे पदार्थोने जाणी शके, ते इंद्रिय कहेवाय ठे, ते इद्रियो पांच ठे तेमां स्पर्शेंद्रियनु स्थान सर्व शरीर (त्वचा) ठे, रसनेंद्रियनुं स्थान जिह्वा ठे, घ्राणेंद्रियनुं स्थान नासिका ठे, चक्षुरिंद्रियनुं स्थान नेत्र ठे, तथा श्रोत्रेंद्रियनुं स्थान कान ठे ए रीते पांच इद्रियो-रूप पांच प्राण कह्या, जेना वडे सङ्गी जीव मनन चिंतन करी शके, ते मन कहेवाय ठे. ते मन मनोवर्गणारूप पुद्गल परमाणुना समुदायन

बने छे, एवा मननो जे व्यापार ते छठ्ठु मनोबल-रूप प्राण जाणवो भाषापर्याप्ति नामकर्मना उदयथी भाषायोग्य पुद्गलवर्गणा काययोगे ग्रहण करी भाषापणे परिणमावी अवलंबीने वचन-योगवडे छोडवानी जे शक्ति ते सातमुं वचनबल रूप प्राण जाणवो, शरीरनो जे व्यापार (शक्ति) ते कायबलरूप आठमो प्राण जाणवो उच्छ्वास-नामकर्मवडे अने उच्छ्वासपर्याप्तिवडे श्वासोच्छ्वास योग्य पुद्गलवर्गणा ग्रहण करी श्वासोच्छ्वासपणे परिणमावी अवलंबीने छोडवानी जे शक्ति, ते श्वासोच्छ्वासरूप नवमो प्राण जाणवो. जेनावडे जीव कोइपण भवमां अमुक काळसुधी टकी शके, अथवा परभवमां अवश्य जइ शके, विव-क्षित भवमां जेटलो काळ रहे ते आयु कहे-

वाय, ते आयु पण पुद्गलनो समूह छे, के जे पुद्गल समूहनी सहाय वडे जीव जीवे छे. ए रीते दश प्राणना नामार्थ कह्या.

॥ इति श्री जीवतत्त्ववर्णनं समाप्तम् ॥



हवे अजीवतत्त्वनु वर्णन करतां प्रथम अजीवतत्त्वना चौद भेद कहे छे–

धम्माऽधम्माऽगासा, तियतियभेया तहेव अद्धा य ॥ खंधा देस पएसा, परमाणु अजीव चउदसहा ॥ ८ ॥

गाथा ८ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

धम्मा–धर्मास्तिकाय	य–अने
अधम्मा–अधर्मास्तिकाय	खधा–खंध.
आगासा–आकाशास्तिकाय.	देस–देश.
तियतिय त्रण त्रण.	पएसा–प्रदेश
भेया–भेदो	परमाणु–परमाणु
तहेव–तेमज.	अजीव–अजीवतत्त्व.
अद्धा–काल	चउदसहा–चौद.

विस्तारार्थ.–(धम्माधम्मागासा के०) धर्माधर्माकाश, एटले धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय, ए त्रण द्रव्य खंध, देश तथा प्रदेश एवा (तियतियभेया के०) त्रित्रिभेदा. त्रण

त्रण भेदवाळा छे, तेथी प्रत्येक अस्तिकायने त्रणे गुणतां नवनी संख्या थाय छे. प्रदेशना समूहने अस्तिकाय कहे छे एवो अर्थ कहेलां त्रणे द्रव्योने लागु करवो. ए त्रणे द्रव्योनो चौद रज्ज्वात्मक खंध कहेवाय छे तेथी कांइक उंछो होय, अथवा सकल प्रदेशानुगत सामान्य परिणामनी परे अवयवधर्मास्तिकायना बुद्धिपरिकल्पिताद्यादि प्रदेशात्मक जे विभाग, तेने देश कहीए, अने जे प्रकृष्ट देश अतिनिर्विभाज्य अविभाज्य होय, ते प्रदेश कहेवाय छे (तदेव के०) तथैव, एटले तेमज (अद्धा के०) अद्धा, एटले काल द्रव्यनो वर्तमान समयरूप एकज प्रदेश होवाथी ते अस्तिकाय कहेवाय नहीं, माटे एकज भेद जाणवो एम दश भेद थया (य के०) चकार उभयान्वयी अव्यय छे एथी पुद्गलास्तिकाय द्रव्य लेवुं, तेना अखंड द्रव्यरूप आखो पदार्थ अथवा अनंतादि परमाणुनो मलेलो

समूह (खंधा के०) स्कंधाः, एटले खंध कहेवाय छे. खंधनो केटलोएक भाग जेनो खंधनी साथे संबंध होय, ते (देस के०) देशाः, एटले देश कहेवाय छे. जेनी खंधनी साथे निर्विभाज्य कल्पना करी, छतां खंधनी साथे अभिन्न संबध होय, ते (पएसा के०) प्रदेशा., एटले प्रदेश कहेवाय छे, अने तेज प्रदेश जो खंधथी भिन्न थाय, एवो निर्विभाज्य भाग एटले जेना केवलीनी बुद्धिए एक भागना बे भाग थइ शके नहीं, ते (परमाणु के०) परमाणव., एटले परमाणु कहेवाय छे. ए रीते ए पुद्गलास्तिकाय द्रव्यना चार भेद, ते पूर्वोक्त दश भेदो साथे मेलवतां (अजीव के०) अजीवः, एटले अजीवतत्त्व (चउदसहा के०) चतुर्दशधा, एटले चौद भेदे थाय ॥ ७ ॥

अजीवतत्त्वना पांच मूल भेद तथा तेनां लक्षण (स्वभाव) बे गाथाए करी कहे छे—

धम्माऽधम्मा पुग्गल, नह कालो
पंच हुंति, अजीवा ॥ चलणसहावो
धम्मो, थिरसंठाणो अहम्मो अ ॥९॥
अवगाहो आगासं, पुग्गलजीवाण
पुग्गला चउहा ॥ खंधा देस पएसा
परमाणू चेव नायव्वा ॥ १० ॥

गाथा ९ मीना छूटा शब्दना अर्थ

धम्मा–धर्मास्तिकाय
अधम्मा–अधर्मास्तिकाय
पुग्गल–पुद्गलास्तिकाय
नह–आकाशास्तिकाय
कालो–काल
पच–पांच.
हुति–छे.
अजीवा–अजीवद्रव्य.
चलणसहावो–चलन स्वभाववालो.
धम्मो–धर्मास्तिकाय.
थिरसठाणो–स्थिर सस्थान (स्वभाव) वालो
अहम्मो–अधर्मास्तिकाय
अ–अने.

गाथा १० मीना छूटा शब्दना अर्थ

अवगाहो–अवकाश (स्वभाव-गुण).	खधा–खध
आगास–आकाशास्तिकाय	देस–देश
पुग्गल–पुद्गलने	पएसा–प्रदेश.
जीवाण–जीवने	परमाणु–परमाणु
पुग्गला–पुद्गलद्रव्य	चेव–निश्चे
चउहा–चार प्रकारे.	नायव्वा–जाणवा योग्य

विस्तारार्थ –(धम्माधम्मा के०) धर्माधर्मो, एटले धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, (पुग्गल के०) पुद्गल· एटले पुद्गलास्तिकाय, (नह के०) नभ., एटले आकाशास्तिकाय अने (कालो के०) कालः एटले काल, ए (पच के०) पच, एटले पांच (अजीवा के०) अजीवाः, एटले अजीवद्रव्य (हुंति के०) भवति, एटले छे ए पांचनी साथे जीवद्रव्य भेळयाथी षड्द्रव्य कहेवाय छे.

जेम मत्स्यना संचारनुं अपेक्षा कारण पाणी छे, तेम जीवने तथा पुद्गलने गतिपणे परिणमतां जे अपेक्षा कारण होय, तेने धर्मास्तिकाय कहे छे जेम जल विना मत्स्यनो संचार थइ शके नहीं तेम धर्मास्तिकाय विना जीव अने पुद्गल चाली शके नहीं. अर्थात् (चलणसहावो धम्मो के०) चलनस्वभावो धर्मः, एटले चलनस्वभाव-गुण, ते धर्मास्तिकाय जाणवो

जेम पंथीने विसामो लेवाने विषे वृक्षादिकनी छाया अपेक्षा कारण छे, तेम जीवत था पुद्गलने स्थितिपणे परिणमतां जे अपेक्षा कारण होय, अर्थात जे (थिरसंठाणो अहम्मो के०) स्थिर-संस्थानोऽधर्मः, एटले स्थिर राखवानो जे सहज गुण ते अधर्मास्तिकाय कहेवाय छे ए बन्ने अरूपी द्रव्य चौद राजलोकव्यापी छे. वर्ण, गंध, शब्द, रूप, स्पर्श तथा रस रहित असंख्यात

प्रदेशी छे, जे उदासीन वृत्ति होय, तेने अपेक्षा कारण कहे छे. (अ के०) चकार पादपूरणार्थ उभयान्वयी अव्यय छे ॥ ए ॥

जे लोकालोकव्यापी शब्द, रूप, रस, गंध तथा स्पर्श रहित अरूपी अनंत प्रदेशी अने साकर ने दूधनी पेठे जेनो (अवगाहो के०) अवकाश., एटले अवकाश स्वभावगुण ते (आगासं के०) आकाश, एटले आकाशास्तिकाय कहेवाय. अर्थात् एक प्रदेशथी बीजा प्रदेशमां जतां जे अवकाशने आपे, तेने आकाशद्रव्य कहीए. तेना बे भेद छे, एक लोकाकाश, बीजो अलोकाकाश, ए विशेषता छे अहीं कोइ आशंका करे, के अवकाश कोने आपे छे? तेनो उत्तर ए छे के (पुग्गलजीवाण के०) पुद्गलजीवानां, एटले पुद्गल (पूरणगलणधर्मयुक्त–परमाणु) तथा

जीवने अवकाश आपे छे. ते (पुग्गला के०) पुद्गला. एटले पुद्गलद्रव्य (चउद्दा के०) चतुर्धा,- एटले चार प्रकारे छे पूर्वोक्त स्वरूप पुद्गलद्रव्यना (खंधा के०) स्कंधा, एटले खंध, (एटले परमाणुओनो परस्पर मेलाप), (देस के०) देशा., एटले देश, (पएसा के०) प्रदेशा, एटले प्रदेश तथा परमाणू के०) परमाणव., एटले परमाणु, ए ज्ञेद (चेव के०) चैव, एटले निश्चे करीने (नायव्वा के०) ज्ञातव्याः, एटले बुद्धिमानोने जाणवा योग्य छे ॥ १० ॥

हवे पुद्गलद्रव्यनुं औपाधिक लक्षण (स्वज्ञाव-धर्म गुण) कहे छे—

अनुष्टुब्वृत्तं ॥ सद्दंधयारउज्जोअ,-
पज्ञाछायातवेहि आ ॥ वणगंधरसा
फासा पुग्गलाणं तु लक्कणं ॥ ११ ॥

गाथा ११ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

सद्द–शब्द	वण–वर्ण.
अधयार–अंधकार.	गंध–गंध.
उज्जोअ–उद्योत, प्रकाश.	रसा–रस.
पभा–प्रभा, ज्योति.	फासा–स्पर्श
छाया–छाया, कांति	पुग्गलाण–पुद्गलोनुं
तवेहि–आतप	तु–निश्चयपणे
आ–त्रा, अथवा.	लक्खण–लक्षण

विस्तारार्थ–सद्दंधयारउज्जोअप्रभाछायातवेहि के०) शब्दांधकारोद्योतप्रभाछायातपैः, एटले सचित्त, अचित्त अने मिश्र, ए त्रण प्रकारमांना गमे ते प्रकारनो शब्द तथा अंधकार, तथा रत्न प्रमुखनो, प्रकाश, तथा चंद्रमा प्रमुखनी ज्योति तथा छाया (जलदर्पणादिमां जासतुं प्रतिबिंब अने सूर्य प्रमुखनो आतप, आ वस्तुओ वडे पुद्गल ओळखाय छे (आ के०) वा, एटले बीजा नीचला पदार्थ पण जाणवा. (वणगंधरसा के०) वर्णगंधरसाः एटले कृष्ण पीतादि वर्ण, गंध,

रस, (फासा के०) स्पर्श, एवा गुणवालो होय, अने जे चौद राजलोकमां व्यापक; संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी, तथा अनंत प्रदेशीनो पूर्ण गलन स्वजाववान् एवो अखंड पुद्गलास्तिकायरूप खंध, ते खधनो एक जाग अथवा कांइ पण न्यून जागरूप देश, तथा जे केवलीनी बुद्धिए पण एक जागना बे जाग थइ शके नहीं, एवो अतिसूक्ष्म खधनो अभिन्न जाग निर्विजाज्यरूप ते प्रदेश, तेनीज ज्यारे खधथी भिन्न कल्पना थाय, त्यारे ते परमाणु कहेवाय छे ए (पुग्गलाण के०) पुजलानां, एटले पुजलोनुं (तु के०) निश्चयपणे (लस्कण के०) लक्षण, एटले लक्षण छे ॥ ११ ॥

हवे कालद्रव्यना जेद दर्शावे छे ॥ आर्यावृत्तं ॥

एगा कोमि सतसठि, लस्का सत्तहुत्तरी सहस्सा य। दो य सया सोलहिया आवलिया इगमुहुत्तम्मि ॥ १२ ॥

गाथा १२ मीना तूटा शब्दना अर्थ.

एगाकोडि–एक क्रोड.	दो य सया–वसें
सतसट्ठि–सडसठ	सोळहिया–सोळ अधिक
लक्खा–लाख	आवलिया–आवलिका.
सत्तहुत्तरी–सत्योतेर	इग–एक.
सहस्सा–हजार	मुहुत्तम्मि–मुहूर्त्तमां.
य–अने	

विस्तारार्थ.–(एगा कोडि के०) एका कोटि., एटले एक क्रोड, (सतसट्ठि लक्खा के०) सप्तषष्टि लक्षाणि, एटले सडसठ लाख, (सत्तहुत्तरि सहस्सा के०) सप्तसप्तति. सहस्राणि, एटले सत्योतेर हजार, (दो य सया के०) द्वे,च शते, एटले वसें अने (सोळहिया के०) षोडशाधिके, एटले सोळ उपर, एटली (आवलिया के०) आवलिका., एटले आवलिकाओ (इगमुहुत्तम्मि के०) एक मुहूर्ते, एटले एक मुहूर्त्तमां थाय छे. (य के०) चकार पादपूरणार्थ उजयान्वयी अव्यय छे हवे

एनो जावार्थ कहे छे–आंखना एक स्फुरणमां अथवा एक चपटी वजाडवामां अथवा जीर्ण वस्त्र फाडवानी वखते एक तंतुथी बीजे तंतुए जाय, तथा कमलना पांदडांना समूहने युवान पुरुषे जालाथी वींधतां ते जालु जेटला वखतमां एक पांदडाथी बीजे पांदडे पहोंचे, तेटला वखतमा असंख्याता समय थइ जाय, एटले वस्त्र अथवा पत्र फाडवाना आरंजमां सूक्ष्मात् सूक्ष्म क्षणरूप जे काल होय छे, जेनो विजाग थइ शके नहीं, जेनो जूत अने जविष्य विषे विचार थाय नहीं, एटले वस्त्र अथवा पत्र फाडनो प्रथम वर्त्तमान कालरूप अति सूक्ष्म कालनु उल्लंघन थइने ते ज्यारे जूत काल थयो? कयो वर्तमान काल छे? अने कयो जविष्यकाल यथा योग्य छे तेनुं अनुमान थइ शके नहीं, तेने सर्व लघुकाल-रूप समय कहे छे एवा असंख्यात समयने

आवली कहे छे. एवी वसें ने छप्पन आवलीए एक क्षुल्लक जव थाय छे ए करतां बीजो कोइ पण नाना जवनी कल्पना थइ शके नहीं. एवा कांइक अधिक सत्तर क्षुल्लक जवमां एक श्वासोश्वासरूप प्राणनी उत्पत्ति होय छे एवा सात प्राणोत्पत्ति कालने एक स्तोक कहे छे एवा सात स्तोकसमये एक लव थाय छे एवा सत्योतेर लवे बे घमीरूप एक मुहूर्त थाय छे ते एक मुहूर्त्तने विषे पूर्वोक्त १६७७७२१६ आवली होय छे ॥१२॥

हवे वृद्धि पामता व्यवहार कालना प्रकार कहे छे

समयाऽवली मुहुत्ता, दीहा पक्खा य
मास वरिसा य ॥ जणिर्ज पलिआ
सागर, उस्सप्पिणी सप्पिणी कालो १३

गाथा १३ मीना त्रूटा शब्दना अर्थ

समय-समय.	य-अने.
आवली-आवली	भणिओ-कह्यु छे
मुहुत्ता-मुहुर्त्त.	पलिया-पल्योपम
दीहा-दिवस	सागर-सागरोपम.
पक्खा-पक्ष, पखवाडीयु	उस्सप्पिणी-उत्सर्पिणी.
व-अने.	सप्पिणी-अवसर्पिणी.
मास-महीनो	कालो-कालचक्र
वरिसा-वरस	

विस्तारार्थ.-(समय के०) समय., एटले समय (आवली के०) आवलि', ते आवलिका, (मुहुत्ता के०) मुहुर्तानि, ते मुहुर्तो, (दीहा के०) दिवसा., एटले दिवसो, (पक्खा के०) पक्षा., एटले पखवाडीयां, (य के०) च, एटले वली (मास के०) मासाः, ते महिनाओ (वरिसा के०) वर्षाणि, एटले वर्षो (य के०) च, एटले वली (पलिया के०) पल्योपम, (सागर के०) सागरा., एटले सागरोपम, (उस्सप्पिणी के०) उत्सर्पिणी, ते

उत्सर्पिणी अने (नप्पिणी के०) अवसर्पिणी, ते अवसर्पिणी, ए सर्व (कालो के०) काल, एटले काळ (जणिओ के०) जणित , कहेवाय छे. तेओमां अनुक्रमे वृद्धिनुं प्रमाण बतावे छे. अति सुक्ष्म काळने समय कहे छे, असंख्याता समयनी एक आवली थाय छे, एवी (१६७७७२१६) आवलीए एक मुहूर्त थाय छे, त्रीश मुहूर्ते एक अहोरात्रिरूप दिवस थाय छे. पदर अहोरात्रिए पखवाडीयु थाय छे बे पखवाडीये एक महीना थाय छे. बार महीने एक वर्ष थाय छे. तेमज असख्याता वर्षे एक पल्योपम थाय, तेवा दश कोडाकोडी पल्योपमे एक सागरोपम थाय, तेवा दश कोडाकोडी सागरोपमे एक उत्सर्पिणी अने बीजा दश कोडाकोडी सागरोपमे एक अवसर्पिणी थाय ए बे मलीने वीश कोडाकोडी सागरोपमे एक कालचक्र थाय, एवा अनंता काल

चक्रे एक पुजलपरावर्त्तन थाय. ए सर्व मनुष्य-लोकमा व्यवहारथी काल जाणवो

आ गाथामां वे ठेकाणे चकार छे, ते पादपूरणार्थ अव्ययान्वयी छे एनो जावार्थ–पूर्वोक्त जे कालना जेद कह्या, तेथी वली बीजा पण कालना जेद घणा छे, ते पण जाणी लेवा जेमके वे मासे एक ऋतु थाय छे, त्रण ऋतुए एके अयन, वे अयने एक वर्ष, पांच वर्षे एक युग, चोराशी लाख वर्षे एक पूर्वांग, ते एक पूर्वांगने चोराशी लाखे गुणतां एक पूर्व थाय छे इत्यादिक कालना अनेक जेद छे, ते सर्व बीजां शास्त्रोथी जाणवा॥१३॥

॥ षड्द्रव्यनु कांइक विशेष स्वरूप देखाडे छे –

परिणामि जीव मुत्तं, सपएसा एग खित्त किरिआ य ॥ णिच्चं कारण कत्ता सबगय इयरअप्पवेसे ॥ १४ ॥

गाथा १४ मीना तूटा शब्दना अर्थ.

परिणामि–परिणामि	य–अने.
जीव–जीव	णिच–नित्य
मुत्त–मूर्त्तिमत	कारण–कारण.
सपएसा–सप्रदेशी	कत्ता–कर्त्ता.
एग–एक	सव्वगय–सर्वगत
खित्त–क्षेत्र	इयर–इतर (असर्वगत).
किरिआ–सक्रिय.	अप्पवेसे–प्रवेश रहित.

विस्तारार्थ.–छ द्रव्यमां जीव अने पुद्गल, ए बे द्रव्य (परिणामि के०) परिणामिनो, एटले परिणामि (एटले एक अवस्था छोडी बीजी अवस्थामां चवारूप परिणामवाळा) छे तेमां गति इंद्रिय, कषाय, लेश्या, योग, उपयोग, ज्ञान, दर्शन, चारीत्र वेद एम दश परिणाम जीवना अने बंधन, गति, संस्थान, भेद, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु अने शब्द, ए दश परिणाम पुद्गलना छे. बाकीनां चार द्रव्य अपरिणामी छे.

चक्रे एक पुद्गलपरावर्त्तन थाय. ए सर्व मनुष्य-लोकमां व्यवहारथी काल जाणवो

आ गाथामां बे ठेकाणे चकार ठे, ते पादपूरणार्थ उन्नयान्वयी ठे एनो नावार्थ–पूर्वोक्त जे कालना नेद कह्या, तेथी वली बीजा पण कालना नेद घणा ठे, ते पण जाणी लेवा जेमके बे मासे एक ऋतु थाय ठे, त्रण ऋतुए एके अयन, बे अयने एक वर्ष, पांच वर्षे एक युग, चोराशी लाख वर्षे एक पूर्वांग, ते एक पूर्वांगने चोराशी लाखे गुणतां एक पूर्व थाय ठे इत्यादिक कालना अनेक नेद ठे, ते सर्व बीजां शास्त्रोथी जाणवा॥१३॥

॥ षड्द्रव्यनु कांइक विशेष स्वरूप देखाडे ठे –

परिणामि जीव मुत्तं, सपएसा एग
खित्त किरिआ य ॥ णिच्चं कारण कत्ता
सघगय इयरअप्पवेसे ॥ १४ ॥

गाथा १४ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

परिणामि–परिणामि	य–अने.
जीव–जीव.	णिच्च–नित्य
मुत्त–मूर्त्तिमत	कारण–कारण.
सपएसा–सप्रदेशी.	कत्ता–कर्त्ता
एग–एक	सव्वगय–सर्वगत
खित्त–क्षेत्र	इयर–इतर (असर्वगत).
किरिआ–सक्रिय	अप्पवेसे–प्रवेश रहित.

विस्तारार्थ.–छ द्रव्यमां जीव अने पुद्गल, ए वे द्रव्य (परिणामि के०) परिणामिनो, एटले परिणामि (एटले एक अवस्था छोडी बीजी अवस्थामां चवारूप परिणामवाळा) छो तेमां गति इंद्रिय, कषाय, लेश्या, योग, उपयोग, ज्ञान, दर्शन, चारीत्र वेद एम दश परिणाम जीवना अने वंधन, गति, संस्थान, भेद, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु अने शब्द, ए दश परिणाम पुद्गलना छे. बाकीनां चार द्रव्य अपरिणामी छे.

चक्रे एक पुद्गलपरावर्त्तन थाय. ए सर्व मनुष्य-लोकमां व्यवहारथी काल जाणवो.

आ गाथामां वे ठेकाणे चकार छे, ते पादपूरणार्थ उन्नयान्वयी छे एनो जावार्थ–पूर्वोक्त जे कालना नेद कह्या, तेथी वली वीजा पण कालना नेद घणा छे, ते पण जाणी लेवा जेमके वे मासे एक ऋतु थाय छे, त्रण ऋतुए एके अयन, वे अयने एक वर्ष, पांच वर्षे एक युग, चोराशी लाख वर्षे एक पूर्वांग, ते एक पूर्वांगने चोराशी लाखे गुणतां एक पूर्व थाय छे. इत्यादिक कालना अनेक नेद छे, ते सर्व वीजां शास्त्रोथी जाणवा॥१३॥

॥ षड्द्रव्यनु कांइक विशेष स्वरूप देखाडे छेः–

परिणामि जीव मुत्तं, सपएसा एग
खित्त किरिआ य ॥ णिचं कारण कत्ता
सव्वगय इयरअप्पवेसे ॥ १४ ॥

धर्म, अधर्म, आकाश अने काल, ए चार द्रव्य (णिच्चं के०) नित्याः, एटले सदा एक अवस्थामां रहेवारूप नित्य ठे, बाकीनां बे अनित्य ठे. यद्यपि उत्पाद, व्यय अने ध्रुवपणे सर्व पदार्थ नित्यानित्यपणे परिणमे ठे, तथापि धर्मादिक चार द्रव्य सदा अवस्थित, माटे नित्य कह्यां. ठ द्रव्यमां धर्मादिक पांच द्रव्य (कारण के०) कारणानि, एटले कारण छे. एक जीवद्रव्य अकारणरूप छे ठ द्रव्यमां एक जीवद्रव्य (कत्ता के०) कर्ता, एटले कर्त्ता छे, बीजा पांच अकर्त्ता छे ठ द्रव्यमा एक आकाश (सव्वगय के०) सर्वगतं, एटले सर्वगत छे, अने बीजां पांच द्रव्य मात्र लोकव्यापी छे, माटे असर्वगत जाणवां. तथा यद्यपि ठ द्रव्य क्षीर नीर परे परस्पर अवगाढ ठे, तयापि (इयरअप्पवेसे के०) इतराप्रवेशाः, एटले एक बीजामां अरस्परस प्रवेश रहित

छे, एटले कोइ पण द्रव्य अन्य द्रव्यमां तद्रूप-पणे थतुं नथी, माटे प्रवेशरहित छे, " सदसग न विजहति ' ए वचन माटे ॥ १४ ॥

छ द्रव्यमां परिणामादि विभागनुं यंत्र.

द्रव्यनाम	परिणामी	जीव	मुत्त	सपदेसा	एग	खित्त	सकिरिय	निच्च	कारण	कत्ता	सव्वगय	इयरअप्पवेसी
धर्मास्तिकाय	०	०	०	१	१	०	०	१	१	०	०	१
अधर्मास्तिकाय	०	०	०	१	१	०	०	१	१	०	०	१
आकाशास्तिकाय	०	०	०	१	१	१	०	१	१	०	१	१
जीवास्तिकाय	१	१	०	१	०	०	१	०	०	१	०	१
पुद्गलास्तिकाय	१	०	१	१	०	०	१	०	१	०	०	१
काल	०	०	०	०	०	०	०	१	१	०	०	१
	२	१	१	५	३	१	२	४	५	१	१	६

अहींआ धर्मद्रव्यनुं कांइक विशेष कहे छे. १ स्वभावथी गति क्रिया परिणत एवा जीव अने पुद्गल, ए वे द्रव्य छे. जेमां पोताना स्वभावने

छे? तेनु समाधान करे छे.

जीवद्रव्यने वर्त्तना, परिणाम, क्रिया, अने परावर्त्तादिक, ए सर्व कालव्यपदेशनाक् छे, तेमां जे जीवने सादि सांतादि चार न्नेदे वर्त्तवुं, ते वर्त्तना जाणवी तथा जे विश्रासाप्रयोगे जीवद्रव्यनी परिणति, ते परिणाम जाणवो तथा नूत, नावि अने नविष्यत् विशेषणवंत जीवने गमन स्थित्यादि कार्यनी चेष्टा, ते क्रिया जाणवी

तथा पूर्वन्नावि पश्चाद्भावी परापर इत्यादि यदाश्रये द्रव्यने कहेवुं, ते परापरत्व जाणवुं ए प्रकारे वर्त्तनादिक सर्व द्रव्यना पर्याय छे, ते सर्व कालव्यपदेशन्नाक छे, जे माटे कथंचितपणे द्रव्यथी अन्निन्न द्रव्यनामी पर्याय पण कहीए, ते माटे पर्यायने द्रव्यपणु करतां अनवस्था प्रसंग थाय, माटे काल ते पृथक द्रव्य नहीं वर्त्तनात्मक काल जीवाजीव द्रव्य पर्यायपणे मानवो.

एम जो नहीं मानीए, तो आकाशनी पेरे सर्वव्यापी कालास्तिकाय मानवो? एवो परवादीनो आशय ग्रहण करी शिष्ये पूछयुं, ते वारे गुरु उत्तर कहे छे के, हे देवाणुप्पिय! ए आस वचन नहीं, केमके सिद्धांतने विषे पाच अस्तिकाय कह्या छे, अने छठु कालद्रव्य पृथक कह्युं छे जे प्रदेशनुं बहुपणु होय, तेने अस्तिकाय कहीए अने कालने विषे प्रदेशने बहुपणु नथी, जे माटे कालने विषे मात्र वर्तमान एक समय प्ररूपणा छे, अने अनागत समयनी अनुपपत्ति छे. शिष्य आशका करे छे के, काल तो अविनष्ट धर्मात्मक छे, अने अतीत समयावली मुहूर्त्तादि वर्षादि प्ररूपणा माटे असंख्य समयात्मक कालने बहु प्रदेशपणानी प्राप्ति छे?

उत्तर–ए सत्य छे, परंतु स्थिर स्थूल कालत्रयवर्त्ती पदार्थनुं अंगीकारपणु छे, अने आव-

लिकादिक प्ररूपणा मात्र व्यवहार नयने मते
छे, अने निश्चय नयने मते कालने विशे प्रदेशा-
नाव छे, ते माटे कालने विषे अस्तिकायपणुं क-
हेवु घटमान नथी, अने गुणना आश्रयमाटे
द्रव्यपणुं घटमान छे, "गुणाणमासर्ज दव्वं" इति
वचनात् ते माटे द्रव्यथी वर्त्तनालक्षण अने का-
लथी अनादि अनंत तथ क्षेत्रथी समग्र क्षेत्र-
वर्त्ती अने नावथी रूपादि रहित अमूर्त्तिमंत अं-
कादिक चारे व्यगित समयादिके परमाणुनी परे
अनुमेय एवुं काल नामा द्रव्य पृथकपणे मानवुं,
एहीज आप्त वाक्य प्रमाण करवु इत्यादिक का-
लद्रव्य संबंधी विशेष विचार ग्रंथांतरे बहुश्रुत-
ना मुखथी जाणी लेवो ॥ इति प्रसगागतकाल-
द्रव्यविचार: समाप्त: ॥

हवे शिष्य पूछे छे, के नवतत्त्वादिक सकल
पदार्थने विषे जीवतत्त्वनी मुख्य प्ररूपणा कही,

अने द्रव्याधिकारे तो प्रथम धर्मास्तिकायनी मुख्यता कही ठे, तेनुं शुं कारण ?

गुरु उत्तर कहे ठे–सकल पदार्थ जीवमिश्रित ठे, ए सत्य ठे, परंतु संसारस्थ जे जीवो ठे, ते सर्व पुद्गलप्रतिबद्ध ठे. ते पुदगलनो अधोगमन स्वभाव छे, अने जीवनो उर्ध्वगमन स्वभाव छे ए रीते जीव तथा पुदगल ए वेउ द्रव्यने गत्यन्यथानुपपत्ति ठे, माटे आद्यमां धर्मास्तिकाय द्रव्यनु ग्रहण कीधुं ठे, अने त्यार पठी जीव तथा पुद लने स्थित्य-यथानुपपत्तिमाटे अधर्मास्तिकायनु ग्रहण कीधुं ठे, त्यार पठी जीवाऽजीवादि पदार्थने आधाराऽन्यथानुपपत्तिमाटे आकाशास्तिकायनुं ग्रहण कीवु ठे, त्यार पठी वृक्षादिकने फलप्रदानशक्तिनी अन्यथानुपपत्तिमाटे कालद्रव्यनु ग्रहण कीधुं ठे, त्यार पठी घटादि कार्यान्यथाऽनुपपत्तिमाटे पुद्गलास्तिकायनुं

ग्रहण कीधुं छे त्यार पछी प्रतिप्राणीने प्रत्यक्ष सिद्ध चैतन्यनी अन्यथानुपपत्तिमाटे जीवास्तिकायनुं ग्रहण कीधुं छे.

आशंका–धर्मास्तिकायादिक चार द्रव्यना देश अने प्रदेश छे, परंतु परमाणु नथी, तो परमाणुने साथे ग्रहण कर्या तेनु, कारण शुं?

उत्तर–मूळभेदे अजीवना नव भेद छे, तेमां चार अस्तिकाय द्रव्य, पांचमो स्कंध, छठ्ठो देश, सातमो प्रदेश, अने आठमो पुद्गलनो एक परमाणु तथा नवमु कालद्रव्य छे. माटे ते नव भेद देखाडवा साऱु परमाणु कह्यो.

आशंका–प्रदेश अने परमाणु ए बेउने निर्विभागरूपपणुं छे, माटे एमां शी विशेषता छे?

उत्तर–जे स्कंधप्रतिबद्ध निर्विभाग भाग ते प्रदेश, तथा जे एकाकी विकल्पित स्कंधपरिणाम रहित एवा लोकने विषे छूटा वर्त्ते छे ते,

तथा अचितमहास्कधरूप, ते परमाणुओ जाणवा ए षडद्रव्यनो अल्पमात्र विचार करयो विस्तारे विशेषावश्यादिक ग्रंथोथकी जाणवुं

अजीवना ५६० भेद थाय छे तेनी समज

रूपी अजीवना ५३० भेद

धर्मा०	स्कंध-देश-प्रदेश	३	वर्णना ५×२०—१००
			रसना ५×२०—१००
अधर्मा०	,, ,, ,,	३	संस्थान ५×२०—१००
			गंधना २×२३— ४६
आकाश	,, ,, ,,	३	स्पर्शना ८×२३—१८४
			५३०
काल		१	रूपी अजीव
	अरूपी अजीव	१०	

धर्मा०	द्रव्य—	क्षेत्र—	काल—	भाव	गुण	५
अधर्मा०	,,	,,	,,	,,	,,	५
आकाशा०	,,	,	,,	,,	,,	५
काल०	,,	,,	,,	,,	,,	५
					अरूपी अजीव	२०

॥ इति श्री अजीवतत्त्वविचारः समाप्तः ॥ २ ॥



हवे पुण्यतत्त्वनु वर्णन करतां पुण्य नव प्रकारे बधाय छे, अने बेंतालीश प्रकारे भोगवाय छे, ते कहे छे

सा-उच्चगोअ-मणुदुग, सुरदुग-पंचें-
दिजाइ-पणदेहा ॥ आइतितणूणुवंगा,
आइम-संघयण-संठाणा ॥ १५ ॥

गाथा १५ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

सा-शातावेदनीय	आइ-आदिना
उच्चगोअ-उच्चगोत्र	तितणूण-त्रण शरीर
मणुदुग-मनुष्यद्विक	उवंगा-उपांग (अंगोपांग)
सुरदुग-सुरद्विक	आइम-आदिम-पहेलु.
पचेंदिजाइ-पचेंद्रि जाति	संघयण-संघयण.
पणदेहा-पांच शरीर	संठाणा-संस्थान

विस्तारार्थ.-साधु प्रमुखने पहेलु अन्न दीधाथी, बीजुं पाणी दीधाथी, त्रीजु रहेवाने स्थान देवाथी, चोथुं सूवाने पाट प्रमुख दीधाथी, पांचमुं पहेरवा अथवा ओढवाने वस्त्र दीधाथी, छठुं ते

विषे मने करी शुभ संकल्प करवाथी सातमुं वचने करीने स्तुत्यादिक करवाथी, आठमुं कायाए करी सेवा करवाथी, तथा नवमुं हाथे करी नमस्कारादिक करवाथी ए नव प्रकारे पुण्य बंधाय छे तेने बेंतालीश प्रकारे जीव भोगवे ते कहे छे

१ जेना उदये जीव सुखनो अनुभव करे, अथवा शाताने पामे, ते (सा के०) सातं, एटले शाता वेदनीय कहेवाय. २ जेना उदये जीव उच्चगोत्र एटले उच्चकुलमां जन्म धारण करीने लोकने विषे पूजा प्रतिष्ठादिकने पामे, ते (उच्चगोअ के०) उच्चगोत्रं, एटले उच्चगोत्र कहेवाय. जेना उदये ३ मनुष्यनी गति तथा ४ मनुष्यनी आनुपूर्वीनी प्राप्ति थाय छे, ते (मणुदुग के०) मनुष्यद्विकं, एटले मनुष्यद्विक कहेवाय. जेना उदये ५ देवनी गति, तथा ६ देवनी आनुपूर्वी पमाय छे, वक्रगतिए परभवमा जतां बलदने

नाथ घालीने सीधो चलाववानी पेठे जेथी उप-
जवाने स्थानके पहोंची शकाय, तेने आनुपूर्वी
कहे ठे) ए (सुरडुग के०) सुरद्विकं, एटले सुर-
द्विकरूप नामकर्म कहेवाय ७ जेना उदये पचें-
ड्रियपणुं प्राप्त थाय ठे, ते (पचेंदिजाइ के०)
पचेंड्रियजाति', एटले पचेंद्रिय जाति नामकर्म
कहेवाय जेना उदये पांच शरीरनी प्राप्ति थाय
ठे, ते कहे ठे–ए जेथी औदारिक शरीरयोग्य
पुद्गल ग्रहण करीने तथा तेने शरीरपणे परि-
णमावीने जीव पोताना प्रदेशनी साथे मेलवे,
तेने औदारिक नामकर्म कहे ठे. एवी रीते सर्व
शरीरने विषे योजना करवी ए वैक्रिय शरीरना
वे न्नेद ठे. एक औपपातिक ते देवता तथा ना-
रकीने होय छे. बीजुं लब्धिप्रत्ययिक ते तिर्यच
तथा मनुष्य लब्धिवंतने होय छे १० आहारक
शरीर ते चौद पूर्वधर मुनिराज तीर्थंकरनी ऋद्धि

प्रमुख जीवाने अर्थे एक हाथ प्रमाण देह धारण करे छे. ११ तैजस शरीर ते आहारनुं पचन करनार तथा तेजोलेश्यानुं हेतु, १२ अने कार्मण शरीर ते कर्मना परमाणु आत्मप्रदेशनी साथे मळ्या छे, तेज जाणवुं ए (पणदेहा के०) पच-देह, एटले पच शरीररूप नामकर्म कहेवाय पूर्वोक्त ठ पदोनो व्याकरणना नियम प्रमाणे द्वंद्व समास करतां एक पद थाय, आ प्रमाणे आगळ पण समजवुं जेना उदयथी कहेलां पांच शरीरमांनां (आइतितणूण के०) आदित्रितनूनां, एटले आदिनां औदारिक, वैक्रिय तथा आहारक, ए त्रण शरीरना बे बाहु, बे ऊरु, एक पृष्ठिका, एक मस्तक, एक उदर तथा एक हृदय, ए आठ अग छे, अने अंगुलि प्रमुख उपांग छे, तथा रेखादिक अंगोपांग छे. एटले १३ औदारिक अंगोपांग, १४ वैक्रिय अंगोपांग, १५

आहारक अंगोपांग, अने तैजस शरीर, तथा कार्मण शरीर, ए वेने अंगोपांग नथी, तेथी पहेलां त्रण शरीरनांज अंगोपाग कह्यां छे. ते (उवंगा के०) उपांगानि, एटले अंग उपांग, तथा अंगोपांगरूप नामकर्म कहेवाय. (आइमसंघयण-संठाणा के०) आदिमसंहननसस्थाने एटले १६ जेना उदयथी छ संघयणमांनु पहेलु वज्रऋषभ-नाराच नामनु संघयण प्राप्त थाय छे, तेमां वज्र एटले खीली, ऋषभ एटले पाटो, तथा नाराच एटले वे पासा मर्कटबंध, ते उपर पाटो, ते उपरे खीली एवो हाडनो निचय एटले समुदाय होय, ते अस्थिनिचयसंघयणरूप प्रथम संघयण कहेवाय. १७ जेना उदयथी पोते पर्यकासन करी वेठां छतां समचतुरस्र-चारे वाजु सरखी आकृती थाय, अने पोताना अंगुल प्रमाणवडे एकसो ने आठ अंगुल प्रमाण शरीर भराय, तेने उत्तम

पुरुष कहे छे, एनी प्राप्ति थाय छे, ते छ सस्थान-मांनु पहेलुं समचतुरस्त्र संस्थाने कहेवाय ॥ इति ॥ १५ ॥

वणचउक्काऽगुरुलहु,-परघाऊसास-
आयवुज्जोअं ॥ सुभखगइनिमिण-
तसदससुरनरतिरिआउतित्थयरं ॥१६॥

गाथा १६ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

वणचउक्क–वर्णचतुष्क.	निमिण–निर्माण.
अगुरुलहु–अगुरुलघु.	तसदस–त्रसदशक
परघा–पराघात.	सुर (आउ)–सुरायुष्य
ऊसास–श्वासोच्छ्वास.	नर (आउ)–नरायुष्य.
आयव–आतप.	तिरिआउ–तिर्यचायु
उज्जोअ–उद्योत.	तित्थयर–तीर्थंकर.
सुभखगइ–शुभ विहायोगति	

विस्तारार्थ –जेना उदयथी १७ श्वेत, रक्त अने पीतरूप शुभ वर्ण, १९ एक सुरभिगंधरूप शुभ

१ सस्थान एटले जीवना शरीरनो लक्षणयुक्त आकार.

गध, २० आम्ल, मधुर अने कषायेलरूप शुभ रस, तथा २१ लघु, मृदु, उष्ण अने स्निग्धरूप शुभ स्पर्श ए चार पदार्थ पुण्यप्रकृतिने अर्थे प्रशस्त जाणवा एओनी प्राप्ति थाय छे, ते (वण-चउक्क के०)वर्णचतुष्क,एटले वर्णचतुष्क कहेवाय.

२२ जेना उदयथी मध्यम वजनदार शरीर-नी प्राप्ति थाय, एटले लोहनी पेठे अति भारी पण नहीं, अने आकडाना कपासनी पेठे अति हलकुं पण नहीं, किंतु मध्यम परिणामी होय, ते (अगुरुलहु के०) अगुरु लघु, एटले अगुरुलघु नामकर्म कहेवाय.

२३ जेना उदयथी बीजा बलवानने अति दुःसहनीय छतां पोते गमे तेवा बलीयाने जीत-वाने समर्थ थाय छे, एवा बलनी प्राप्ति थाय छे, ते (परघा के०) पराघात., एटले पराघात नामकर्म कहेवाय.

२४ जेना उदयथी सुखपूर्वक श्वासोश्वास लइ शकाय, कोइ पण विघ्न पडे नहीं, ते (ऊसास के०) उश्वास., एटले श्वासोश्वास नामकर्म कहेवाय

२५ जेना उदयथी सूर्यनां बिंबनी पेठे परने ताप उत्पन्न करवाना हेतुरूप तेजोयुक्त शरीरनी प्राप्ति थाय छे, ते (आयव के०) आतप, एटले आतप नामकर्म

२६ जेना उदयथी चन्द्रबिंबनी पेठे शीतलता-ने उत्पन्न करवाना हेतुरूप तेजोयुक्त शरीर, तेनी प्राप्ति थाय, ते (उज्जोय के०) उद्योतः, एटले उद्योत नामकर्म पूर्वोक्त ठ पदोना व्याकरणना नियमे समाहार द्वंद्व समास करवाथी एक पद थाय छे

२७ जेना उदयथी वृषभ तथा हंसनी पेठे सारी चलनशक्तिनी प्राप्ति थाय छे, ते (सुनख-

गइ के०) शुभखगतिः, एटले शुभ विहायोगति नामकर्म कहेवाय.

२८ जेना उदयथी पोतानां अंगना सर्व अवयवो योग्य स्थलने विषे गोठववानी शक्ति सूत्रधारनी पेठे प्राप्त थाय छे, ते (निमिण के०) निर्माण, एटले निर्माण नामकर्म कहेवाय.

२९–३८ जेना उदयथी त्रस दशक एटले त्रसादि दश प्रकृति जे आगल कहेवाशे, तेनी प्राप्ति थाय छे, ते (तसदस के०) त्रसदशक, एटले त्रसदशक नामकर्म कहेवाय. तेनुं विवरण आगलनी गाथामां कहेवाशे.

(सुरनरतिरिआउ के०) सुरनरतिर्यगायु, एटले ३९ जेना उदयथी देवताना आयुष्यनी प्राप्ति थाय छे, ते सुरायुष्य कहेवाय.

४० जेना उदयथी मनुष्यना आयुष्यनी प्राप्ति थाय छे, ते नरायुष्य कहेवाय

४१ जेना उदयथी तिर्यचना आयुष्यनी प्राप्ति थाय छे, ते तिर्यचायुष्य कहेवाय

४२ जेना उदयथी त्रिभुवनने विषे पूज्यपणुं प्राप्त थाय छे, ते (तिछयर के०) तीर्थंकर, एटले तीर्थंकर नामकर्म कहेवाय. ए कर्मनो उदय मात्र केवलीनेज थाय छे आ पूर्वोक्त पांच पदोनो व्याकरण प्रमाणे समाहार द्वंद्व समास करतां एक पद थाय

हवे पूर्वोक्त त्रसदशक कहे छे—

तस-बायर-पज्जत्तं, पत्तेअ थिरं सुभं
च सुभग च॥ सुस्सर-आइज्ज-जसं,
तसाइ दसगं इम होइ ॥ २७ ॥

गाथा २७ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

तस–त्रस.	पज्जत्त–पर्याप्ति.
बायर–बादर.	पत्तेअ–प्रत्येक.

थिर–स्थिर.	आइज्ज–आदेय.
सुभ–शुभ.	जस–जश, यश.
च–अने	तसाइ–त्रसादि.
सुभग–सौभाग्य.	दसग–दश प्रकृति.
च–अने.	इम–आ, ए
सुस्सर–सुस्वर.	होइ–होय छे, छे

विस्तारार्थः–(तसवादरपज्जत्त के०) त्रसवादर पर्याप्त, एटले १ जे कर्मना उदयथीजीवने त्रस-पणुं (त्रास पामी एक स्थानथी बीजे स्थाने जवानी शक्ति) प्राप्त थाय ते, २ जेना उदयथी वादर एटले स्थूल शरीरनी प्राप्ति थाय, पण जे दृष्टिए करी देखाय नहीं, एवां सूक्ष्म शरीरने न पमाय ते वादर नामकर्म कहेवाय.

३ जेना उदयथी आप आपणी पर्याप्ति पूरी करे, त्यारपछी मरे, ते पर्याप्ति बे प्रकारे छे, एक लब्धि, बीजी करण, ते पर्याप्त नामकर्म कहेवाय.

४ जेना उदयथी औदारिक अथवा वैक्रिय प्रमुख भिन्न भिन्न शरीरनी प्राप्ति थाय, पण घणा जीवो वच्चे एक शरीर न पामे, ते (पत्तेअ के०) प्रत्येकं, एटले प्रत्येक नामकर्म कहेवाय.

५ जेना उदयथी शरीरना दंतादिक अवयवोने स्थिरतानी प्राप्ति थाय छे, ते (थिर के०) स्थिरं, एटले स्थिर नामकर्म कहेवाय.

६ जेना उदयथी शरीरना सर्व अवयव सारा होय, अथवा नाभिनी उपरनुं शरीर सारुं होय ते (सुभं के०) शुभं, एटले शुभ नामकर्म कहेवाय.

७ जेना उदयथी सर्व लोकने प्रिय थाय, ते (सुभगं के०) सुभगं, एटले सौभाग्य नामकर्म कहेवाय.

८ जेना उदयथी वाणीमां कोकिलानी पेठे मधुरता थाय, (सुस्सरआइज्जजसं के०) सुस्वरादेययश., एटले सुस्वर नामकर्म-कहेवाय

ए जेनो उदयथी लोकने विषे माननीय वचन थाय, ते आदेय नामकर्म कहेवाय.

१० जेना उदयथी लोकने विषे यश-कीर्त्ति थाय ते यशोनामकर्म कहेवाय.

एवी रीते (तसाइ दसगं के०) त्रसादि दशक एटले त्रस आदि दश प्रकृतिनुं दशक (इमं के०) इद, एटले ए पुण्यना जेदमां (हुंइ के०) जव-ति, एटले छे. ते पूर्वोक्त बत्रीशमां जेलीए, ते वारे बेतालीश थाय. ए पुण्यतत्त्वना बेतालीश जेद कह्या आ गाथामां बे चकार जे छे, ते पादपूरणार्थ छे ॥ १७ ॥

॥ इति श्रीपुण्यतत्त्वविचार. समाप्त. ॥ ३ ॥

हवे पापतत्त्वनुं वर्णन करतां अढार प्रकारे पाप बंधाय, अने ब्याशी प्रकारे भोगवाय ते कहे छे—

नाणंतरायदसगं, नव बीए नीअ-सायमिछत्तं ॥ थावरदस नरयतिगं, कसायपणवीस तिरियडुगं ॥ १८ ॥

गाथा १८ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

नाण–ज्ञानावरणीय.	असाय–अशातावेदनीय.
अंतराय–अंतराय	मिच्छत्त–मिथ्यात्व मोहनीय.
दसग–दश प्रकार	थावरदस–स्थावरदशक
नव–नव	नरयतिग–नरकत्रिक
बीए–बीजा एटले दर्शना वरणीयना.	कसाय–कषाय
	पणवीस–पचीश
नीअ–नीचगोत्र	तिरियदुग–तिर्यंचद्विक

विस्तारार्थ –आ जीवनो एक पण एवो समय खाली जतो नथी, के जेमां पुण्य अथवा पाप न बांधे, कारण के शुभ कापायिक अध्यवसाय वडे प्रतिसमये कां तो पुण्य बांधे, अथवा अशुभ कापायिक अध्यवसाय वडे कां तो पाप बांधे ते पुण्य बांधवाना नव प्रकार पूर्वे कही गया

हवे पाप बांधवाना अढार प्रकार कहे छे–प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, रति अरति, परपरिवाद, मायामोसो, तथा मिथ्यात्वशल्य ए अढार प्रकारे पाप बंधाय छे, अने ब्याशी प्रकारे भोगवाय छे, ते ब्याशी प्रकार कहे छे–

(नाणंतरायदसगं के०) ज्ञानांतरायदशक, एटले १ जेना उदयथी पांच इंद्रिय, तथा मनोद्वाराए जे नियत वस्तुनुं ज्ञान थाय छे, एवा प्रथम अक्षरोपलब्धिरूप मतिज्ञाननुं जे आछादन थाय, ते मतिज्ञानावरणीय पापकर्म कहेवाय २ जेना उदयथी मन अने इंद्रियोथी थतुं अर्थोपलब्धिरूप ज्ञान अथवा द्वादशांगीरूप शास्त्रानुसारे जे ज्ञान थाय छे, एवा श्रुतज्ञाननुं आछादन थाय, ते श्रुतज्ञानावरणीय पापकर्म कहेवाय.

३ जेना उदयथी मन अने इंद्रियोनी अपेक्षा विना आत्मद्रव्यने जे साक्षात् रूपी द्रव्यने जाणवानुं जे ज्ञान थाय छे, एवा अवधिज्ञाननुं जे आछादन थाय, ते अवधिज्ञानावरणीय पापकर्म कहेवाय.

४ जेना उदयथी मन अने इंद्रियोनी अपेक्षा विना संज्ञी पचेंद्रियना मनोगत भाव जाणवानुं जे ज्ञान थाय छे, एवा मन.पर्यवज्ञाननुं जे आछादन थाय छे, ते मनःपर्यवज्ञानावरणीय पाप कर्म कहेवाय

५ जेना उदयथी मन अने इंद्रियोनी अपेक्षा विना पूर्वोक्त चार ज्ञान रहित जे एकलुं निरावरण ज्ञान होय, एवा केवलज्ञाननु जे आछादन थाय ते केवलज्ञानावरणीय पापकर्म कहेवाय. एवी रीते पाच प्रकारनां ज्ञानने जे आ-

[illegible] ीय पापकर्म

६ जेना उदयथी पोताना घरमां देवा योग्य वस्तु छतां तथा दाननुं फल जाणतां छतां पण आपी शकाय नही, ते दानांतराय पापकर्म कहेवाय

७ जेना उदयथी दातार छतां, दातारना घरमां वस्तु छतां, मागनार माह्यो छतां पण जे याचित वस्तुनी प्राप्ति न थाय, ते लाजांतराय पापकर्म कहेवाय

७–ए जेना उदयथी पोते यौवन छतां, सुरूप छतां, तथा जोगोपजोग्य वस्तुनी प्राप्ति थइ छतां पण ते जोगवाइ न शकाय, ते जोगांतराय तथा उपजोगांतराय, ए वे पापकर्म कहेवाय, ७ पुष्पादि पदार्थ जे एक वार जोगवाय, छे तेने जोग कहे छे, अने ए वस्त्रादिक पदार्थ जे वारंवार जोगवाय छे, तेने उपजोग कहे छे.

१० जेनो उदयथी पोते युवान, रोग रहित, तथा बलवान् छतां पण जेथी पोतानी शक्ति फोरवाइ शकाय नहीं, ते वीर्यांतराय पापकर्म

एवी रीते पांच प्रकारे जे आडुं आवे. तेने अंतराय नामनुं पापकर्म कहेवाय. पहेला पांच तथा ए पांच मलीने दश प्रकार थया. हवे (नव बीए के०) नव द्वितीये, एटले बीजा नव प्रकार दर्शनावरणीय कर्मना जाणवा तेमां चार भेद दर्शनना तथा पांच भेद निद्राना कहे छे (सामान्य उपयोगने दर्शन कहे छे)

११ जेना उदयथी आंखे करी जे रूपनुं सामान्यपणे ग्रहण थाय, एवा चक्षुर्दर्शननु आछादन थाय, ते चक्षुर्दर्शनावरणीय पापकर्म कहेवाय

१२ जेना उदयथी चक्षु विना चार इंद्रिय तथा मने करी पोतपोताना विषयनुं जे सामान्यपणे ग्रहण थाय, एवा अचक्षुर्दर्शनतु जे आछादन थाय, ते अचक्षुर्दर्शनावरणीय पापकर्म कहेवाय

१३ जेना उदयथी सामान्यपणे जे रूपी द्रव्यनुं मर्यादापणे ग्रहण थाय छे, एवा अवधिदर्शननु जे आच्छादन थाय, ते अवधिदर्शनावरणीय पापकर्म कहेवाय.

१४ जेना उदयथी समस्त वस्तुनु जे सामान्यपणे देखवुं थाय छे, एवा केवलदर्शननुं जे आच्छादन थाय, ते केवलदर्शनावरणीय पापकर्म.

१५ जेना उदयथी निद्रावस्था थइ गया पछी सुखपूर्वक एक शब्दमात्रथी जाग्रदवस्थानी प्राप्ति थाय, ते निद्रारूप पापकर्म कहेवाय

१६ जेना उदयथी निद्रावस्था थइ गया पछी दुःखपूर्वक जाग्रदवस्थानी प्राप्ति थाय, ते निद्रानिद्रागाढ निद्रारूप पापकर्म कहेवाय.

१७ जेना उदयथी बेठां बेठां तथा उभां उभां निद्रा आव्या करे, ते प्रचलारूप पापकर्म कहेवाय

१८ जेना उदयथी हरतां फरतां पण निद्रा आवे, ते प्रचलाप्रचलारूप पापकर्म कहेवाय.

१९ जेना उदयथी दिवसनुं चितवेलु कार्य रात्रिने विषे निद्रासमये जाग्रतनी पेठे थाय छे, ते थीणद्धीरूप पापकर्म कहेवाय. थीणद्धी निद्राना समये प्राणी वासुदेवना अर्ध बल युक्त होय छे, जो ते निद्रावालो प्रथमसंघयणी होय, तो चक्रवर्त्तीथी चोथा भाग जेटला बलयुक्त होय, अने बीजा जीवोने जाग्रदवस्थाना बलथी वधुमां वधु सात आठ गणुं बल होय, अने ते जीव नरकगामी जाणवो

(नीअसायमिछत्तं के०) नीचासातमिथ्यात्वं, एटले २० जेना उदयथी पोते रूपवान् तथा धनवान् छता नीच कुलने विषे उत्पन्न थाय छे, ते नीचगोत्ररूप पापकर्म कहेवाय (ए नीचगोत्ररूप पा[illegible] छे)

१३ जेना उदयथी सामान्यपणे जे रूपी द्रव्यनुं मर्यादापणे ग्रहण थाय छे, एवा अवधिदर्शननुं जे आच्छादन थाय, ते अवधिदर्शनावरणीय पापकर्म कहेवाय

१४ जेना उदयथी समस्त वस्तुनुं जे सामान्यपणे देखवुं थाय छे, एवा केवलदर्शननुं जे आच्छादन थाय, ते केवलदर्शनावरणीय पापकर्म.

१५ जेना उदयथी निद्रावस्था थइ गया पछी सुखपूर्वक एक शब्दमात्रथी जाग्रदवस्थानी प्राप्ति थाय, ते निद्रारूप पापकर्म कहेवाय.

१६ जेना उदयथी निद्रावस्था थइ गया पछी दुःखपूर्वक जाग्रदवस्थानी प्राप्ति थाय, ते निद्रानिद्रागाढ निद्रारूप पापकर्म कहेवाय.

१७ जेना उदयथी बेठां बेठां तथा उभां उभां निद्रा आव्या करे, ते प्रचलारूप पापकर्म कहेवाय

१८ जेना उदयथी हरतां फरतां पण निद्रा आवे, ते प्रचलाप्रचलारूप पापकर्म कहेवाय

१९ जेना उदयथी दिवसनुं चितवेलु कार्य रात्रिने विषे निद्रासमये जाग्रतनी पेठे थाय छे, ते थीणद्धीरूप पापकर्म कहेवाय. थीणद्धी निद्राना समये प्राणी वासुदेवना अर्ध बल युक्त होय छे, जो ने निद्रावालो प्रथमसंघयणी होय, तो चक्रवर्तीथी चोथा भाग जेटला बलयुक्त होय, अने बीजा जीवोने जाग्रदवस्थाना बलथी वधुमां वधु सात आठ गणुं बल होय, अने ते जीव नरकगामी जाणवो

(नीअसायमिछत्तं के०) नीचासातमिथ्यात्वं, एटले २० जेना उदयथी पोते रूपवान् तथा धनवान् छतां नीच कुलने विषे उत्पन्न थाय छे, ते नीचगोत्ररूप पापकर्म कहेवाय. (ए नीचगोत्ररूप पापकर्म निंदापात्र छे)

२१ जेना उदयथी दुःखनो अनुभव थाय छे, ते अशातावेदनीय पापकर्म.

२२ जेना उदयथी वीतरागनां वचननी विपरीत सद्दहणा थाय, ते मिथ्यात्वमोहनीय पापकर्म कहेवाय.

(थावरदसनरयतिग के०) स्थावरदशकनरकत्रिकं, एटले २३–३२ जेना उदयथी स्थावरदशकनी प्राप्ति थाय छे, ते स्थावरदशक नामनुं पापकर्म, ते आगल कहेवाशे, माटे अहीं नाम मात्र दर्शाव्युं छे.

३३–३५ जेना उदयथी नरकनी गति, नरकनी आनुपूर्वी (एटले नरके जता जीवने उत्पत्ति क्षेत्रे वळवुं थाय ते), तथा नरकनु आउखुं प्राप्त थाय छे, ते नरकत्रिक पापकर्म कहेवाय.

(कसायपणवीस के०) कषायपचविंशतिः, एटले पचीश कषायरूप पापकर्मना पचीश प्रकार

छे तेउमां सामान्यथी तो एक सोल कपाय अने बीजा नव नोकपाय एवा बे प्रकार छे, तेउनुं अनुक्रमे वर्णन करे छे.

३६–३९ जेना उदयथी अनंत संसार बंधाय, तेने अनंतानुबंधी पापकर्म कहीए. एना क्रोध, मान, माया अने लोज ए चार न्नेद छे. ए जावज्जीव लगे कायम रहे, सम्यक्त्व आववा न दीए, नवांतरमां पण साथे आवे अने अंते नरकने विषे पहोंचाडे. ए क्रोध पर्वतनी लींटी जेवो छे, मान पाषाणना थांजला जेवो छे, माया वंशना मूल जेवी छे, अने लोज करमजना रंग जेवो छे

४०–४३ जेना उदयथी थोडा प्रत्याख्याननी पण प्राप्ति न थाय, तेने अप्रत्याख्यानीय पापकर्म कहीए. एना क्रोध, मान, माया अने लोज ए चार न्नेद छे, ए एक वर्ष सुधी कायम रहे छे.

देशविरतिपणु आववा दीए नहीं, ने अंते तिर्यचनी गतिनी प्राप्ति करावे ए क्रोध सुकेला तलावनी रेखा जेवो छे, मान हाडकाना थांजला जेवो छे, माया मेढाना शिगडा जेवी छे, तथा लोज कर्दमना रंग जेवो छे

४८–४९ जेना उदयथी सर्वविरतिरूप प्रत्याख्याननु आछादन थाय, पण लेशमात्र प्रत्याख्यान (त्यागवृत्ति होय, तेने प्रत्याख्यानीय पाप कर्म कहीए. एना क्रोध, मान, माया अने लोज ए चार नेद छे. ए चार मास सुधी कायम रहे, सर्वविरतिरूप चारित्रनो घात करे, तथा अते मनुष्यनी गतिनी प्राप्ति करावे छे. ए क्रोध, रेतीनी रेखा जेवो छे, मान काष्टना थांजला जेवो छे माया वृषजना मूत्रनी रेखा जेवी छे, अने लोज काजलना रग जेवो छे.

४७–५१ जेना उदयथी चारित्र धारण करनारने थोडुक दीपे, एटले महात्यागी महात्माओ पण इष्ट अनिष्ट शब्दादि विषयो पामीने कंइक रुचि अरुचि जावने धारण करे, (आ कषाय चारित्रने दुषित करे) तेने सञ्वलन पापकर्म कहीए पना पण क्रोध मान,माया अने लोज ए चार जेद छे. ए पदर दिवस सुधी कायम रहे छे संपूर्ण शुद्ध यथाख्यात चारित्रने आवरण करे, अने देवगतिनी प्राप्ति करावे छे ए क्रोध पाणीनी रेखा जेवो छे, मान नेतरना थांजला जेवा छे, माया वंशनी छाल जेवी छे, अने लोज हलदरना रंग जेवो छे

एवी रीते चार चार जेदे चार कषाय कहेतां सोळ कषायनु वर्णन कह्युं हवे नव नोकषाय कहे छे जे कषायने सहचारी होय, ते नोकषाय

५४–५७ जेना उदयथी एक वस्तु निमित्ते तथा बीजी परनिमित्ते, ए बे प्रकारथी हास्य, रति, अरति, शोक, नय तथा डुगंडानी उत्पत्ति थाय, तेने हास्यषट्करूप पापकर्म कहीए एवं सत्तावन्न.

५८ जेना उदयथी स्त्री नोगववानी ड्डा थाय, तेने पुरुषवेदरूप पापकर्म कहीए, एने तृणना अग्निनी उपमा ले.

५९ जेना उदयथी पुरुष नोगववानी ड्डा थाय, तेने स्त्रीवेदरूप पापकर्म कहीए; एने बुणीना अग्निनी उपमा ले.

६० जेना उदयथी स्त्री तथा पुरुष ए बन्नेने नोगववानी अनिलाषा थाय, तेने नपुंसकवेद रूप पापकर्म कहीए एने नगरदाहनी उपमा ले.

६१–६२ जेना उदयथी तिर्यचनी गति तथा तिर्यचनी आनुपूर्वीनी प्राप्ति थाय, ते (तिरियडुग क०) तियग्द्विक, एटले तिर्यचद्विक नामकर्म कहेवाय ॥ १८ ॥

इग-वि-ति-चउ-जाईउ, कुखगइ उव-
घाय हुंति पावस्स ॥ अपसत्थं वणचऊ,
अपढम-संघयण-संठाणा ॥ १९ ॥

गाथा १९ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

इग–एकेंद्रिय जाति
वि–बेंद्रिय जाति
ति–तेंद्रिय जाति
चउ–चतुरिंद्रिय जाति
जाइओ–जातिओ
कुखगइ–अशुभ विहायोगति
उवघाय–उपघात
हुंति–होय छे
पावस्स–पापना
अपसत्थं–अप्रशस्त
वणचऊ–वर्णचतुष्क
अपढम–अप्रथम (पहेला सिवायना)
संघयण–संघयण
संठाणा–संस्थान

विस्तारार्थ –(इगवितिचउजाइओ के०) एक-द्वित्रिचतुर्जातयः, एटले जे जेना उदयथी पृथ्वी-कायादिक पांच स्थावरनी जातिना शरीरनी प्राप्ति थाय ते एकेंद्रिय जातिरूप पापकर्म कहेवाय

६४ जेना उदयथी शञ्ख प्रमुख जीवोनी जातिना शरीरनी प्राप्ति थाय छे, ते बेंद्रिय जाति रूप पापकर्म कहेवाय

६५ जेना उदयथी जू, माकम्हादिक जातिना शरीरनी प्राप्तिथाय छे, ते तेंद्रिय जातिरूप पापकर्म कहेवाय

६६ जेना उदयथी वृश्चिकादिक जातिना शरीरनी प्राप्ति थाय छे, ते चतुरिंद्रिय जातिरूप पापकर्म कहेवाय

६७ जेना उदयथी ऊंट अथवा गधेमानी पेठे नरसी गतिनी प्राप्ति थाय छे, ते (कुखगइ के०) कुखगति', एटले अशुन विहायोगति नामकर्म कहेवाय

६८ जेना उदयथी पोताना जीन, दांतहरस, रसोली प्रमुख अवयवे करी पोतेज हणाय छे, ते (उवघाय के०) उपघात, एटले उपघात ।मकर्म कहेवाय

६९–७२ जेना उदयथी चार अशुभ वर्णादिक एटले कालो रंग अने नीलो रंग, बे अशुभ वर्ण; दुरभिगंध, ते अशुभ गंध, तीखो रस ने कटुक रस, ए बे अशुभ रस, गुरु, खर, शीत तथा लूखो ए चार अशुभ फरस, ए सर्व मलीने नव अशुभ थाय, पण सामान्ये चार गणीए, एओनी प्राप्ति थाय छे, ते (अपसत्थ वणचउ के०) अप्रशस्तं वर्णचतुष्क, एटले अप्रशस्त वर्णचतुष्क नामे पापकर्म कहेवाय

(अपढमसंघयणसंठाणा के०) अप्रथमसंहनसंस्थाने, ७३–७७ जेना उदयथी छ संघयण माना प्रथम संघयण विना पांच संघयणनी प्राप्ति थाय छे, जेना बे पासा मर्कटबंध उपर पाटो, ए बे होय, पण वज्र ते खीली न होय, तेने ऋषभनाराच कहे छे, जेने केवल मर्कटबंधज हो, पाटो तथा खीली न होय, तेने

नाराच कहे छे. जेने एक पासे मर्कटबंध होय, तेने अर्धनाराच कहे छे, ज्यां मांहोमांहे हाड़कांने एक खीलीनो बंध होय, तेने कीलिका कहे छे, अने जे खीली विना मांहोमांहे उखलमां रहेला मुसलनी पेठे अमस्तां अफकी रह्यां होय, तेने छेवठो कहे छे ए पाच संघयणनी जेणे करी प्राप्ति थाय छे, ते अप्रथम संघयणरूप नामकर्म कहेवाय

७०–७२ जेना उदयथी छ संस्थानमांना पहेला संस्थान विना बीजां पांच संस्थाननी प्राप्ति थाय छे, तेमां जे वट वृक्षनी पेठे नाभिनी उपर सुलक्षण युक्त तथा नाभिनी नीचे निर्लक्षण युक्त होय, तेने न्यग्रोध परिमंडल संस्थान कहे छे; जे नाभिनी नीचेनुं अंग सारुं अने नाभिनी उपरनुं अंग नरसुं होय, तेने सादि संस्थान कहे , जे उदर प्रमुख लक्षणोपेत अने हाथ. पग,

माथुं, कटि [illegible] छे.
स्थान कहे छे [illegible]
प्रमाणोपेत [illegible] तेने
कुब्ज संस्थान [illegible]
होय, तेने हुंडक [illegible]
ननी प्राप्ति थाय छे [illegible] संस्थानरूप
नामकर्म कहेवाय [illegible] सर्वाने (पा-
वस्य के०) [illegible] ना व्याशी
प्रकार (हुंति के०) [illegible] छे ॥ १९ ॥

हवे [illegible] कहे छे—

थावरसुहुम[illegible] साहारणमथि[illegible]
मसुभदुभगा[illegible] इयसर

क
ते
ा-
ां
प्र
मे
ये
नो
लो
नाम-
अल-
मं कहे-
नादेया-
स्वरनी
प्राप्ति
हेवाथ

गाथा २० मीना त्रुटा शब्दना अर्थ.

थावर-स्थावर	दुभगाणि-दुर्भाग्य.
सुहुम-सूक्ष्म	दुस्सर-दुःस्वर
अपज्ज-अपर्याप्त	अणइज्ज-अनादेय.
साहारण-साधारण	अजस-अयश.
अथिर-अस्थिर	थावरदसग-स्थावरदशक
असुभ-अशुभ	विवज्जत्थ-विपरीतार्थ.

विस्तारार्थ.-(थावरसुहुमअपज्जं के०) स्थावरसूक्ष्मापर्याप्त, एटले जेना उदयथी स्थावरपणुं प्राप्त थाय, तेथी जो तापादिके पीडाय, तोपण त्यांथी खसी शकाय नहीं, ते प्रथम स्थावर नामकर्म कहेवाय जेना उदये दृष्टिना अगोचर एवा सर्व लोकमां व्यापी रहेला सूक्ष्मपणानी प्राप्ति थाय, ते पण पृथिव्यादिक पांचज जाणवा, ते बीजुं सूक्ष्म नामकर्म कहेवाय. जेना उदयथी स्वयोग्य पर्याप्ति पूरी कर्या विनाज पामे, ते त्रीजुं अपर्याप्त नामकर्म कहेवाय.

जेना उदयथी अनन्त जीव वच्चे एक औदारिक शरीरनी प्राप्ति थाय, एवी निगोदावस्था ते चोथुं (साहारण के०) साधारण, एटले साधारण नामकर्म कहेवाय. जेना उदयथी शरीरमां दंतादिक अवयव अस्थिर होय, ते पांचमु (अ थिरं के०) अस्थिरं, एटले अस्थिर नामकर्म कहेवाय (असुजदुजगाणि के०) अशुजदुर्जाग्ये एटले जेना उदयथी नाजिनी नीचेनां अंगोनो जाग सारो न होय, पादादिकने स्पर्शे आगलो प्राणी रोष करे, ते माटे ते बहुं अशुज नामकर्म कहेवाय जेना उदयथी सर्व लोकने अलखामणो लागे, ते सातमु दुर्जाग्य नामकर्म कहेवाय (दुस्सरणाइज्जजस के०) दुस्वरानादेयायश , एटले जेना उदयथी काकादिकना स्वरनी पेठे कानने कटुक लागे, एवा स्वरनी प्राप्ति थाय ठे, ते आठमुं दुस्वर नामकर्म कहेवाय.

गाथा २० सीना जुदा शब्दना अर्थ.

थावर-स्थावर	दूभगाणि-दुर्भाग्य.
सुहुम-सूक्ष्म.	दुस्सर-दुःस्वर
अपज्ज-अपर्याप्त	अणाइज्ज-अनादेय.
साहारण-साधारण	अजस-अयश.
अथिर-अस्थिर	थावरदसग-स्थावरदशक
असुभ-अशुभ	विवज्जत्थ-विपरीतार्थ.

विस्तारार्थ.-(थावरसुहुमअपज्जं चे०) स्थावरसूक्ष्मापर्याप्त, एटले जेना उदयथी स्थावरपणु प्राप्त थाय, तेथी जो तापादिके पीडाय, तोपण त्यांथी खसी शकाय नहीं, ते प्रथम स्थावर नामकर्म कहेवाय. जेना उदये दृष्टिना अगोचर एवा सर्व लोकमां व्यापी रहेला सूक्ष्मपणानी प्राप्ति थाय, ते पण पृथिव्यादिक पांचज जाणवा, ते बीजुं सूक्ष्म नामकर्म कहेवाय. जेना उदयथी स्वयोग्य पर्याप्ति पूरी कर्या विनाज ॰॰ पामे, ते त्रीजुं अपर्याप्त नामकर्म कहेवाय.

जेना उदयथी अनंत जीव वच्चे एक औदारिक शरीरनी प्राप्ति थाय, एवी निगोदावस्था ते चोथु (साहारण के०) साधारण, एटले साधारण नामकर्म कहेवाय जेना उदयथी शरीरमां दंतादिक अवयव अस्थिर होय, ते पांचमु (अथिरं के०) अस्थिरं, एटले अस्थिर नामकर्म कहेवाय (असुजदुजगाणि के०) अशुजदुर्जाग्ये एटले जेना उदयथी नाजिनी नीचेनां अंगोनो जाग सारो न होय, पादादिकने स्पर्शे आगलो प्राणी रोष करे, ते माटे ते उहुं अशुज नामकर्म कहेवाय जेना उदयथी सर्व लोकने अलखामणो लागे, ते सातमु दुर्जाग्य नामकर्म कहेवाय (दुस्सरणाइज्जजस के०) दुःस्वरानादेयायश', एटले जेना उदयथी काकादिकना स्वरनी पेठे कानने कटुक लागे, एवा स्वरनी प्राप्ति थाय ते, ते आठमुं दुःस्वर नामकर्म कहेवाय.

जेना उदयथी लोकने विषे तेनुं वोलवुं कोइ मान्य करे नहीं, ते नवमुं अनादेय नामकर्म कहेवाय जेना उदयथी लोकमां अपकीर्त्ति थाय, पण कोइ यश वोले नहीं, ते दशमुं अयश नामकर्म कहेवाय

एवी रीते आ कह्युं जे (थावरदसगं के०) स्थावरदशक, एटले स्थावरदशक ते पुण्यतत्त्वमां कहेला त्रस दशकथी (विवज्जत्थं के०) विपर्ययार्थ, एटले विपरीतार्थ जाणी लेवुं. ॥ २० ॥

॥ इति पापतत्त्वविचार. समाप्तः ॥



हवे आश्रवतत्त्व वेतालीश प्रकारे कहे छे–

इंदिअ-कसाय-अव्वय,-जोगा पंच चउ पंच तिन्नि कमा ॥ किरिआउ पणवीसं, इमा उ ताउ अणुक्कमसो ॥ २१ ॥

१ कोइ ठेकाणे "इमाउ ताओ" छे, त्यां इमाउ एटले आ, अने ताओ एटले ते, ए मुजब अर्थ करवो

गाथा २१ मीना त्रुटा शब्दना अर्थ.

इंदिय–इंद्रिय
कसाय–कषाय
अव्वय–अव्रत.
जोगा–योग.
पंच–पांच
चउ–चार
पंच–पांच.
तिन्नि–त्रण
कमा–अनुक्रमे.
किरिआओ–क्रियाओ.
पणवीस–पचीश.
इमा–एम
उ–वली.
ताओ–कहेली छे
अणुक्कमसो–अनुक्रमे.

विस्तारार्थः–जेम जे मार्गे करी तलावमां पाणी आवे छे, तेने नालुं कहीए, तेम जेणे करी आत्माने विषे शुभ अशुभ कर्मोनुं आववु थाय छे, तेने आश्रव कहीए, ते (इंदियकसायअव्वय-जोगा के०) इंद्रियकषायाव्रतयोगाः, एटले इंद्रिय, कषाय, अव्रत, अने योग ए चारे (कमा के०) क्रमात्, एटले अनुक्रमे (पंचचउपंचतिन्नि के०) पंच चत्वारः पंच त्रय., एटले पांच चार पांच अने त्रण संख्यारूप छे, ते विस्तारथी आ प्रमाणे श्रोत्र,

चक्षु, नासिका, जिह्वा तथा स्पर्शन, ए पांच इंद्रियो छे, क्रोध, मान, माया, ने लोज, ए चार कषाय छे, प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन अने परिग्रह ए पांच अव्रत छे मनोयोग, वचनयोग, तथा कायथोग ए त्रण योग छे, ए अनुक्रमे सत्तर नेद थया, (उ के०) तु, वली (किरिआउ के०) क्रिया, एटले पापक्रियाउ (पणवीस के०) पंचविंशति., एटले पचीश छे. (ताउ के०) ता, एटले ते क्रियाउ (इमा के०) इमा., एटले आ आगळ कहेवाली एवी (अणुक्कमसो के०) अनुक्रमश., एटले अनुक्रमे करी जाणवी एम सर्व मळी बेतालीश नेद आश्रवतत्त्वना जाणवा ॥ २१ ॥

ए आश्रव बे प्रकारे छे. एक इव्याश्रव अने बीजो नावाश्रव जे जीवना शुनाशुन परिणाम, ते नावाश्रव कहीए, एटले इंडियना उपयोगरूप

परिणाम तेमज कषाय, अव्रत तथा क्रियारूप परिणाम ते सर्व जावाश्रव जाणवो, तथा योग ते मन, वचन अने कायाना आधारजूत कर्म लेवानुं कारण एवुं जे आत्म प्रदेशनुं कंपनपणुं, तेने जावाश्रव कहीए. तेमज ए जावाश्रवनुं निमित्त पामीने तेणे करी जीवने अष्टविध कर्मनो आश्रव थाय छे, तेने द्रव्याश्रव कहीए

हवे पचीश क्रियाउं कहे छे–

काइअ अहिगरणीया, पाउसिया पारितावणी किरिया ॥ पाणाइवायारंभिअ, परिग्गहिया मायवत्तीआ ॥२२॥

गाथा २२ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

काइअ–कायिकी.	पाणाइवाय-प्राणातिपातिकी
अहिगरणीया–अधिकरणीकी.	आरंभिअ–आरंभिकी
पाउसिया–प्राद्वेषिकी.	परिग्गहीआ–पारिग्रहिकी
पारितावणी–पारितापनिकी.	मायत्तीवअ–मायाप्रत्ययिकी
किरिया–क्रिया. (ए शब्द बधाने लगाडवो)	

विस्तारार्थ—कायाने अजयणाए प्रवर्त्तावर्ता जे क्रिया लागे, ते पहेली (काइअ के०) कायिकी क्रिया ते बे प्रकारे छे, एक मिथ्यादृष्टि अथवा सम्यग्दृष्टि अविरतिवंतनी उठवा बेसवा आदि कर्मबंधना हेतुरूप सावद्य क्रिया ते अनुपरत कायिकी क्रिया, अने बीजी अशुभ योगवाळाने इष्ट अनिष्ट विषय प्राप्त थतां रति अरति पामवा रूप इंद्रिय संबंधी तथा अनिंद्रिय ते अशुभ मन संबंधी मोक्ष तरफ दुर्व्यवस्थित प्रमत्तमुनिनी क्रिया, ते दुष्प्रयुक्त कायिकी क्रिया कहेवाय. खडगादिक अधिकरणे करी जे जीवोनुं हनन थाय, अथवा जेनो वडे आत्मा नरकादि गतिनो अधिकारी थाय, ते बीजी (अहिगरणीया के०) अधिकरणीकी क्रिया. तेमां प्रथम बनावी राखेलां खड्गादिकनां अंगने परस्पर जोडी राखे, ते संयोजनाधिकरणिकी, अने शस्त्री

नवांज अधिकरण (शस्त्र) बनाववां, ते निवर्तना-
धिकरणीकी एम बे प्रकारे छे. उत्कृष्ट कोधादि
द्वेष करवाथी उत्पन्न थयेली क्रिया एटले जीव
तथा अजीव ते पोताने पीडा करतां कांटा प-
थरा आदि उपर द्वेषनी चिंतवनो करवी, ते बे
भेदे त्रीजी (पाउसिया के०) प्राद्वेषिकी क्रिया.
पोताने तथा परने जे परिताप उपजाववो, ते
स्व अने पर एम बे भेदे चोथी (पारितावणी के०)
पारितापनिकी क्रिया. एकेंद्रियादिक जीवने-ह-
णवो तथा जे हणाववो, ते पांचमी (पाणाइवाय
के०) प्राणातिपातिकी क्रिया पण स्वहस्तिकी
अने परहस्तिकी, एम बे भेदे छे. कर्षण प्रमुख-
नी जे उत्पत्ति करवी, अथवा कराववी, तथा
चित्रकर्म तथा कोरणी आदि क्रियाथी जीव
अजीवनो घात थाय, तेवी क्रिया ते छठी (आ-
रंभिअ के०) आरंभिकी क्रिया जीवारंभिकी

तथा अजीवारंजिकी, एम बे नेदे जाणवी. दास, दासी, पशु, धन, धान्यादिक नवविध परिग्रह मेलवतां तथा तेनी उपर मोह करतां जे क्रिया लागे ते सातमी (परिग्गहिया के०) परिग्रहिकी क्रिया जीवपारिग्रहिकी तथा अजीवपारिग्रहिकी, एम बे नेदे ठे. मायाए करी जे बीजाने ठगवुं, अतर दुष्ट नाव ने वहारथी शुद्ध देखामवो, तथा जुठी साक्षी खोटा लेख लखी आपवारूप आत्मनाववंचनमाया तथा परनाववंचनमाया, ए नेदे आठमी (मायावत्तीअ के०) मायाप्रत्ययिकी क्रिया. मूलमां जे (किरिआ के०) क्रिया शब्द ठे, ते उक्त प्रकारे सर्व शब्दोने जोमवो. आ गाथा तथा आगलनी बे गाथामां प्राकृत पदोनां संस्कृत पदो प्रगट ठे. तेज ग्राह्य ॥ २२ ॥

मिच्छादंसणवत्ती, अप्पच्चक्खाणी य
दिट्ठि पुट्ठि अ ॥ पाडुच्चिअ सामंतो,-
वणीअ नेसत्थि साहत्थी ॥ २३ ॥

गाथा २३ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

मिच्छादंसणवत्ती-मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी
अपच्चक्खाणी-अप्रत्याख्यानिकी
य-अने
दिट्ठि-दृष्टिकी
पुट्ठि-स्पृष्टिकी अथवा पृष्टिकी
य-अने.
पाडुच्चिअ-प्रातित्यीक.
सामंतोवणिअ-सामंतोपनीपातिकी.
नेसत्थि-नैसृष्टिकी.
साहत्थी-स्वाहस्तिकी

विस्तारार्थः–जिनवचन अणसद्दहतो थको जे विपरीत प्ररूपणा करतां क्रिया लागे, तेमां स्वपदार्थने सत् माने, पण तेना केटलाक गुणपर्यायने न्यूनाधिक माने, जेमके देहव्यापी आत्माने अंगुठाना पर्वप्रमाण (न्यून) मानवुं, तथा सर्वव्यापी (अधिक)पणे मानवु, ते ऊनातिरिक्त

तथा आत्मा छेज नही. एम सर्वथा विछेद माने, ते तद्व्यतिरिक्त मिथ्या एम बे ज्ञेदे नवमी (मिछादंसणवत्ती के०) मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रिया अविरतिए करी पच्चरकाण कीधा विना जे सर्व वस्तुनी क्रिया लागे, ते दशमी (अप्पच्चरकाणीय के०) अप्रत्याख्यानिकी क्रिया जीव तथा अजीव ज्ञेदे बे प्रकारे छे. (य के०) च, वली कौतुके करी अश्व, पाषाण, प्रमुखने जोवुं, ते अग्यारमी (दिट्ठि के०) दृष्टिकी क्रिया जीव तथा अजीव ज्ञेदे बे प्रकारनी छे रागने वशे करीने जे पुरुष, स्त्री, गाय, बलद, वस्त्र प्रमुख सुकुमार वस्तुने स्पर्श करवो, तेथी जे क्रिया लागे, अथवा कोइ संदेह उत्पन्न थयाथी पूछवुं, तेथी जे क्रिया लागे, ते बारमी (पुट्ठि के०) स्पृष्टिकी अथवा पृच्छिकी क्रिया. जीव तथा अजीव ज्ञेदे बे प्रकारनी छे. (य के०) च, वली जीव तथा अजीव

आश्रयी जे राग द्वेष थाय छे, एटले बीजाने घेर हस्ती, घोडा, वस्त्र, भूषण प्रमुख देखी द्वेष धरे, जे ए वस्तु एनी पासे केम ? एवुं चिंतवी कर्मबंध करे, ते तेरमी (पाडुचिआ के०) प्रातित्यकी क्रिया जीव तथा अजीव भेदे बे प्रकारे छे पोताना अश्व तथा वस्त्र प्रमुखने जोवा माटे आवेला लोकोने प्रशंसा अथवा निंदा करतां जोइने जे हर्ष अथवा द्वेष करवो, अथवा दूध, दधि, घृत, तेल प्रमुखनुं भाजन उघाडुं मूक्याथी तेमां जे त्रस जीव आवी पडे, ते चौदमी (सामंतोवणीआ के०) सामंतोपनिपातिकी क्रिया जीव तथा अजीव भेदे बे प्रकारनी छे राजादिकोना आदेश थकी यंत्र, शस्त्रादिकनुं जे आकर्षण करवुं, अथवा शस्त्र घडाववुं, वाव्य कूवानुं खनन कराववुं, ते पदरमी (नेसत्थि के०) नैशस्त्रिकी (नैसृष्टिकी) क्रियापण जीव संबंधी तथा

तथा अजीव संबंधी, एम बे प्रकारे छे. पोताने हाथे अथवा श्वानादिक जीवथी तथा शस्त्रादिक अजीवथी जे शशकादिक जीवने मारवा, अथवा कोइ पुरुष अत्यंत अभिमान करीने क्रोधित चित्तवंत थको जे काम पोताना नोकरो करी शके, ते काम पोताना हाथथी करे, ते सोलमी (साहत्थी के०) स्वाहस्तिकी क्रिया जीव तथा अजीव भेदे बे प्रकारनी छे

आणवणि विअरणीआ, अणभोगा अणवकंखपच्चइआ ॥ अन्ना पओग समुदा,-ण पिज्ज दोसेरिआवहिआ॥२४॥

गाथा २४ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

आणवणि–आज्ञापनिकी, आनयनिकी.	अन्ना–अपरा, बीजी
विआरणिआ–विदारणिका	पओग–प्रयोगिकी
अणभोगा–अनाभोगिकी	समुदाण–समुदानकी.
अणवकंखपच्चइआ–अनवकांक्षाप्रत्ययिकी	पिज्ज–प्रेमिकी
	दोस–द्वेषिकी.
	इरिआवहिआ–इर्यापथिकी.

विस्तारार्थ.—जीव तथा अजीवने कांइ आज्ञा करवी, अथवा तेउनी मारफते कांइ अणाववुं, तेथी जे क्रिया लागे, ते सत्तरमी (आणवणि के०) आज्ञापनिकी आनयनिकी क्रिया जीव तथा अजीव भेदे बे प्रकारनी जाणवी.

जीव तथा अजीवनुं जे विदारण करवुं, भांगवुं, ते अढारमी (विआरणिआ के०) वैदारणिकी क्रिया जीव तथा अजीव भेदे बे प्रकारनी जाणवी अथवा वैतारणिकी क्रिया (ठगवारूप क्रिया) पण एवीज रीते बे भेदे जाणवी उपयोग विना शून्यचित्ते करी कांइ वस्तु लेवी,अथवा मूकवी, तथा उठवुं, बेसवुं, गमनादिक करवुं ते उंगणीशमी (अणभोगा के०) अनाभोगिकी क्रिया पण एक उपयोगरहित अप्रमार्जित वस्त्रादि लेवा मूकवारूप अनायुक्तादान क्रिया तथा उपयोगरहित प्रमार्जनादि करी लेवा मूकवारूप

अनाभुक्तप्रमर्जिना क्रिया, एम बे भेदे छे. पोताना तथा परना हितनी आकांक्षा रहित आ लोक तथा परलोकथी जे विरुद्ध कार्यनु आचरण करवुं, ते वीशमी (अणवकखपच्चइआ के०) अनवकांक्षाप्रत्ययिकी क्रिया ते स्वअनवकांक्षा अने पर अनवकांक्षा, एम बे प्रकारे छे हवे (अन्ना के०) अन्या, एटले पूर्वे वीश कही, तेथी बीजी. मन, वचन, तथा कायाना शुभाशुभ व्यापाररूप जे क्रिया, तेमां प्रवर्त्तन करवुं, पण निवर्त्तवुं नहीं, ते एकवीशमी (पओग के०) प्रायोगिकी क्रिया. कोइक एवु मोटुं पाप करे, के जेथकी आठे कर्मनु समुदायपणे ग्रहण थइ जाय, ते बावीशमी (समुदाण के०) सामुदायिकी क्रिया अथवा जेना वडे विषय ग्रहण कराय, ते समादान क्रिया पण कहेवाय माया तथा लोभ वडे ... करवुं, एटले प्रेमनां वचन एवां बोले,

के जेथकी रागनी अधिक वृद्धि थाय, ते त्रेवीश मी (पिज्ज के०) प्रेमिकी क्रिया. क्रोध तथा मान वडे एवां गर्वित वचन बोले, के जेथकी आगलाने द्वेष उपजे ते चोवीशमी (दोसे के०) द्वेषिकी क्रिया अने केवल काययोगनुं जे प्रवर्त्तावचुं, तेणे करी जे क्रिया लागे, ते पचीशमी (इरिआवहिआ के०) इर्यापथिकी क्रिया कहीए ए इरियापथिकी क्रिया अप्रमत्त साधुने, तथा केवलिने पण होय, एटले केवलिने केवल काय योगथी उपजे ठे, तथा समिति प्रमुख साचवतां पण साधुने दोषनुं पडिक्कमवुं, ते पण इर्यापथिकी क्रिया आ क्रिया वध्यमान तथा वेद्यमान एम वे नेदे ठे, तेमां प्रथम समये वध्यमान अने बीजे समये वेद्यमान जाणवी ॥२४॥

ए पचीश क्रियानुं स्वरूप कहे ठे. १ कायाए करीने जे थाय, ते कायिकी क्रिया २ जीव

पोताना आत्माने नरकादिकमां जावाने वास्ते अधिकारी करे, ते अधिकरणिकी क्रिया. ३ जेमां प्रकर्षे अधिक दोष (द्वेष) होय, ते प्राद्वेषिकी क्रिया. ४ जीवने परिताप आपवाथी जे क्रिया उत्पन्न थाय, ते पारितापनिकी क्रिया. ५ प्राणीकी उने विनाश करवानी क्रिया, ते प्राणातिपातिकियो. ६ पृथिवी आदिक ठ कायने उपघात करवानु जे क्रियामां लक्षण होय, ते आरंभिकी क्रिया. ७ विविध उपाये करी धन उपार्जन करवामां तथा धन रक्षण करवामां जे मूर्छाना परिणाम, तेथी उत्पन्न थयेली जे क्रिया ते पारिग्रहिकी क्रिया. ८ मायाज ठे प्रत्यय एटले हेतु जेनी, एटले मायानी ज्यां प्रधान प्रवृत्ति ठे, ते मायाप्रत्ययिकी क्रिया. ए मिथ्यात्वज ठे प्रत्यय एटले कारण जेनुं, ते मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रिया. १० संयमना विघातकारक जे कषाय,

तेना उदयथी प्रत्याख्याननुं न करवुं, ते अप्र-
त्याख्यानिकी क्रिया. ११ रागादि कलुषित चित्त
करी जे जीव अजीवनुं देखवुं ते दृष्टिकी क्रिया.
१२ राग, द्वेष अह मोह संयुक्त चित्ते करीने जे
स्त्री आदिकना शरीरनो स्पर्श करवो, ते स्पृ-
ष्टिकी क्रिया १३ पूर्वे अंगीकार करेला पापना
उपादान कारणरूप जे अधिकरण, तेनी अपे-
क्षाए जे क्रिया उत्पन्न थाय, ते प्रातित्यकी
क्रिया १४ (समतात् के०) सर्व दिशाउंथी (उपनि-
पात के०) आववुं एटले जे स्थानमां भोजना-
दिकने लीधे सर्व दिशाउंथी स्त्रीआदिक जीवो-
नु आववुं थाय, ते समंतोपनिपात, तेणे करी
जे क्रिया उत्पन्न थाय, ते सामंतोपनिपातिकी
क्रिया. १५ जे परोपदिष्ट पापमा घणोक काल
प्रवर्त्तवुं, ते पापनी भावथी अनुमोदना करवी,
ते नैसृष्टिकी क्रिया. १६ पोताना हाथथी जे

क्रिया कराय, ते स्वाहस्तिकी क्रिया. १७ श्री अर्हत जगवंतनी आज्ञा उल्लघन करी पोतानी बुद्धिथीजीवाजीवादि पदार्थोनी प्ररूपणा द्वारा जे क्रिया, ते आज्ञापनिकी क्रिया. १८ बीजानां अछतां मार्ग आचरणने प्रकाश करी तेनी पूजानो नाश करवो, तेथी उत्पन्न थयेली जे क्रिया ते वेदारणिकी क्रिया. १९ (आभोग के०) उपयोग तेथकी जे विपरीत होय, तेने अनाजोग कहीए; तेणे करीने उपलक्षित जे क्रिया, ते अनाजोगिकी क्रिया २० पोतानी तथा पारकी जे अपेक्षा करवी, तेनु नाम अवकांक्षा छे, ते थकी जे विपरीत होय, तेने अनवकांक्षा कहीए, तेज छे (प्रत्यय के०) कारण जेनुं एटले परमेश्वरे कहेली जे करवा योग्य विधिउं, ते विधिउं मांहेली कोइ कोइ पण विधिउं पोताने अथवा कोइपरजीवने हितकारी छे, ते विधिउंमां

प्रमादना वशथकी अनादर करवो, ते अनवकांक्षाप्रत्ययिकी क्रिया. २१ प्रयोग ते एक तो दोमवुं, चालवुं इत्यादि कायानो व्यापार, बीजुं हिंसाकारी कठोर जूठादिक बोलवुं, ते वचननो व्यापार, त्रीजो पराभिद्रोह, ईर्ष्या, अभिमानादिक मननो व्यापार, ए त्रणनुं जे करवु, ते प्रायोगिकी क्रिया २२ जेणे करी विषय ग्रहण करीए, ते समादान इंद्रिय छे, तेनो जे देशथी अथवा सर्वथी उपघातरूप व्यापार, ते समादान क्रिया अथवा सामुदायिकी क्रिया. २३ (प्रेम के०) माया अने लोभ तेणे करी जे थाय, ते प्रेमिकी क्रिया २४ (द्वेष के०) क्रोध अने मान, तेणे करी जे थाय, ते द्वेषिकी क्रिया. २५ चालवाथी जे क्रिया थाय, ते इर्यापथिकी क्रिया ए क्रियाउ माहेली केटलीएक क्रियाउ आपसमा देखाय छे, तोपण सरखी समजवी नहीं

हवे आ पचीस क्रिया कोने कया गुणस्थान सुधी होय ते कहे छे–

पेली कायिकी सामान्यपणे कषायोदयवंत सर्व काययोगी जीवोने होय, विशेषपणे अनुपरतकायिकी अविरत सुधी होय, अने दुष्प्रयुक्त कायिकी अनुपयोगी मुनिने पण होय, बीजी अधिकरणिकी बादर कषायोदयी जीवने होय, माटे नवमा गुणठाणा सुधी होय, त्यां देहपण अधिकरण थाय छे. त्रीजी प्राद्वेषिकी क्रोधकषायोदयीने (९ मा गु० सुधी) होय. चोथी पारितापनिकी क्रिया बादर कषायोदयी जीवने (९ मा गुण सुधी) होय. पांचमी प्राणातिपातिकी अविरत जीवोने (५ मा गु० सुधी) होय, आ क्रिया हणेलो जीव मरण पामे, तोज लागे, अन्यथा नही. छठी आरंभिकी क्रिया सर्व प्रमादयोगी जीवोने (६ ठा गु० सुधी) होय.

सातमी पारिग्रहिकी परिग्रहनो अत्यागी जीव-
ने (५मा गु० सुधी) होय आठमी मायाप्रत्य-
यिकी सातमा गुणठाणा सुधी होय. नवमी
मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी समकित मोहनीय शिवा-
य दर्शनढकना उदयथी (त्रीजा गु० सुधी) होय.
दशमी अप्रत्याख्यानिकी अविरतिवंतने (चोथा
गु० सुधी) होय. अग्यारमी दृष्टिकी सकषायी
चक्षुरिंद्रियवाळा जीवने १० मा गु० सुधी होय.
१२ मी स्पृष्टिकी सरागी जीवने १० मा गु० सुधी
होय चोदमी सामंतोपनिपातिकी आरंभादिक-
ना अत्यागी जीवने पांचमा गु० सुधी होय
पंदरमी नैसृष्टिकी पण पूर्ववत् पांचमा गु० सुधी
होय. सोलमी स्वाहस्तिकी पण पूर्ववत ५ मा
गु० सुधी होय. सत्तरमी आज्ञापनिका पण ५
मा गु० सुधी होय. अढारमी वैदारणिकी बादर
कषायोदय सुधी होवाथी नवमा गु० सुधी छे.
ओगणीशमी अनाभोगिकी ज्ञानावरणीयना उ-
दयथी सकषायी जीवने १० मा गु० सुधी होय.

वीसमी अनवकांक्षाप्रत्ययिकी बादर कषायोदयप्रत्ययिक होवाथी ए मा गु० सुधी होय. एकवीसमी प्रायोगिकी शुभाशुभ सावध योगवाळाने ए मा गु० सुधी होय. बावीसमी समादान क्रिया इंद्रिय अव्रतवाळा जीवने ए मा गु० सुधी होय त्रेवीसमी प्रेमिकी लोजना उदयरूप होवाथी १० मा गु० सुधी छे चोवीशमी द्वेषिकी बादर कषायोदयवाळाने ए मा गु० सुधी छे, अने पचीशमी इर्यापथिकी ११–१२ अने १३ मा गु० वाळा अकषायी जीवने योगमात्रथीज होय छे. ए रीते १३ मा सिवाय २४ क्रिया कया जीवने कये गुणस्थाने होय, ते जाणवी.

ए पचीश क्रियाओ कही, ते पूर्वे कहेला सत्तर भेदो साथे मेळवतां आश्रवतत्त्वना बेंतालीश भेद थाय ॥ इति आश्रवतत्त्वं समाप्त ॥

॥ संवरतत्त्वना ५७ भेद कहे छे ॥

समिइगुत्तिपरिसहा, जइधम्मो भाव-णा चरित्ताणि ॥ पणतिडवीस दस-वार,-पंचभेएहिं सगवन्ना ॥-२५ ॥

गाथा २५ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

समिई-समिति.	ति-त्रण
गुत्ति-गुप्ति.	दुवीस-बावीश
परिसहा-परिसह.	दस-दश
जइधम्मो-यतिधर्म	बार-बार
भावणा-भावना	पंच-पांच
चरित्ताणि-चारित्र.	भेएहिं-भेदोए करीने.
पण-पांच.	सगवन्ना-सत्तावन.

विस्तारार्थः-जेणे करी नवां कर्मो आवतां रोकाय तेने संवर कहे छे. तेना बे भेद छे. एक द्रव्यसंवर, बीजो भावसंवर. तेमां नवां कर्मनु जे रोकावबुं, तेने द्रव्यसंवर कहीए, अने समिति

वीसमी अनवकांक्षाप्रत्ययिकी वादर कषायोदय-प्रत्ययिक होवाथी ए मा गु० सुधी होय. एकवीसमी प्रायोगिकी शुभाशुभ सावद्य योगवाळाने ए मा गु० सुधी होय बावीशमी समादान क्रिया इंद्रिय अव्रतवाळा जीवने ५ मा गु० सुधी होय त्रेवीसमी प्रेमिकी लोभना उदयरूप होवाथी १० मा गु० सुधी छे चोवीशमी द्वेषिकी वादर कषायोदयवाळाने ए मा गु० सुधी छे, अने पचीशमी इर्यापथिकी ११–१२ अने १३ मा गु० वाळा अकषायी जीवने योगमात्रथीज होय छे. ए रीते १३ मा सिवाय २४ क्रिया कया जीवने कये गुणस्थाने होय, ते जाणवी

ए पचीश क्रियाओ कही, ते पूर्वे कहेला सत्तर भेदो साथे मेळवतां आश्रवतत्त्वना बेंतालीश भेद थाय ॥ इति आश्रवतत्त्वं समाप्त ॥



जे सहन करवुं, ते परिसह कहेवाय, ते बावीश छे. यतिने जे अवश्य आचरवा योग्य होय, ते यतिधर्म कहेवाय, ते दश छे. मननी चंचलता निवारण करवा सारु जे भाववुं, ते भावना कहेवाय, ते बार छे. कर्मक्षय थवाने अर्थे अहींसादिक परिणामे करी जे यत्नादिकनुं आचरण, ते चारित्र कहेवाय, ते पांच छे एवी रीते सत्तावन भेदे करी संवरतत्त्व जाणीए ॥२५॥ हवे ए समिति प्रमुखना भेद विस्तारे कहेता थका प्रथम आ गाथाए करी पांच समिति तथा त्रण गुप्तिउं कहे छे–

अनुष्टुप वृत्तं ॥ इरिया भासेसणा-दाणे, उच्चारे समिईसु अ ॥ मणगु-त्ति वयगुत्ति, कायगुत्ति तहेव य ॥२६॥

प्रमुखे करी परिणामने पाम्युं जे शुद्ध उपयोग रूप द्रव्यपणुं, तेथी नावकर्मना रोधक आत्मानां परिणाम थाय ठे, तेने नावसंवर कहीए. तेमां (समिईगुत्तिपरिसहा के०) समितिगुप्तिपरिसहाः, एटले समिति, गुप्ति अने परिषह, तथा (जइधम्मो के०) यतिधर्मः, एटले साधुधर्म, तथा (नावणा के०) नावना, तथा (चरित्ताणि के०) चारित्राणि, एटले चारित्र, ते सर्व अनुक्रमे (पणतिडुवीसदसबारपचन्नेएहिं के०) पचत्रिद्वाविंशतिदशद्वादशपचन्नेदैः, एटले पांच, त्रण, बावीश, दश, बार, अने पांच नेदे करी (सगवन्ना के०) सप्तपचाशत्, एटले सत्तावन नेद संवरना थाय. ते विस्तारथी कहे ठेः—तेमां सम्यक प्रकारे जे चेष्टा करवी ते समिति कहेवाय, ते पांच ठे. योगनु जे गोपन करवुं, ते गुप्ति कहेवाय. ते त्रण ठे. सर्व प्रकारे निर्जराने अर्थे

जे सहन करवुं, ते परिसह कहेवाय, ते बावीश छे. यतिने जे अवश्य आचरवा योग्य होय, ते यतिधर्म कहेवाय, ते दश छे. मननी चंचलता निवारण करवा सारु जे जाववुं, ते जावना कहेवाय, ते बार छे. कर्मक्षय थवाने अर्थे अहीं सादिक परिणामे करी जे यत्नादिकनुं आचरण, ते चारित्र कहेवाय, ते पांच छे. एवी रीते सत्तावन जेदे करी संवरतत्त्व जाणीए ॥२५॥ हवे ए समिति प्रमुखना जेद विस्तारे कहेता थका प्रथम आ गाथाए करी पांच समिति तथा त्रण गुप्तिउ कहे छे–

अनुष्टुप वृत्तं ॥ इरिया जासेसणा-
दाणे, उच्चारे समिईसु अ ॥ मणगु-
त्ति वयगुत्ति, कायगुत्ति तहेव य ॥७६॥

गाथा २६ मीना लुटा शब्दना अर्थ.

इरिया–इर्यासमिति	अ–अने, वली
भासा–भाषासमिति	मणगुत्ति–मनगुप्ति.
इसणा–एषणासमिति.	वयगुत्ति–वचनगुप्ति.
आदाणे–आदाननिक्षेपणा-समिति	कायगुत्ति–कायगुप्ति
	तहेव–तेमज
उच्चारे–पारिष्ठापनिकासमिति	य–अने.
सुसमिईसु–समितिओमा	

विस्तारार्थः–गाथाना पूर्वार्द्धें करी पांच समितिनुं वर्णन करे छे तेमां (समिईसु के०) समितिषु, एटले सम्यक चेष्टा. तेमां १ जयणा राखी उपयोग सहित धुंसरा प्रमाण ३॥ हाथ भूमिका द्रष्टिए जोइने बीज, लीलोतरी, पाणी, त्रस जीवादिथी सचित्त भूमिने वर्जी जे चालवानी चेष्टा करवी, ते पहेली (इरिया के०) इर्या, एटले इर्यासमिति कहेवाय. तथा २ जे वचन सत्य होय, कहेवा योग्य होय, सत्य, असत्य,

मिश्र न होय, बुद्धि वडे विचारेल होय, मधुर होय, अल्प होय, प्रसगानुकूल गर्व रहित होय, कारादिथी होय, स्वपरहितकारी होय, मर्म रहित होय, इत्यादि मोक्षानुकूल सम्यक प्रकारे निरवद्य जाषा बोलवारूप जे चेष्टा करवी, ते बीजी (जासा के०) जाषा, एटले जाषासमिति कहेवाय. तथा सम्यक प्रकारे बेंतालीश दोष रहित निर्दोष आहार (वस्त्र, पात्र, वसती) संबंधी जे जिक्षानी गवेषणा करवी, तेनी जे चेष्टा ते त्रीजी (एषणा के०) एषणा, एटले एषणा समिति कहेवाय तथा ४ सम्यक प्रकारे पुंजी प्रमार्जी, आसन प्रमुखना आदान एटले ग्रहण करवानी जे चेष्टा करवी, तथा तेने निक्षेप एटले त्याग करवानी जे चेष्टा करवी ते चोथी (आदाणे के०) आदान, एटले आदाननिक्षेपणा समिति कहेवाय आ तेमाणे गुलमा

शब्द छे, ते कहेवाथी निक्षेप शब्द पण साथे लेवो. केनी पेठे? तो के जेम भीम शब्द कहेवाथी भीमसेन समजाय छे, तेम अहींयां पण जाणी लेवुं अने ५ परठववा योग्य जे मल मूत्रादिक वस्तु, तेने स्थंडिलभूमिकाने विषे उपयोगपूर्वक जे मूकवानी चेष्टा करवी, तथा सदोष तथा वधेलां आहार उपकरणादिकने परठववानी जे चेष्टा करवी, ते पांचमी (उच्चारे के०) उच्चारः, एटले उत्सर्ग समिति पारिष्ठापनिकासमिति कहेवाय. एवी रीते ए पांच समिति ते जाणवी (अ के०) च, हवे गाथाना उत्तरार्द्ध वडे त्रणगुप्तिनुं वर्णन करे छे—प्रथम (मणगुत्ति के०) मनोगुप्तिः, एटले मननुं गोपन करवुं, तेना त्रण भेद छे—तेमां अपध्याने करी उत्पन्न थयेली कल्पनाजालनो जे वियोग, ते अकुशलनिवृत्तिरूप पहेलो भेद, धर्मध्याने करी मध्यस्थपणानी

जे परिणति ते कुशलप्रवृत्तिरूप बीजो भेद, अने सर्वथा मनोयोग रोकवाथी केवली समुद्घातना अंतने विषे जे आत्मारामता थाय छे, ते योग-निरोधरूप त्रीजो भेद जाणवो. बीजी (वयगुत्ति के०) वचनगुप्ति. एटले, वचननुं गोपन करवुं तेना बे भेद छे—सर्वथा वचननो रोध करवाने अर्थे मौननो अभिग्रह धारण करीने हाथ प्र-मुखनी संज्ञा वडे कार्य करवुं, ते मौनावलंबिनी नामे पहेलो भेद. अने मौननो अभिग्रह धारण नहीं कर्या छतां याचना प्रमुख कार्य करती वेळाए मुखे मुहपत्ति दइने जे जयणाथी बोलवुं, ते वाग्नियमिनी नामे बीजो भेद जाणवो. अहीं उपर भाषासमितिमां तो केवल जयणाए बोल-वानुंज कह्युं छे, अने आ वचनगुप्तिमां तो एक सर्वथा वचननो रोध करवो, अने बीजुं जयणा-ए बोलवुं, एम जुदां जुदा बे स्वरूप देखाड्यां छे.



ए उपरथी वचनगुप्ति अने जाषासमिति ए बें-
उंमां एटलुं अंतर ढे, एम जाणवुं; (य के०) च,
अने (तहेव के०) तथैव, एटले तेमज त्रीजी
(कायगुत्ति के०) कायगुप्ति एटले कायानु गोपन
करवुं, तेना पण बे ज्ञेद ढे–उपसर्ग परिसह
आदि उत्पन्न थयाथी पण जे काया स्थिर रा-
खवी, अथवा चोदमे गुणठाणे योग निरोधाव-
स्थाए सर्वथा शरीरनी चेष्टानो त्याग करवो, ते
चेष्टानिवृत्तिरूप पहेलो ज्ञेद, अने शयन, आ-
सन प्रमुखने विषे सूत्रोक्त विधिए करी चेष्टानो
नियम करवो, एटले माथा तले हाथ घाली
गोठण संकोची, कूकमीनी पेठे पग पसरीने
सुवुं, ते यथासूत्रचेष्टानियमिनी नामे बीजो ज्ञेद
जाणवो. ए समिति अने गुप्तिना अर्थमां एटलुं
विशेष ढे, के सम्यक् प्रकारे चेष्टारूप जे प्रवृ-
त्ति करवी, ए समितिनुं लक्षण ढे, अने शुज

स्थानने विषे प्रवृत्ति करवी, तथा अशुभ स्थानथी निवर्त्तन थवुं, एम प्रवृत्ति तथा निवृत्तिरूप गुप्तिनुं लक्षण छे ए पांच समिति अने त्रण गुप्ति मली आठ प्रवचनमाता कहेवाय छे ते चारित्ररूप शरीरने उपजाववा तथा तेना पालन पोषण करवा माटे माता समान छे ॥ २६ ॥

हवे बावीश परिसह कहे छे

खुहा पिवासा सी-उण्हं, दंसा-चेला-रइ-त्थिओ ॥ चरिआ निसिहिया सिज्जा, अक्कोस वह जायणा ॥ २७ ॥

गाथा २७ मीना छूटा शब्दनो अर्थ.

खुहा–क्षुधापरिसह, भुख.	त्थिओ–स्त्री
पिवासा–पिपासा, तरस	चरिआ–चर्या, चालवु
सी–शीत, टाढ.	निसिहिया–नैषेधिकी.
उण्ह–उष्ण, ताप	सिज्जा–शय्या.
दंसा–दंश	अकोस–आक्रोश.
अचेल–अचेलक, वस्त्ररहितपणु	वह–वध
अरइ–अरति, पीडा	जायणा–याचना.

विस्तारार्थः–तेमां प्रथम परिसह शब्दनो अर्थ कहे ठे, जे जैनमार्गने नहीं मूकवाने अर्थे तथा कर्मनी निर्जरा करवाने अर्थे दुःखने (परि के०) समस्त प्रकारे (सह के०) सहन करवुं पडे, तेने परिसह कहीए व्याकरणमां लख्यु ठे के, "परिसह्यत इति परिसहः" ते परिसह सर्व मळी बावीश ठे, तेमां एक दर्शनपरिसह अने बीजो प्रज्ञापरिसह, ए बे परिसह तो जैनमार्ग न मूकवाने अर्थे ठे, अने शेष वीश परिसह जे ठे ते कर्मनिर्जरा करवाने अर्थे ठे ए बावीशे परिसहोनां अर्थ सहित नाम तथा एक पठी बीजा परिसहने अनुक्रमे कहेवानां कारण कहे ठे.

१ (खुहा के०) क्षुधा, एटले क्षुधापरिसह ठे, ते क्षुधा एवुं भूखनुं नाम ठे, ए भूखथी उत्पन्न थनारी वेदना बीजी समस्त वेदनार्ठथी अधिक

छे, कारण के भूख जे छे, ते आंतरडां अने पेट तेने बालनारी छे. तेमां गमे तेवी भूख लागे, तोपण साधु अनेषणीय आहार लीए नहीं, पोतानी प्रतिज्ञाथी चलायमान थाय नहीं, अने आर्तध्यान पण न करे, परंतु रुडे परिणामे क्षुधा सहन करे. ए क्षुधा सहन करवी अत्यत दुर्लभ छे, माटे सर्व परिसहोमां प्रथम ए क्षुधा परिसह गएयो छे.

२ (पिवासा के०) पिपासा, एटले पिपासापरिसह छे, ते पूर्वोक्त क्षुधानी पीमा मटाकवा सारु उंचां नीचां घरोने विषे विहार करवो पडे, तेना श्रमे करी तृषा उत्पन्न थाय, माटे क्षुधा पछी बीजो पिपासापरिसह गएयो छे तेमां साधु प्रासुक एषणीय जलने अभावे तृषाए व्याकुल उतो पण अनेषणीय शीतल जलादिकनी वांछा करे नहीं, परंतु सम्यक् परिणामे तृषा सहन करे.

३ (सी के०) शीतं, एटले शीतपरिसह. ते क्षुधा तथा तृषाए पीकितने शीतपणुं थाय, माटे त्रीजो शीतपरिसह गएयो छे. तेमां शीत कालने विषे जे वारे अत्यत टाढ पडे, ते वारे कल्पनीय वस्त्रने अन्नावे गृहादिके रहित छतो पण अकल्पनीय वस्त्रनी वांछा न करे, तथा पोते अग्नि प्रदीप्त करी तापे नही, तेमज बीजाए प्रदीप्त करेला अग्निथी पण तापे नहीं, परंतु अल्प जीर्ण वस्त्र करी सम्यक् परिणामे शीत सहन करे.

४ (उएहं के०) उष्ण, एटले उष्णपरिसह. ते उष्ण ऋतु जे छे, ते पूर्वोक्त शीत ऋतुनी विपक्षीन्नूत छे, माटे शीत पछी ए चोथो उष्णपरिसह गएयो छे तेमां उष्ण कालने विषे तप्त शिलाए रह्यो छतो सूर्यनुं प्रतिबिंब माथे आवे, एवा मध्यान्ह समयेअत्यत आतापना थये थके पण छत्रनी अथवा वृक्षोनी छायाने तथा

त्रिजणा प्रमुखने वायुने अणवांछतो थको तेमज स्नान विलेपनादिकने वर्जतो थको सम्यक प-रिणामे आतापना सहन करे.

५ (दंसा के०) दंश., एटले दंशपरिसह ते पूर्वोक्त उष्णकाल पछी वर्षाकाल आवे, ते समये डांस, मछरादिक बहु थाय, माटे उष्ण पछी पांचमो दंशपरिसह गएयो छे तेमां दंश, जू, मांकण इत्यादि क्षुद्र जीवो जेवी रीते संग्राममां शत्रु बाणनो प्रहार करे, तेवो डंख मारे, तोपण तेउना उपद्रवथी ते स्थानक तजीने अन्य स्थानके जवानी इच्छा न करे, अथवा तेने नि-वारवा सारु पखो करवानी वांछा पण न करे, तथा ते मांसादिक जीवो पोतानुं लोही पीए, तोपण तेना उपर द्वेष करे नही, एम सम्यक परिणामे दंशपरिसह सहन करे.

६ (अचेलरइत्थिओ के०) अचेलारतिस्त्रिय', एटले अचेल, अरति अने स्त्रीसंबंधी परिसह तेमां प्रथम अचेलकपरिसह. ते पूर्वोक्त दंशादिके पराजव पाम्यो थको पण वस्त्रने वांछे नहीं, तेथी अचेलकपरिसहने छठो गएयो छे. अचेलक एटले शु? तो के (चेल के०) वस्त्र तेनो (अ के०) अजाव ते अचेलक जाणवो आ ठेकाणे सर्वथा वस्त्रोनो अजाव होय, तेनुंज नाम अचेलकपरिसह नथी, परंतु आगममां जे जे वस्त्र राखवानुं प्रमाण कह्युं छे, ते प्रमाणे राखे, तो तेने अचेलकपरिसह कहेवो. हवे त्यां शंका करे छे के, जो कांइ पण वस्त्र राखे, तोपण ते परिग्रहज कहेवाय. त्यां कहे छे, के जो मूर्छा सहित वस्त्र राखे, तो परिग्रह कहेवाय, परंतु मूर्छा रहित अपरिग्रहपणाए शास्त्रोक्त रीते राखे, तो अचेलक जाणवो. तेमां साधुने फाटेलुं

अल्प मूल्यनुं अने जूनुं वस्त्र छतां कल्पनीय वस्त्र न मले, तथापि मनमां दीनता न करे, तथा एम पण न विचारे के, आज काल कोइ नवा वस्त्रनो आपनार पण मलतो नथी, माटे हवे केम करवुं ? अथवा आ वस्त्रो तो सडेलां तथा जूनां छे, माटे बीजां नवां पहेरुं ? एवो विचार पण न करे एम रुडे प्रकारे अचेलक- परिसह सहन करे तथा ७ अरतिपरिसह ते पूर्वोक्त अचेलकअप्रतिबद्धविहारी छतां तेने शीतादिकना सबबे करी अरति उपजे, माटे अचेलक पछी सातमो अरतिपरिसह गण्यो छे. तेमां जे रमण करवुं, ते रति अने तेथी विप- रीत जे अरमणिकता, ते अरति जाणवी आ ठेकाणे साधुने संयममां विहार करतां अरति उपजवानां कारण बने, ते वारे धर्मने विषे रत थाय, क्षांत्यादिक दश प्रकारना यतिधर्मने

ध्यावे, श्री दशवेकालिकनी प्रथम चूलिकामां अढार वस्तुनुं चिंतवन करवाथी अरति दूर थाय छे, ते प्रमाणे चिंतवन करी अरति दूर करे तथा ८ स्त्रीपरिसह ते पूर्वोक्त संयमने विषे अरति उत्पन्न थवाथी स्त्री निमत्री तेनी अभिलाषा करे, माटे अरति पछी आठमो स्त्री परिसह गएयो छे. तेमां स्त्रीउने दीठां थकां तेनां अंग, प्रत्यंग, संस्थान, सुरति, हसवुं, मनोहरपणुं, ललित विभ्रम, विलासादिक चेष्टाउने अणचिंतवतो थको रहे, स्त्रीउने मोक्षमार्गमां अर्गला समान जाणी, तेणे कामबुद्धिए करी दृष्टि साथे दृष्टि मेलवी जूवे नहीं, तथा पोतानी विषयेछा पूर्ण करवा माटे करेला उपद्रवने सहन करवा, ते स्त्रीपरिसह.

९ (चरिआ के०) चर्या, एटले चर्यापरिसह. चर्या एटले चालवानुं नाम छे. तेमां एक स्थले

रहेतां मंद सत्वने पूर्वोक्त स्त्री उपर अनुराग थाय, ते माटे एक स्थानके न रहे, तेथी ए स्त्रीपरिसह पछी नवमो चर्य्यापरिसह गण्यो छे तेमां आलस रहित थका ग्राम, नगर, कुलादिकने विषे विहार करवो, तेने द्रव्यथी चर्य्या कहीए, अने जो एक स्थानके मास कल्पादिके रहेतां पण अप्रतिबद्ध ममत्वरहितपणुं अंगीकार करवुं, ते भावथी चर्य्या कहेवाय.

१० (निसिहिया के०) नैषेधिकी, एटले नैषेधिकीपरिसह. ते पूर्वोक्त ग्रामादिकने विषे जेम अप्रतिबद्ध विहार करवो, तेम देहादिकने विषे पण अप्रतिबद्ध स्वाध्यायने अर्थे नैषेधिकी करवी. ते माटे चर्य्या पछी दशमो नैषेधिकीपरिसह गण्यो छे. जे निषेधीए, तेने नैषेधिकी कहीए तेमां एक पापकर्म, बीजु गमनागमन, तेहज निषेध . . ने प्रयोजन जेनु, तेने

कहीए. अहींयां शून्य घर, स्मशानादिक सर्पविल, सिंहगुफादिकने विषे कायोत्सर्गे रह्या थका त्यां नाना प्रकारना उपसर्गना सद्भावे पण अशिष्ट चेष्टानो निषेध करवो अर्थात् माठी चेष्टा न करवी, तेने नैषेधिकीपरिसह कहीए. अथवा कोइ ठेकाणे निषद्यापरिसह पण कह्यो छे, ते निषद्या एवुं रहेवाना स्थानकनुं नाम छे त्यां स्त्री, पशु, पंडक वर्जित स्थानमा रहेतां थकां जो इष्टानिष्ट उपसर्ग थाय, तोपण पोताना चित्तमां चलायमान न थाय, परंतु ते सर्व उपसर्गने उद्वेग रहितपणे सम्यक् रीते सहन करे, ए नैषेधिकी अथवा निषद्यापरिसह.

११ (सिज्जा के०) शय्या, एटले शय्यापरिसह. ते पूर्वोक्त नैषेधिकीए स्वाध्याय करी शय्याए आवे, माटे अगीयारमो शय्यापरिसह

कहीए तेमां शय्या ते वसति, उपाश्रये ऊंची नीची भूमि होय, अथवा घणी धूल, घणी टाढ, घणी उष्णता अने खाडा कांकरावाली भूमि होय, तेमां सकोमल अथवा कठिन आसन पामीने तेने सारुं अथवा माठुं कहे नहीं, उद्वेग करे नहीं, परंतु सम्यक् परिणामे ते दुःखने सहन करे, ते शय्यापरिसह.

१२ (अक्कोस के०) आक्रोशः, एटले आक्रोशपरिसह. ते पूर्वोक्त शय्याए रहेलाने शय्यातर एटले शय्यानो आपनार अथवा बीजो कोइ आक्रोश करे, माटे शय्या पछी बारमो आक्रोशपरिसह गएयो छे ते आवी रीते के–यतिने कोइ अज्ञानी पुरुष क्रोधने वश थइ अनिष्ट तिरस्कारना वचन बोले, तेने देखी तेनी उपर दृढप्रहारीनी पेरे कोप करे नहीं, परंतु एवुं विचारे जे, आ पुरुष मराने वास्ते मने अनिष्ट

वचन कहे छे, ए मारो उपकारी छे, केमके मने आ प्रमाणे ए शिक्षा आपे छे, तेथी फरी हुं एवुं काम नहीं करीश, अथवा ए पुरुष जे कहे छे, ते तो हुं करनो नथी, तथापि मारे एनी उपर जे कोप करवो ते युक्त नथी, एम चितवी क्रोध न करे,एम सम्यक् रीते आक्रोश सहन करे.

१२ (वह के०) वध., एटले वधपरिसह. ते पूर्वोक्त आक्रोशनो करनार जे होय, ते वध पण करे, माटे आक्रोश पछी तेरमो वधपरिसह गएयो छे. तेमां कोइ दुरात्मा आवीने साधुने ढीका, पाटु, चाबक, कशादिकना आकरा प्रहार करे, अथवा वध करे, तोपण स्कदसूरिना शिष्योनी पेरे तेना उपर बिलकुल रोप आणे नहीं, परंतु अकलुपित चित्तवंत थको एवी चितवना करे, के ए मारुं शरीर तो पुद्गलरूप छे, ए तो अवश्य विध्वंस थवानु छे, अने मारो

आत्मा तो ए थकी जूदोज छे, कारण के आत्माने तो कोइ विध्वंस करी शकेज नहीं, तो आ शरीरना संबंधथी मने जे दुःख थाय छे, ते तो मारां करेलां कर्म उदय आव्यां छे, तेनुं ए फल छे. एवी बुद्धिथी वधपरिसहने सहन करे.

१४ (जायणा के०) याचना, एटले याचना परिसह ते पूर्वोक्त रीते हणाएलाने औषधादिकनी याचना करवानुं प्रयोजन थाय, माटे वध पछी चौदमो परिसह गण्यो छे जे अनेरा पासेथी याचीए तेने याचना कहीए ते आवी रीते के-यतिए वस्त्र, पात्र, अन्न, पान, उपाश्रय प्रमुख कोइ पण चीज अर्थात् एक सळी जेटली चीज पण माग्या विना लेवी नहीं. यद्यपि पोतानी शोभा राखवाने अर्थे मागे नहीं, तथापि पोताने प्रयोजन पडये थके लज्जा छांडीने याच-

ना करे, परंतु एवुं चिंतवे नहीं जे, रांधेला धान्यने अर्थे नला माणसने घेर जइ याचना करवी, ते करता तो गृहस्थावासमां रहेवुंज नलु, के ज्यां आपणा नुजदंडना पराक्रमथी उपजाव्युं जे अन्न, ते दीन हीनादिकने आपी पछी जमीए, एवी विचारणा करीने गृहस्थपणाने इछे नहीं, अथवा याचना करतां कोइ आपशे, किंवा नहीं आपशे, तो हुं आ गृहस्थने घेर जइ लाखनो मर्म गमावीने शी रीते याचना करुं? इत्यादिक चिंतवना न करतां याचना करे ॥ २७ ॥

अलाज-रोग-तणफासा, मल-सक्कार-परीसहा ॥ पन्ना अन्नाण सम्मत्तं, इअ बावीस परीसहा ॥ २८ ॥

गाथा २७ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

अलाभ–अलाभ.	पन्ना–प्रज्ञा
रोग–रोग	अन्नाण–अज्ञान.
तणफासा–तृणस्पर्श	सम्मत्त–सम्यक्त्व
मल–मल	इअ–ए प्रकारे
सक्कार–सत्कार	बावीस–बावीश
परीसहा–परिसह (ए शब्द दरेकने लगाडवो)	परीसहा–परि

विस्तारार्थ.–(अलाभरोगतणफासा के०) अलाभरोगतृणस्पर्शा, एटले अलाभ, रोग, अने तृणस्पर्श, ए त्रण परिसह, तेमां १५ अलाभपरिसह, ते पूर्वोक्त याचना कस्या छतां पण लाभांतरायना उदयथी कोइ वारे माग्या छतां पण मले नहीं, माटे याचना पछी पदरमो अलाभपरिसह गण्यो छे ते आवी रीते के–यतिने कोइ वस्तुनी इछा छे, अने ते वस्तु गृहस्थना घरमां पण घणी छे, ते साधु मागवा गया

ठतां तेने गृहस्थ आपे नहीं, ते वारे ढंढणकुमारनी पेठे चित्तमां उद्वेग करे नहीं, विषाद न करे, मुखराग फेरवे नहीं, तेमज न आपनारनुं माठुं पण चिंतवे नहीं, दुर्वचन पण बोले नहीं, अने समता धारण करीने मनमां विचारे जे, आजे नहीं मळ्यु, तो काले मळी जशे जे वारे मळशे, ते वारे लइशु. ए रीते अलाभपरिसह सहे

१६ रोगपरिसह ते पूर्वोक्त अलाभथकी आंतप्रांत भोजने करी रोगोत्पत्ति थाय, माटे अलाभ पठी सोलमो रोगपरिसह गण्यो ठे. तेमा साधुने जे वारे कास, श्वास, ज्वर, अतिसारादिक रोग उपजे, ते वारे जे गछ बाहिर जिनकल्पी साधु होय, ते तो चिकित्सा करवानी इछा पण न करे, अने पोतानां कर्मनो विपाक चिंतवे, परंतु जे स्थविरकल्पी गछवासी

साधु होय, ते आगमोक्त विधिए करी निरवद्य चिकित्सा करावे, मनमांहे कर्मविपाक चिंतवतो रहे, पण हायवोय करे नहीं जो अत्यन्त वेदना थती होय, तोपण आर्त्तध्यान करे नहीं, परंतु सनत्कुमारनी पेरे सम्यक प्रकारे वेदना सहन करे

१७ तृणस्पर्शपरिसह. ते पूर्वोक्त रोगीने शय्याए सूतां थकां तृणस्पर्श थाय, माटे रोगपरिसह पछी सत्तरमो तृणस्पर्शपरिसह गएयो छे तेमां गच्छनिर्गत साधुने तृणनोज संथारो कह्यो छे, अने गच्छवासी साधुने तो सापेक्ष संयम थाय छे, माटे ते वस्त्र पण लीए छे, परंतु जे वारे भूमिका जीर्ण होय, अथवा वस्त्र [illegible] णु थयुं होय, किंवा घणो रोगी साधु होय [illegible] वारे केवल शाजनो अर्द्ध हाथ प्रमाण [illegible] छते तेमां नगना अग्रभाग तीखा [illegible]

शरीरने लागे, तेथी पीमा उत्पन्न थाय, तोपण दुःख चिंतवे नहीं, समाधिनो त्याग करे नहीं.

(मलसक्कारपरिसहा के०) मलसत्कारपरिसहो, एटले मलपरिसह अने सत्कारपरिसह, तेमां मलपरिसह. ते पूर्वोक्त तृणस्पर्शे करी परसेवाने सयोगे मल उपजे, माटे तृण पठी अढारमो मलपरिसह गण्यो ठे. अहींयां परसेवाना पाणीए करी साधुना शरीरने विषे रजनो कठिन मेल बंधाइ जाय, ते घणो मेल उष्ण कालना तापने संयोगे परसेवाथी जींजाइने दुर्गंधे गधाय, तोपण ते दुर्गंधने दूर करवा सारु स्नानादिकनी इच्छा करे नहीं. वली एथकी क्यारे हुं बूटीश, एवी चिंतवना पण न करे.

१ए सत्कारपरिसह. ते पूर्वोक्त मलव्याप्त पुरुष कोइ पवित्र अंगवालानो सत्कार थतो देखी कांइक पोते पण सत्कारादिकनी वांठा करे, माटे

मल पछी ठंगणीशमो सत्कारपरिसह गएयो ठे. ते आवी रीते के–साधुने कोइए स्तवन, नमन, चरणस्पर्श, सन्मुख जवुं, उन्नु थवुं, आसन देवु, अशनादिकनु दान देवुं, अथवा मोटा कोइ राजादिके निमंत्रणादिकनु करवुं, एवो सत्कार पोताने थतो देखीने मनमां उत्कर्ष आणे नहीं, अने सत्कार न थवाथी मनमां विषाद पण पामे नहीं

२० (पन्ना के०) प्रज्ञा, एटले प्रज्ञापरिसह ते पूर्वोक्त सत्कारना जयथी प्रज्ञाने बाहुल्ये गर्व न करवो, तेमज प्रज्ञाने अनावे खेद पण न करवो, माटे सत्कार पठी वीशमो प्रज्ञापरिसह गएयो ठे, ते आवी रीते–जेणे करी वस्तुनु तत्त्व (प्र के०) प्रकर्षे करी (ज्ञा के०) जणाय, ते प्रज्ञा कहेवाय. ते प्रज्ञावंत साधु घणा श्रुतनो जाण ठतां [illegible] विषे रुमी रीते ज्ञान आराधन

कह्युं छे, माटे हुं समस्त मनुष्योमां जाण छुं, सर्वना पूछेला प्रश्नोना उत्तर हुं आपुं छुं, एवो गर्व न करे, अने प्रज्ञाने अजावे मनमां उद्वेग पण न करे, ते जेमके हुं मूर्ख छुं, कांइ पण जाणतो नथी, सर्वने पराजवनु स्थानक छुं, कोइए पूछया थका जीवादि पदार्थनां नाम पण जाणतो नथी, एवी दीनता मनमां न करे, परंतु पूर्वकृत कर्मनु स्वरूप चिंतवे,तो परिसह पीडे नहीं

२१ (अन्नाण के०) अज्ञान, एटले अज्ञान परिसह. ते पूर्वोक्त प्रज्ञानी पेरे अज्ञान पण सहन करवुं माटे प्रज्ञा पछी एकवीशमो अज्ञानपरिसह गएयो छे वस्तुनु तत्त्व श्रुतज्ञाने जणाय छे, तेनो जे अजाव ते अज्ञानपरिसह कहीए. ते आवी रीते छे–के साधु मनमां एम न जाणे, जे मे अव्रतिपणुं त्यागीने व्रतिपणुं अंगीकार कीधु छे, तोपण हुं कांइ जाणतो नथी,

तेमज मे नड्ड मद्दानड्डादिक तप पक्किवज्यां तथा नुपाधान जे आयंबिल प्रमुख अने मासिकी आदिक प्रतिमा वही, एवी रीते क्रियाए हुं चालु बुं, तोपण हुं सारुं मारुं कांइ जाणतो नथी, केमके हुं आगमज्ञान रहित बुं, माटे निरक्षर कुक्षिंनर एवो मने धिक्कार ठे, एवी दीनता न करे, परंतु नि.केवल ज्ञानावरणीय कर्मना नुदयथी मारुं आ स्वरूप ठे, ते यावत् जोगववाथी दूर थशे, अथवा तप अनुष्ठानथी दूर थशे तेमज जो एकादशांगादिनो पाठी होय, तोपण हुं ज्ञाननो समुद्र बुं, एवो गर्व न करे अहींयां प्रज्ञापरिसह अने अज्ञानपरिसह नुं एटलुं विशेष ठे, के प्रज्ञापरिसह तो बीजो कोइ प्रश्नादिक पूठे ते वारे थाय ठे, अने अज्ञानपरिसह तो मत्यादिक ज्ञान मारामां पूर्ण नथी, एम विचारवाथी थाय ठे, अथवा शास्त्रनुं

पुरुषवेदना उदयथी स्त्रीपरिसह थाय छे, चोथो भयमोहनीयना उदयथी नैषेधिकीपरिसह थाय छे, पांचमा जुगुप्सामोहनीयना उदयथी अचेलकपरिसह थाय छे छठो मानमोहनीयना उदयथी याचनापरिसह थाय छे, सातमो लोभमोहनीयना उदयथी सत्कार पुरस्कारपरिसह थाय छे. तथा १ क्षुधा, २ पिपासा, ३ शीत, ४ उष्ण, ५ दंश, ६ चर्या, ७ शय्या, ८ मल, ए वध, १० रोग, ११ तृणस्पर्श, ए अगीयार परिसह वेदनीय कर्मना उदयथी थाय छे, शेष कर्मोने विषे परिसहनो अवतार नथी. ए प्रकारे बावीश थया.

हवे चोद गुणठाणाने विषे परिसहोने समवतारी देखाडे छे, तेमां ए क्षुधादिक बावीशे परिसह यावत् बादरसंपराय नामे नवमा गुणठाणा सुधी थाय छे, अने सूक्ष्मसंपराय नामे दशमे गुणठाणे तो पूर्वोक्त चारित्रमोहनीयना

क्षयोपशमना प्रतिबंधथी तथा सात परिसह तथा एक दर्शनमोहनीय प्रतिबंध मलीने आठ परिसह न थाय, शेष क्षुधादिक अनुक्रमे पांच परिसह, ६ चर्या, ७ शय्या, ८ वध, ए अलाज्ञ, १० रोग, ११ तृणस्पर्श, १२ मल, १३ प्रज्ञा, १४ अज्ञान ए चौद थाय छे. तथा अगीयारमा उपशातमोह अने बारमा क्षीणमोह गुणठाणे पण पूर्वोक्त चाद परिसहज थाय छे. हवे तेरमे सयोगी अने चौदमे अयोगी ए बे गुणठाणे तो अनुक्रमे क्षुधादिक पांच, ६ चर्या, ७ वध, ८ मल, ए शय्या १० रोग, ११ तृणस्पर्श, ए अगीयार परिसह मात्र वेदनीय कर्मना प्रतिबंधथी थाय छे

ए बावीश परिसह मांहेला शीत अने उष्ण तथा चर्या (चालवुं) अने निषद्या (रहेवुं) ए चारे सम काले वर्त्ते नहीं, परंतु एना प्रतिपक्षी बे परिसह सम काले वर्त्ते, माटे उत्कृष्टथी ए-

प्राणीने विषे सम काले वीश परिसहनो उदय थाय अने जघन्यथी तो शीत अथवा उष्ण तथा चर्या अथवा निषद्या, ए च्यार मांहेला एकनोज उदय थाय, केमके ज्यां शीत होय, त्यां उष्ण न होय, अने ज्यां चर्या होय, त्यां निषद्या न होय, इत्यादिक मांहेलो एक थकां बेनो अभाव होय. ए परिसह मांहेला एक स्त्री, बीजो प्रज्ञा, त्रीजो सत्कार ए त्रण परिसह अनुकूल जाणवा, अने शेष ओगणीश परिसह प्रतिकूल जाणवा. वली स्त्री तथा सत्कार ए बे भाव शीतलपरिसह छे, अने शेष परिसह उष्ण छे. इति परिसह विचार संपूर्ण ॥

हवे दश प्रकारे यतिधर्मनु वर्णन करे छे.

खंती मद्दव अज्जव, मुत्ती तव संजमे अ बोधव्वे ॥ सच्चं सोअं आकिं,-चणं च बंभं च जइधम्मो ॥ २ए ॥

गाथा २९ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

खंती–क्षमा.	सच–सत्य
मद्दव–मार्दव.	सोअ–शौच.
अज्जव–आर्जव	आकिंचण–अकिंचन.
मुत्ती–मुक्ति.	च–अने
तव–तप.	बंभ–ब्रह्मचर्य.
संजमे–सयम	च–अने.
अ–अने.	जइधम्मो–यतिधर्म
बोद्धव्वे–जाणवा.	

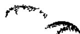
विस्तारार्थ.–क्रोधनो जे अभाव, ते पहेलो (खंती के०) क्षांति, एटले क्षमाधर्म, उपकारक्षमा, अपकारक्षमा, विपाकक्षमा, वचनक्षमा अने धर्मक्षमा एम पांच प्रकारे क्षमा थाय छे. माननो जे त्याग ते बीजो (मद्दव के०) मार्दव, एटले मार्दवधर्म मायानो जे त्याग एटले कपट रहितपणुं, ते त्रीजो (अज्जव के०) आर्जव, एटले आर्जवधर्म निर्लोभता ते चोथो (मुत्ति के०) मुक्ति , एटले मुक्तिधर्म इच्छानो जे निरोध ते

पांचमो (तव के०) तपः, एटले तपोधर्म. (य के०) च, वली प्राणातिपातादिक पांचनुं जे विरमण तथा पांच इंद्रियोनो निग्रह, चार कषायनो जय अने त्रण दंडनी निवृत्ति, ए सत्तर नेदे ठठो (संजमे के०) संयमः, एटले सयमधर्म. सत्य नाषण करवुं ते सातमो (सच्चं के०) सत्यं, एटले सत्यधर्म तथा शरीरना हाथ पग प्रमुख पवित्र राखवा अने नात पाणी प्रमुख बेंतालीश दोष रहित आहार लेवो, ते सर्व द्रव्यथी शौच अने आत्मानो जे शुद्ध अध्यवसाय कषायादिके रहित शुद्ध परिणामनी वृद्धि, ते नावशौच. अथवा मन, वचन अने कायाने शुद्ध राखवां, संयमने विषे निरतिचारपणुं तथा जीव अदत्त, स्वामी अदत्त, गुरु अदत्त अने तीर्थंकर अदत्त, ए चार प्रकारनी चोरीनो त्याग करवो ते आठमो (सोअं के०) शौचं, एटले शौचधर्म. समस्त

परिग्रह त्यागरूप मूर्छारहित थवुं ते नवमो (आकिंचणं के०) आकिंचन्य, एटले अकिंचनधर्म नव प्रकारे औदारिक अने नव प्रकारे वैक्रिय सबंधी मैथुननो जे त्याग करवो ते दशमो (बंभं के०) ब्रह्म, एटले ब्रह्मचर्यधर्म एवी रीते (जइधम्मो के०) यतिधर्म, एटले यतिनो धर्म ते कहेला दश प्रकारनो (बोद्धव्वे के०) बोद्धव्य, एटले जाणवो ए दश गुण सहित होय ते यति जाणवो. आ आर्यामा त्रण चकार छे, ते पादपूरणार्थ तथा उनयान्वयी अव्यय छे ॥ २९ ॥

हवे बार जावनानुं वर्णन करे छे—

पढममणिच्चमसरणं, ससारो एगया य अणत्तं ॥ असुइत्तं आसव सं,-वरो अ तह णिज्जरा नवमी ॥ ३० ॥



गाथा ३० मीना जुदा शब्दना अर्थ.

पढम–प्रथम.	असुइत्त–अशुचित्व.
अणिच्च–अनित्य.	आसव–आश्रव.
असरण–अशरण.	संवरो–संवर.
संसारो–संसार	य–अने
एगया–एकता, एकत्व.	तह–तेमज.
य–अने	णिज्जरा–निर्जरा.
अणत्त–अन्यत्व	नवमी–नवमी.

विस्तारार्थ.—लक्ष्मी, यौवन, कुटुंब, परिवार तथा आउखा प्रमुखने विषे जे अनित्यतानी जावना करवी, एटले संसारना सर्व पदार्थ ते कुशाग्रस्थ जलबिंदुनी परे अनित्य अस्थिर जाणे, ते (पढमं के०) प्रथमं, एटले प्रथम (अणिच्चं के०) अनित्यं, एटले अनित्य जावना. मरण आव्याना समये चक्रवर्त्ती, इंद्र अथवा तीर्थंकर प्रमुख गमे तेवो मोटो पुरुष होय, तेने पण धन कुटुंबादिक कोइनुं शरण मलतुं नथी, संसारमांहे

जन्म, जरा अने मरणना जयथी राखवाने एक धर्म विना बीजुं कोइ शरण नथी, एवी जे जावना करवी, ते बीजी (असरण के०) अशरण, एटले अशरण जावना. माता ते स्त्री थाय, स्त्री ते माता थाय, पिता ते पुत्र थाय, पुत्र ते पिता थाय, इत्यादिक आ जीवे संसारने विषे सर्व जावनो अनुजव कस्वो ठे, एवी जे जावना करवी, ते त्रीजी (संसारो के०) संसारः, एटले संसार जावना आ जीव संसारमां एकलो आव्यो ठे, एकलो जशे अने एकलो सुख तथा दुःख जोगवशे, परंतु कोइ साथी थवानो नथी, एवी जे जावना करवी, ते चोथी (एगया के०) एकता, एटले एक जावना आत्मा ज्ञानस्वरूप ठे, अने शरीर जम ठे, माटे परस्पर जिन्न ठे, आत्मा ते शरीर नथी, ने शरीर ते आत्मा नथी, आत्माथी शरीर अन्य ठे, तेमज धन तथा

स्वजनादिक पण अन्य छे, एवी जे जावना करवी, ते पांचमी (अणत्तं के०) अन्यत्वं, एटले अन्यत्व जावना. रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि मज्जा, वीर्य, परु तथा आंतरमां इत्यादिक अमेध्य वस्तुओथी शरीर जरेलुं छे, अने जेनां नवे द्वारो सदा घरनी खालनी पेठे वहेतां रहे छे, ए शरीर कोइ काले पण पवित्र होतुं नथी, एवी जे जावना करवी, ते छठी (असुइत्तं के०) अशुचित्वं, एटले अशुचित्व जावना. मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, तथा योग, ए पांच प्रकारना आश्रवे करीने कर्म बंधाय छे, अथवा दया दानादिके करी शुज कर्म बंधाय छे, अने विषय कषायादिके करी अशुज कर्म बंधाय छे, एवी जे जावना करवी ते सातमी (आसव के०) आश्रवः, एटले आश्रव जावना. जे जे संवरथकी जे जे आश्रव रोकाय, ते ते आश्रवनुं रोकवुं,

अने ते ते संवरनुं जे आदरवुं, एटले जेम क्ष-
मादिक संवर वडे क्रोधादि आश्रव रोकाय छे,
इत्यादिक जे जावना करवी, ते आठमी (संव-
रो के०) संवर , एटले संवर जावना. (नह च
के०) तथा च, एटले तेमज, संकीर्ण स्थानकने
योगे जेम आम्रफल पक थाय छे, तेम बार प्र-
कारनां तपे करीने कर्मने पचाववुं, अर्थात् पूर्वे
संचेला कर्मनुं मारवुं, तेरूप निर्जरा. [illegible]
अने अकाम, ए वे जेदे छे, एवी [illegible]
रवी, ते (नवमी के०) नवमी, [illegible]
ज्जरा के०) निर्जरा, एटले निर्जरा [illegible] जा-
णवी आ गाथामां वे चकार छे, ते [illegible]
तथा उजयान्वयी अव्यय [illegible]

लोगसहावो वोही, [illegible] धम्मस्स
साहगा अरिहा ॥ एआओ जावणा
जावेअवा पयत्तेणं ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

लोगसहावो-लोकस्वभाव.	अरिहा-अरिहंतादिक.
बोही-बोधि.	एआओ-ए.
दुलहा-दुर्लभ.	भावणाओ-भावनाओ.
धम्मस्स-धर्मना	भावेअव्वा-भाववी.
साहगा-साधक	पयत्तेण-प्रयत्ने करीने.

विस्तारार्थ.-केड उपर बे हाथ दइने तथा बन्ने पग पसारी उभेला पुरुषना जेवो जेनो सम आकार षड्द्रव्यात्मक छे, पूर्व पर्याय विणसे, नवा पर्याय उत्पन्न थाय, अने द्रव्यपणे निश्चल होय, एम उत्पाद, व्यय तथा ध्रौव्य स्वरूप चौद राजलोक छे. तेनुं नीचेनुं तलीयुं उंधा वाळेला मल्लक (कोडीया) सरखुं छे, तथा मध्य भाग झालर सरखो छे, अने उपरनो भाग मृदग सरखो एवो शाश्वत छे, इत्यादिक जे लोकस्वरूपनी भावना करवी, ते दशमी (लोगसहावो के०) लोकस्वभाव एटले लोकस्वभाव भावना जाणवी.

जीवने संसारमा भ्रमण करतां अनंता पुद्गलप-रावर्त्त व्यतीत थया, तेमां अनंती वार चक्रव-र्त्यादिक जेवी ऋद्धि प्राप्त थइ, तथा यथाप्रवृत्ति करणने योगे करी अकाम निर्जरा वडे पुण्यना प्रयोगथी मनुष्यभव, आर्य देश, नीरोगीपणुं तथा धर्मश्रवणादिकनी प्राप्ति थइ, तथापि स-म्यक्त्व प्राप्त थवुं अति दुर्लभ छे, एवी जे भाव ना करवी, ते अगीयारमी (बोही के०) बोधिः, एटले बोधिदुर्लभ भावना अने जे दुस्तर सं-सारसमुद्रमांथी तारवाने प्रवहण समान ते श्री जिनप्रणीत दशविध क्षमादिक शुद्ध धर्म, तथा ज्ञान, दर्शन, चारित्र, ए रत्नत्रयात्मक धर्म ते पामवो दुर्लभ छे तथा ते (धम्मस्स के०) धर्म-स्य, एटले धर्मना (साहगा के०) साधका., एटले साधक (अरिहा के०) अर्हतः, एटले अरिहंता-दिक ते पण आ संसारने विषे पामवा (दुल्लहा

के०) दुर्लजाः, एटले दुर्लज ठे, एवुं जे चिंतववुं, ते बारमी धर्मनी जावना. ए रीते सम्यक्दृष्टिए (पयत्तेण के०) प्रयत्नेन, एटले उद्यमे करीने (एआर्ज के०) एताः, एटले ए कहेली (जावणा ठ के०) जावनाः, एटले बार जावनार्ज तेने प्रमाद रहित थइने शुद्ध मने करी (जावेअवा के०) जावितव्या, एटले जाववी तथा पांच महाव्रत मांहेली एकेका महाव्रतनी पांच पांच जावना मलीने पचीश जावना ठे, ते पण एमां अंतर्जावे ठे, तथा मैत्री, प्रमोद, कारुएय अने उपेक्षा, ए चारनी साथे पूर्वोक्त बार जावना मेलवीए, ते वारे सोल जावना थाय ठे. तेनो विचार उपाध्याय श्री विनयविजयजीकृत शांतसुधारस ग्रंथथकी विस्तारे जाणवो ॥ ३१ ॥

हवे पांच प्रकारनां चारित्रनु वर्णन करे ठे–

सामाइ अत्र पढमं, छेउवठावणं भ-
वे वीअं ॥ परिहारविसुद्धीअं, सुहुमं
तह संपरायं च ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

सामाइ-सामायिक.	परिहारविसुद्धीअ-परिहार-विशुद्धि
अत्थ-अहींआ.	
पढम-पहेलु	सुहुम-सूक्ष्म
छेओवठ्ठावण-छेदोपस्थापनीय	तह-तेमज
भवे-छे.	सपराय-सपराय
बीअ-बीजु.	च-अने

विस्तारार्थ.-तेउमां (अत्र के०) अत्र, एटले अहीं (पढमं के०) प्रथम, एटले पहेलु चारित्र (सामाइ के०) सामायिक, एटले सामायिक छे, तेनो अर्थ करे छे सम अने आयिक ए बे पदो-नो एक सामायिक शब्द थयो छे. तेमां सम एटले राग द्वेष रहितपणाने माटे आय एटले

लाज, ते जेना वडे थाय, ते सामायिक, तथा
सर्व सम ते ज्ञान. दर्शन तथा चारित्र, तेनो
लाज ते लाज, ते ज्यां थाय छे. एटले जेणे करी
ज्ञान, दर्शन तथा चारित्र. ए त्रणेनी प्राप्ति थाय
छे, तेने सर्व सावद्ययोगत्यागरूप, अने निरवद्य-
योगसेवनरूप सामायिक कहीए. ते श्रावकने
देशविरतिरूप सामायिक अने साधुने सर्व सा
वद्यविरतिरूप सामायिक होय. तेना बे भेद छे,
तेमां भरत ऐरवतादिक दश क्षेत्रने विषे पहेला
तथा छेल्ला जिनना वारोमां सर्वविरति सामा-
यिक दंडकनो उच्चार करावे, ते इत्वरिक उग
मण कर्या सुधी जे रहे, ते इत्वरिक एटले स्व-
ल्पकाल भावी सामायिक कहीए अने वचला
बावीश जिनोना वारामां तथा महाविदेह क्षेत्र-
मां यावत्कथिक एटले सामायिक उच्चर्या पछी
निरतिचारज पाले छे, तेथी तेने उगामण नहीं

होवाने लीधे जावजीव लगे रहे, माटे यावत्कथिक चारित्र कहीए. एने सम्यक्चारित्र पण कहे ठे ए सामायिक चारित्र जीवने प्राप्त थया विना बीजां चारित्रोनो लाभ थाय नहीं, माटे एने आदिमां कह्यु ठे

(बीयं के०) बीजुं (ठेउवठावण के०) ठेदोपस्थापनं, एटले ठेदोपस्थापनीय चारित्र (जवे के०) जवेत्, एटले ठे, ते पूर्वोक्त सर्वविरति सामायिक चारित्रनेज ठेदादि विशेषपणे विशेषीए, ते वारे शब्दथी तथा अर्थथी नाना प्रकारपणु जजे, ते वारे ठेदोपस्थापनीय चारित्र थाय. तेमां ठेद एटले पूर्व पर्यायनो छेद करवो, अने उपस्थापन एटले गणाविषे आपेलु पच महाव्रतरूपपणु जे महाव्रतने विषे होय, ते ठेदोपस्थापनीय कहीए, एटले ज्यां नवा पर्यायोनु स्थापन करवुं, तथा पंच महाव्रतनो उच्चार कराववो ते पण बे जेदे.

एक सातिचार ते मूलगुणघातीने प्रायश्चित्तरूप अने बीजो निरतिचार ते इत्वर सामायिकवंत नव दीक्षित शिष्यने छज्जीवणीया अध्ययन ज एया पछी होय, तथा बीजा तीर्थ आश्रयी ते जेम श्री पार्श्वनाथना तीर्थथी वर्द्धमान स्वामीना तीर्थे आवी चार महाव्रतरूप धर्म त्यागीने पच महाव्रतरूपे धर्म आदरे, तेने होय.

त्रीजा (परिहारविसुद्धीअं के०) परिहारविशुद्धिक, एटले परिहारविशुद्धि चारित्र कहेवाय छे तेमां (परिहार के०) तपोविशेष, तेणे करी विशुद्धि एटले कर्मनी निर्जरा जे चारीत्रने विषे होय, तेने परिहारविशुद्धिक चारित्र कहीए ते बे भेदे छे. तेमां पहेलुं जे चार जण विवक्षित चारित्रना आसेवक ए कल्पमां प्रवर्त्तता होय, तेनु चारित्र ते निर्विषमानसिक परिहार वैशुद्धि... जाणवुं, अने बीजु जे चार जण

तेना अनुचारी होय, तेने निर्विष्टकायिक परिहारविशुद्धिक चारित्र जाणवुं ते आवी रीते— नव जणानो गञ्च जूदो नीकले, ते तीर्थंकर पासे अथवा पूर्वे जेणे तीर्थंकर पासेथी ए चारित्र पमिवज्युं होय, तेनी पासे ए चारित्र पमिवजे. हवे ते नव साधुमां चार जण परिहारक एटले तपना करनारा थाय, ते निर्विषमानसिक जाणवा, अने चार तेना वैयावच्चना करनारा थाय, ते निर्विष्टकायिक जाणवा. तथा एकने वाचनाचार्य गुरुस्थानके ठरावे पठी ते चार परिहारक ठ मास सुधी तप करे, तेमां उष्ण काले जघन्यथी चोथ, मध्यमथी ठठ, अने उत्कृष्टथी अठम, एवुं तप करे, अने शीतकाले जघन्यथी ठठ, मध्यमथी अठम अने उत्कृष्टथी दशम करे, तथा वर्षाकाले जघन्यथी अठम, मध्यमथी दशम अने उत्कृष्टथी डुवालस तप करे, पारणे आंबिल

कल्प स्थिनपणे नित्य करे. एम ठ महीना तप करे, ते पठी फरी चार तपस्याना करनार, ते वैयावच्चीया थाय, अने वैयावच्च करनारा तपीया थाय, ते पण ठ मास लगे तप करे, ते पूर्ण थया पठी जे गुरु थया होय, ते ठ महीना तप करे, ते वारे ते आठ मांहेलो एक गुरु थाय, शेष बीजा वैयावच्च करे एम अढार महीना सुधी तप संपूर्ण करी, पठी जिनकल्प आदरे, अथवा गछमां पण आवे तप जे प्रथम संघयणी, पूर्वधर लब्धिवंत होय, ते प्रचुर कर्मना परिपाकने अर्थे अंगीकार करे. ए चारित्र पांच जरत, पांच ऐरवतमां पहेला अने ठेल्ला तीर्थकरना तीर्थमां होय. ए परिहारविशुद्धि चारित्रनां २० द्वार ठे. ते नीचे प्रमाणे—क्षेत्र १, काळ २, चारित्र ३, तीर्थ ४, पर्याय ५, आगम ६, वेद कल्प ७, लिंग ए,

१२, अभिग्रह १३, प्रव्रज्या १४, मुंडापन १५, प्रायश्चित्तविधि १६, कारण १७, निष्प्रतिकर्मता १८, भिक्षा १९, अने वध २०. आ वीश द्वारनुं विशेष विवरण नव तत्त्व विस्तारार्थथी जाणवुं. ए परिहारविशुद्धिचारित्र वे प्रकारे छे, एक तो कल्पविधि पूर्ण थया बाद तरत कल्प अथवा गच्छ अंगीकार करे, ते इत्वरिक, तथा कल्पसमाप्ति पछी तरत जिनकल्पने अंगीकार करे, ते यावत्कथिक कहेवाय. ए परिहारविशुद्धि चारित्रनो संक्षेपथी विचार कह्यो

(तह के०) तथा, एटले तेमज चोथो (सुहुमं संपराय के०) सूक्ष्म सपराय, एटले सूक्ष्मसंपराय कषाय ज्यां थाय, तेने सूक्ष्मसपराय चारित्र कहीए. ते उपशमश्रेणीए कर्म उपशमावतां अथवा क्षपकश्रेणीए कर्म खपावता होय, तेमां नवमे गुनठाणे लोजना सख्याता खंड करी तेने

उपशमश्रेणीवालो जे होय, ते उपशमावे, तथा क्षपकश्रेणीवालो होय, ते खपावे ते संख्याता खंड मांहेलो जे वारे छेल्लो खंड रहे, तेना असंख्याता सूक्ष्म खंड करीने दशमे गुणठाणे उदयमां आणी जोगवीने उपशमावे, अथवा क्षपक होय, ते खपावे, ते दशमा गुणठाणानुं नाम सूक्ष्मसंपराय, अने चारित्रनु नाम पण सूक्ष्मसपराय जाणवुं ए चारित्र बे जेदे छे, एक श्रेणी चढताने विशुद्ध मानसिक होय, बीजुं उपशमश्रेणीथी पडताने संक्लिष्ट मानसिक जाणवुं श्योपशमिकने ए चारित्र श्रावा ससारमां पांच वार अने एक जवमां बे वार आवे ॥ ३२ ॥

तत्तो अ अहक्खायं, खायं सवंमि जीवलोगंमि ॥ जं चरिऊण सुविहिआ, वच्चंति अयरामरं ठाणं ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ मीना छुटा शब्दना अर्थ.

तत्तो–ते वार पछी.	ज–जे
अ–अने	चरिऊण–आचरीने
अहक्खाय–यथाख्यात.	सुविहिआ–सुविहित साधु
खाय–प्रसिद्ध	वच्चंति–पामे छे
सव्वंमि–समस्त	अयरामर–अजरामर
जीवलोगंमि–जीवलोकनेविष.	ठाण–स्थानकने.

विस्तारार्थ –(तत्तो के०) ते वार पछी पांचमुं (अहक्खाय के०) यथाख्यात, एटले यथाख्यात चरित्र, ते ज्या (यथा के०) यथाविधे करीने अकषायपणु अर्थात् ज्यां संज्वलनादिके करी सर्वथा रहितपणुं (ख्यात के०) सिद्धांतमां कहेलु छे, तेवी रीतनु सर्व विरति चारित्र, ते यथाख्यात चारित्र जाणवुं तेना वे भेद छे एक छाद्मस्थिक अने वीजो केवलिक तेमां छाद्मस्थिक ते छद्मस्थ औपशमिकने अगीयारमे गुणठाणे होय, अने दा.प ... गुणठाणे होय वीजुं ते के-

वलीने तेरमे अने चौदमे गुणठाणे होय, ते कैवलिक जाणवुं ए चारित्र (सव्वंमि के०) सर्वस्मिन्, एटले समस्त एवा (जीवलोगमि के०) जीवलोके, एटले जीवलोकने विषे केवुं छे? तो के (खायं के०) ख्यात, एटले प्रसिद्ध छे. हवे ते केवी रीते प्रसिद्ध छे? ते कहे छे. (जं के०) यद्, एटले जे चारित्रने (चरिऊण के०) चरित्वा, एटले आचरीने (सुविहिआ के०) सुविहिताः, एटले सुविहित साधु, ते (अयरामरं ठाण के०) अजरामरं स्थानं एटले अजरामर स्थानकने (वच्चति के०) व्रजंति, एटले पामे छे, एटले जन्म, जरा अने मरण तेणे रहित एवुं जे मोक्षरूप स्थानक, तेने पामे छे ॥ ३३ ॥

॥ इति श्रीसंवरतत्त्वविचारः समाप्त. ॥ ६ ॥



अथ निर्जरातत्त्वविचारः प्रारभ्यते ॥

बारसविहं तवो णि,-ज्जरा य बंधो चउ
विगप्पो अ ॥ पयई-ठिइ-अणुभाग,-
पएस-भेएहिं नायव्वो ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ मीना छूटा शब्दना अर्थ

बारस-बार	अ-अने
विह-प्रकारे.	पयई-प्रकृति.
तवो-तप	ठिइ-स्थिति
णिज्जरा-निर्जरा	अणुभाग-अणुभागरस.
य-अने	पएस-प्रदेश.
बंधो-बंधतत्त्व.	भेएहिं-भेद वडे.
चउ-चार	नायव्वो-जाणवु.
विगप्पो-विकल्पो.	

विस्तारार्थ.-गाथाना पूर्वार्द्धमांना एक एक वाक्ये करी निर्जरातत्त्वनु वर्णन करे छे-निर्जरा वे प्रकारे छे. एक द्रव्यनिर्जरा, बीजी भावनिर्जरा, तथा अकाम अने सकाम एवा वे भेदे

पण निर्जरा छे, ते कहे छे—पुद्गलकर्मनुं जे सा-
रुवुं, ते द्रव्यनिर्जरा अने आत्माना शुद्ध परि-
णामे करी कर्मनी स्थिति जे पोतानी मेले पाके
अथवा बार प्रकारनां तपे करी नीरस कस्यां
एवां जे कर्मपरमाणु, ते जेनाथी सडे, एवा जे
आत्मानां परिणाम थाय, ते भावनिर्जरा जा-
णवी तथा तिर्यंचादिकनी पेठे इछा विना कष्ट
सहन करतां कर्मपुद्गलनु जे क्षपण थाय छे, तेने
द्रव्यनिर्जरा अथवो अकामनिर्जरा कहीए, अने
बार प्रकारनां तपे करी संयमी थकां कष्ट सहन
कस्याथी जे कर्मपरमाणुर्उनु क्षपण करवुं, अथवा
सारुवुं, तेने भावनिर्जरा अथवा सकाम निर्जरा
कहीऐ ए बन्ने निर्जरामा भावनिर्जरा अथवा
सकामनिर्जरा श्रेष्ठ छे ते (णिज्जरा के०) निर्जा-
रा, एटले निर्जरातत्त्व (बारसविहं के०) द्वादश
विधं एटले बार प्रकारनां (तवो के०) तप एटले

तप, तेना भेदे करी कह्यु छे एटले बार प्रकारनुं तप करवाथी अनादि संबद्ध सर्व कर्मोनुं परिशाटन थाय छे. तेनेज सातमुं निर्जरातत्त्व कहे छे.

हवे गाथाना पूर्वार्द्धमांना "बंधो" ए शब्दथी बंधतत्त्व आरंभ थाय छे (बधो के०) बंध., ते बंधतत्त्व एटले कर्मनु बांधवुं, ते (चउविगप्पो के०) चतुर्विकल्प., एटले चार भेदे छे ते आ प्रमाणे–(पयइट्ठिइअणुभागपएसभेएहिं, प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशभेदैः.,) एटले एक प्रकृति ते प्रकृतिबंध, एटले कर्मनुं स्वभावपरिणमनरूप छे बीजो स्थिति एटले स्थितिबंध, ते कर्मनुं कालपरिणामरूप छे त्रीजो अणुभाग एटले अणुभागबंध, ते कर्मनुं तीव्र मंदादि रस परिणामरूप छे, अने चोथो प्रदेश एटले प्रदेशबंध, ते कर्मपुद्गलना प्रदेशपरिमाणरूप छे. ए चार भेदोए

करीने बंधतत्त्व सम्यक्दृष्टि जीवे (नायव्वो के०) ज्ञातव्यः, एटले जाणवुं ॥ ३४ ॥

अहीं कर्मना चार प्रकारना बंधमां संक्षेपथी मोदकनुं शास्त्रप्रसिद्ध द्रष्टांत आ प्रमाणे छे— जेम शुंठ्यादि द्रव्यना संयोगथी कोइ लाडुनो स्वभाव वातादिकने दूर करवानो होय छे, तेम आठ कर्मना स्वभाव जुदा जुदा होय छे, एटले जे कर्मनो जे स्वभाव, ते स्वभावसहितज ते कर्म बंधाय, ते प्रकृतिबंध कहेवाय छे. तथा जेम कोइ मोदक अमुक मुदत सुधी सारो रहे? त्यार पछी विकार पामे, तेम कोइक कर्म आत्मानी साथे अमुक काळ सुधी संबधथी बधाइ रहे, पछी आत्माथी अलग थइ ते ते स्वभाव रहित थइ जाय, ते प्रमाणे कर्मने कर्मपणे रहेवानो काळ पण बधमां समयेज नियमित थाय ते माटे कर्मना काळनो नियम ते स्थितिबंध

कहेवाय तथा जेम कोइक मोदको मधुरादि भिन्न भिन्न रसवाळा होय, तेम कोइक शुभ (हर्ष सुख) रसवाळुं, अथवा कोइक कर्म अशुभ (शोक दुःख) रसवाळु होय, तेमा पण तीव्र तीव्रतर-तीव्रतम तथा मंद-मंदतर-मंदतम भेदे शुभ अशुभ रसानुभव थाय, ए रीते शुभाशुभ विपाकनो नियम पण कर्मबंध वखतेज थाय, ते रसबंध कहेवाय वळी जेम कोइक मोदको न्यूनाधिक द्रव्य संयोगथी नाना मोटा होय, तेम कोइक कर्म न्यूनाधि प्रदेश (अणु) वाळुं होय, ते प्रदेशबंध कहेवाय ते आगळ ३७ मी गाथामां विस्तारथी कहेवामां आवशे.

हवे बार प्रकारनां तप वडे कर्मोनी निर्जरा थाय छे. तेने निर्जरातत्त्व कहे छे ते तपना बे भेद छे एक बाह्य तप अने बीजुं अभ्यतर तप. तेमां प्रथम छ प्रकारनां बाह्य तपनुं कथन करे छे—

अणसण-मूणोअरिया, वित्तीसंखे-
वणं रसच्चाओ ॥ कायकिलेसो संली,-
णया य वज्झो तवो होई ॥ ३५ ॥

गाथा ३५ मीना छूटा शब्दना अर्थ

अणसण-अनशन	सलीणया-सलीनता
ऊणोअरिया-ऊणोदरिका	य-अने.
वितीसखेवण-वृत्तिसक्षेप	वज्झो-बाह्य.
रसच्चाओ-रसत्याग	तवो-तप
कायकिलेसो-कायक्लेश	होई-छे

विस्तारार्थः-पहेलुं (अणसणं के०) अनशनं, एटले अनशन तप, ते आहारनो त्याग करवो, तेना बे भेद छे-एक इत्वर, अने बीजो यावत्कथिक. तेमां छेल्ला तीर्थंकरने वारे छठ अठमादिकथी मांडीने छमासी पर्यंत, अनेक विधिए जे नियमयुक्त अशननो त्याग करवो, ते इत्वर अनशन कहीए, अने यावत्कथिक जे जावजीव

अनशन ग्रहणरूप, तेना बे भेद छे—एक पाद-पोगम, बीजुं भत्तपच्चरकाण ए बन्नेना वली निहारिम अने अनिहारिम, ए बे बे भेद छे तेमां अनशन कीधा पछी शरीरने बहार काढवुं पडे, ते निहारिम अने अनशन कीधा पछी तेज स्थानके रहेवुं, परंतु शरीरने त्यांथी बहार काढवुं न पडे, गुफादिक मांहेज राखवुं पडे, ते अनिहारिम

बीजुं (ऊणोअरिया के०) ऊनोदरिका, एटले ऊणोदरिका तप ते अशन प्रमुखनी न्यूनता करवी, तेना बे भेद छे. एक द्रव्यथी, बीजु भावथी, तेउमांना द्रव्यऊणोदरीना बे भेद छे. एक उपकरणनी न्यूनता करवी, बीजु भात पाणीनी न्यूनता करवी. तथा भावथी ऊणोदरी ते रागादिक क्रोधादिक अल्प करवा, एटले क्रोधादिकनी न्यूनता करवी.

त्रीजुं (वित्तीसंखेवणं के०) वृत्तिसंक्षेपणं, एटले वृत्तिसंक्षेप तप, तेना चार ज्ञेद छे. एक द्रव्यथी, बीजुं क्षेत्रथी, त्रीजुं कालथी अने चोथुं ज्ञावथी. ए चार प्रकारे वृत्ति एटले आजीविका तेनो संक्षेप करवो, एटले अजिग्रह करवा, नियमादिक धारवा, ते वृत्तिसंक्षेप

चोथुं (रसच्चार्ज के०) रसत्यागः, एटले रसत्याग तप, ते नीवी तथा आंबिल प्रमुखनुं करवुं, विगयादिक रसनो त्याग करवो.

पांचमुं (कायकिलेसो के०) कायक्लेशः, एटले कायक्लेश तप, ते लोचादिक कष्टनुं सहन करवुं, कायोत्सर्ग करवो, तथा उत्कटादिक आसननुं करवुं.

छहुं (संलीणया के०) संलीनता, एटले संलीनता तप, ते अंगोपांगादिकनुं संवरवुं, गोपन

करवुं. तेना चार नेद छे. पहेलुं इंद्रियसंलीनता, बीजुं कषायसंलीनता, त्रीजुं योगसंलीनता अने चोथुं विविक्तचर्यासंलीनता, एटले एकांत वस्ती... ए रहेवुं

ए रीते ए ठ प्रकारनुं बाह्य तप, ते सर्वथी तथा देशथी एवा बे नेदे जाणवुं जे कष्टने मिथ्यात्वीउ पण तप करी माने ठे, जेने लोक पण देखी शके छे, जेथी कष्ट घणुं ने लाज अल्प थाय, अने बाह्य शरीरने तपावे, तेथी ए ठ प्रकारनुं (वज्जो के०) बाह्यं, एटले बाह्य (तवो के०) तपः, एटले तप (होइ के०) नवति, एटले ठे ॥३५॥

ठ प्रकारनो आन्यंतर तपनुं कथन करे ठे–

पायछित्तं विणउ, वेयावच्चं तहेव सद्यार्उ ॥ जाणं उस्सग्गो वि अ, अप्निंतरउ ... होई ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ मीना नुटा शब्दना अर्थ.

पायच्छित्त–प्रायश्चित्त	झाण–ध्यान
विणओ–विनय	उस्सग्गोवि अ–कायोत्सर्गपण.
वेयावच्च–वैयावृत्य.	अभितरओ–अभ्यतर.
तहेव–तेमज	तवो–तप.
सज्झाओ–स्वाध्याय.	होई–छे.

विस्तारार्थ.–पहेलुं (पायच्छित्तं के०) प्रायश्चित्तं एटले प्रायश्चित्त ते तप, कीधेला अपराधनी शुद्धि करवी, कपटरहितपणे लागेला दोषने गुरु आगल प्रकाश करी तेनी गुरुमुखे आलोयणा लेवी तेना दश भेद छे मात्र गुरुनी आगल पोताना करेला अपराधनुं कथन करवुं, तथा गोचरी प्रमुखनु जे आलोचवुं, ते पहेलुं आलोचन प्रायश्चित्त. फरी पापने न करवाना हेतुथी तथा पुंज्या विना पातरुं प्रमुख परठववाथी मिच्छामि डुक्कड देवुं, ते वीजुं प्रतिक्रमण प्रायश्चित्त शब्दादिक विषय उपर रागादिक करवाथी अथवा

बीजी हरकोइ रीते जे पाप लागे, तेनुं आलो-
चन करवुं, अने बीजुं मिच्छामि दुक्कडं पण देवुं,
एटले बन्ने वानां करवां ते त्रीजुं मिश्र प्रायश्चित्त.
अशुद्ध जात पाणी प्रमुखनो जे त्याग करवो, ते
चोथुं विवेक प्रायश्चित्त. कुस्वप्नादिक दीठाथी
कायोत्सर्ग करवो, ते पांचमुं कायोत्सर्ग प्राय-
श्चित्त पृथ्वीकाय प्रमुखनो संघट्ट थवाथी नीवी
प्रमुख जे छमासी पर्यंत तप करवुं, ते छठुं तप
प्रायश्चित्त पृथिवी आदिकनो संघट्ट थवाथी कां-
इक दीक्षापर्यायनी न्यूनता थइ होय, ते अप-
राधनुं निवारण करवाने जे दुर्दम तप करवुं, ते
सातमुं छेद प्रायश्चित्त मूलगुण भंग थवाने ली-
धे सर्वथा व्रत पर्यायनुं छेदन थवाथी फरी जे
महाव्रत लेवां, ते आठमुं मूल प्रायश्चित्त अति
सक्लिष्ट परिणामे करी कोइनो घात पात थइ
गयो होय, तो सूत्रोक्त विधिए करी तप करवुं,

अने त्यार पठी फरी महाव्रतनो जे आरोप क-रवो, अथवा करेला दोषनो जे तपरूप दंम आ-प्यो ठे, ते ज्यां सुधी न करे त्यां सुधी महाव्रत मां न स्थापवो, ते नवमुं अनवस्थाप्य प्रायश्चित्त. साध्वी अथवा राजानी राणी प्रमुख स्त्रीने विषे संजोग थइ गयाथी बार वर्ष पर्यंत क्रिया सहित अने लिंगादिक जेदे रहित तीर्थ प्रजावना करी, फरी दीक्षा लइने जे गह्मां आववुं, ते दशमुं पारांचित प्रायश्चित्त. ए दश प्रकारे प्रायश्चित्त तप कह्युं.

बीजुं (विणर्ज के०) विनयः, एटले विनय तप, एटले गुणवंतादिकनी जक्ति करवी, तथा अशा-तना टालवी, इत्यादिक एना सात जेद ठे.

तेमां प्रथम ज्ञाननो विनय पांच जेदे ठे. त्यां मत्यादि पांच प्रकारनां ज्ञाननी बाह्यथी सेवा क-रवी, ते पहेलो जक्ति विनय. पांच ज्ञाननुं अंतरंग

प्रीति सहित बहुमान करवुं, ते बीजो बहुमान विनय. पांचे ज्ञाने करी दीठेला जाणेला पदार्थोनी सम्यक् प्रकारे जे अनुभवथी जावना करवी, ते त्रीजो जावना विनय. पांचे ज्ञाननुं विधिए करी ग्रहण करवुं, ते चोथो विधिग्रहण विनय. अने पांचे ज्ञाननो जे अभ्यास करवो, ते पांचमो अभ्यास विनय.

बीजो दर्शननो विनय बे जेदे छे, पहेलो शुश्रूषा विनय एटले उचित क्रियानुं साचववुं, बीजो अनाशातना विनय, एटले अनुचित क्रियाथी निवर्त्तवुं, अथवा आशातना करवी नहीं. एवी रीते दर्शननो विनय बे प्रकारे छे ए बे प्रकारनो विनय कोने विषे करवो? ते कहे छे. जे साधु अथवा साधर्मी पोताथी दर्शनगुणे करी अधिक होय, तेने विषे शुश्रूषा विनय करवो. ते शुश्रूषानुं स्वरूप अनेक प्रकारे छे. ते कहे छे.

१ सत्कार एटले स्तवन तथा वंदनादिक करवां. २ अन्युत्थान एटले आसनथी उठवुं. ३ सन्मान एटले वस्त्र तथा पात्रादिके करी पूजा करवी. ४ आसन परिग्रहण एटले अति आदरे करी आसन लावी आपीने स्वामी ! आ आसन उपर बेसो, एम मुखथी कहेवुं तेमज ५ आसननुं प्रदान एटले मात्र मुखथकी कहेवुं एटलुंज नहीं, पण ते प्रमाणे आसन देवुं. ६ कृतिकर्म एटले वंदना करवी. ए साधु प्रमुखनी अपेक्षाए जाणवु. ७ अंजलिग्रहण एटले हाथ जोमवा. ८ आवतानी सामे जवुं, तेमज ९ बेठेलानी (पर्युपासना) सेवा करवी. १० जनाराने वोलाववा जवुं. ए दश प्रकारे शुश्रूषारूप पहेलो विनय थाय छे.

बीजा अनाशातना विनयना पिस्तालीश नेद छे, ते कहे छे–१ रुषभादिक चोवीश तीर्थंकर, तथा २ जिनप्ररूपित धर्म, ३ धर्माचार्य अथवा

प्रव्रज्याचार्य, ४ व्यारयान करनार, वाचनाना दातार–वाचक, ५ वय, पर्याय तथा श्रुत, ए त्रण प्रकारना स्थविर, ६ कुल, ते चांद्रादिक एक आचार्यनी संतति, ७ गण, ते पोते पोतामां सापेक्ष कुलनो समुदाय कोटिकादिक, ८ संघ, ते ज्ञानादिक गुण सहित साधुसमुदाय, अथवा गणसमुदायरूप ए सांभोगिक, ते एक मण्डलीमा जे साथे व्यवहार होय ते, १० क्रियामां जे पोताना सरखी क्रियावाला होय ते एमनी साथे मतिज्ञानादिक पांच ज्ञान मेलवतां पदर थया. तेने विषे १ आशातनानो त्याग करवो, तेमज २ जक्ति सहित बहुमान करवुं, तथा ३ छता गुण वर्णवीने यश कीर्त्ति दीपाववी एवी रीते पूर्वोक्त पन्नरने ए त्रणे गुणतां अनाशातना विनयना पीस्तालीश नेद थाय छे ए अनाशातनारूप चीजो विनय कह्यो

त्रीजो चारित्रनो विनय पांच नेदे ले, ते कहे ले–सामायिक प्रमुख पांच चारित्रोनी सद्दहणा करवी, तेमज कायाए करी फरसवुं, आदरवुं, पालवुं, तेमज नव्य प्राणीनी आगल प्ररूपणा करवी.

त्रण प्रकारना योगनो विनय कहे ले–आचार्यादिकोनो सर्व कालने विषे मन, वचन तथा कायाए करी विनय करवो. एटले मने करी मातुं चितववुं नहीं, वचने करी मातुं बोलवुं नहीं. तथा कायाए करी माठी प्रवृत्ति करवी नहीं. तेवी रीतेज ते आचार्यादिकने विषे मन, वचन अने कायाने शुन प्रवृत्तिमां उदीरवां, प्रवर्त्तावर्वा. ए रीते त्रण प्रकारे योगनो विनय ते पूर्वोक्त त्रण विनयनी साथे नेलतां ठ नेद विनयना थया.

सातमो लोकोपचार विनय सात नेदे ले, ते कहे ले–गुरु प्रमुख जे श्रेष्ठ पुरुष होय, तेउनी ^पे वसवुं, २ आराधवा योग्य पुरुषनी इच्छाए

प्रवर्त्तवुं, ३ पोतानी उपर उपकार करे, तेनी उपर पाछो प्रत्युकार करवो, एटले गुरुने जो हुं विनये करी प्रसन्न करीश, तो ते मने शास्त्रदान देशे, एवा अभिप्राये करी गुरुने जात पाणी प्रमुख लावी देवुं, ४ तेमज ज्ञानादिक जे कार्य तेनुं कारण जे जात पाणी प्रमुख, तेनुं करवुं एटले देवुं, ५ तथा दुःखे करी पीडायेला जे ग्लान, तेनी औषधादिके करी गवेषणा करवी, ६ तेमज देश तथा कालनुं जाणवुं, जे अवसरे जे उचित होय, ते अवसरे ते करवुं, ७ वडिलो संबंधी सर्व कार्योने विषे अनुकूलपणु एटले तेमनां कार्य करवामा उजमालपणु राखवुं इति जाव. एवी रीते लोकोपचार विनय सात प्रकारे छे एम विनयना सात भेदे करी वीजुं विनय तप जाणवुं. यद्यपि विनय तो एकज छे, तथापि ज्ञान, दर्शन चारित्र, मन, वचन, काया अने लोकोपचार, ए

सात विषये करी विनय करीए, तेथी ए बीजुं विनय तप पण सात प्रकारनुं कह्यु छे.

त्रीजुं (वेयावच्चं के०) वैयावृत्य, एटले वैयावृत्य तप, ते आचार्यादिकने ज्ञान, पाणी प्रमुख संपादनारूप उपष्टंभ (आधार) दइए, ते दश भेदे छे यथा–"आयरियं उवज्झाए थेरे तवस्सी गिलाणं सेहाणं ॥ साहम्मी कुल गणं सं,–घं वेयावच्चं हवइ दसहा ॥१॥ (आयरिय) आचार्य ते जेनी पासेथी धर्म प्राप्त थाय छे ते (उवज्झाय) उपाध्याय, ते जे विद्याभ्यास करावे छे ते. (थेर) स्थविर, ते ज्ञान, पर्याय तथा वय, ए त्रण प्रकारे (तवस्सी) तपस्वी ते अठम प्रमुख तप करनार होय ते (गिलाण) ग्लान, एटले रोगी होय ते. (सेहाण) शिष्य, नवी दीक्षा लीधेलो होय ते. साहम्मी, ते समान धर्मवान होय ते. कुल, ते चंद्रादिक कुलवान् होय ते गण, ते

कोटिक प्रमुख. संघ, ते समुदायरूप होय ते एवी रीते ए दशनी अशन, पान, वस्त्र, पात्र तथा ओषध प्रमुखे करी यथायोग्य सेवा करवी, तेने त्रीजुं वैय्यावृत्य तप कहे छे.

(तहेव के०) तथैव, एटले तेमज चोथुं (सज्झाओ के०) स्वाध्याय., एटले स्वाध्याय ए नामनुं तप, ते पांच भेदे छे यथा "वायणा पुच्छणा चेव, तहा य परिअट्टणा, अणुप्पेहा, धम्मकहा, सज्झाओ होइ पचहा' (वायणा के०) वाचना, ते पोते जाणवुं, शिष्यादिकने जणाववुं तथा वांचवुं (चेव के०) चेव, तेमज (पुच्छणा के०) पुछना, ते जे सूत्रार्थमां संदेह पड्यायी गुर्वादिकने पूछवुं ते. (तहाय के०) तथा च, अने वली तेयी रीतेज (परिअट्टणा के०) परिवर्त्तना, ते पूर्वे शीखेलो जे अर्थ, तेने फरी संभारवा ते (अणुप्पेहा के०) ... ते पूर्वे धारेला अर्थनुं चिंतवन करवुं

ते. (धम्मकहा के०) धर्मकथा, ते धर्मसंबंधी कथा कहेवी अथवा धर्मोपदेश करवा ते. ए प्रकारे (सज्जाओ होइ पचहा के०) स्वाध्यायो जवति पचधा, एटले स्वाध्याय तप पांच न्नेदे थाय बे, ते कह्युं.

पांचमुं (जाण के०) ध्यानं, एटले ध्यान, ते मननुं जे एकाग्रताए अवलंबन ते ध्यान तप, ते चार न्नेदे बे.

तेमा पहेलु आर्त्तध्यान, एना वली चार न्नेद बे—च्राता, मित्र, स्वजन, माता, पिता, सुहृद्, नृत्य तथा पशु प्रमुख जे पोताने इष्ट एटले अति प्रिय होय तेमनुं, तथा शातावेदनीय, तेउनो वियोग थयाथी जे चिंता, शोक अथवा विलाप करवो, ते पहेलुं इष्टवियोग आर्त्तध्यान. मनने अणगमता जे विषय, अने तेना आधारजूत जे रासज कोटी प्रमुख अशुजनो संयोग थयाथी

तेउने विषे द्वेषे करा जे वियोगनुं चिंतवन करवुं, ते बीजुं अनिष्टसंयोग आर्त्तध्यान. शरीरने विषे कोइ रोगनी उत्पत्ति थयाथी तद्विषयक जे चिंतादिकनुं करवुं, ते त्रीजुं रोगचिंता आर्त्तध्यान अमुक समय आव्याथी हुं आ कार्य करीश, इत्यादिक नविष्यकालने विषे जे शोचना करवी तथा दान, शील, तप प्रमुखे करीने पठी ,तेना फलनी जे इञ्चा करवी, अथवा आ नवने विषे में एवां उग्र तप कर्यां ठे, माटे आवता नवमां मने अमुक वस्तुनी प्राप्ति थजो, एवुं जे नियाणुं बांधवुं, ते चोथुं अग्रशोच आर्त्तध्यान कहीए.

बीजुं "रोद्र" ए नामनुं ध्यान, तेना चार नेद ठे –द्वेषे करी प्राणीने मारवानी अथवा बंधनादिक करवानी जे चिंतवना करवी, ते पहेलुं हिंसानुबंधी रोद्रध्यान पैशुन्यादिक असत्य असद्भूत वचन बोलवाना तथा ठलादिक करवाना

जे अध्यवसाय ते बीजुं मृषानुबंधी रौद्रध्यान. क्रोध तथा लोजादिकने वश थइने बीजानुं द्रव्य हरण करवानी जे चिंतवना करवी, ते त्रीजु स्तेयानुबंधी रौद्रध्यान. शब्दादिक विषयनुं साधनभूत जे धन, तेना रक्षण करवाने अर्थे सर्व स्वसंबंधीउंने विषे दुष्ट चिंतवन करवुं ते, जेमके जो आ सर्व जीवतां हशे, तो मारुं धन लइ लेशे, माटे जो ते मरी जाय, तो सारुं थाय, एवी जे दुष्ट चिंतवना करवी, ते चोथु संरक्षणानुबंधी रौद्रध्यान कहीए ए आर्त्त अने रौद्र बेहु ध्यान संसार संबंधी फलनां देनारां छे.

त्रीजा धर्मध्याननां चार जेद छे—ज्ञान, दर्शन चारित्र तथा वैराग्यजावनाए करी वीतरागनां वचन उपर जे सद्दहणा, एटले श्रद्धा न राखवी. आपणी मति तुछ छे, पण केवलिजाषित सर्व सत्यज छे, एवी जे चिंतवना करवी, ते पहेलुं

आज्ञाविचय धर्मध्यान. राग द्वेषादिक जे आश्रव छे, ते इहलोक परलोकने विषे अपायभूत, एटले अनर्थरूप छे, एवी जे चिंतवना करवी, ते बीजुं अपायविचय धर्मध्यान. सुखदुःखादिक नो विपाक आवी प्राप्त थयाथी तेनो हर्ष शोक न करतां तेने मात्र पूर्वकृत कर्मनुं फल जाणवुं, ते त्रीजु विपाकविचय धर्मध्यान. जिनोक्त षट् द्रव्यनां लक्षण संस्थानादिकनी जे चितवना करवी, ते चोथु सस्थानविचय धर्मध्यान कहीए

चोथा शुक्लध्याननां चार भेद छे–प्रत्येक द्रव्यने विषे उत्पादादि पर्यायना भेदपणानु चिंतवन करवुं, शब्दथी शब्दांतरे तथा अर्थथी अर्थांतरे अने द्रव्यथी द्रव्यांतरे सक्रमण करवुं, तथा एक योगथी बीजा योगने विषे एटले मनोयोगथी वचनयोगने विषे, वचनयोगथी काययोगने विषे संक्रमण करवुं, इत्यादिक ते पहेलुं पृ-

थक्त्व वितर्क सविचार शुक्लध्यान. ए ध्यान त्रां-गिक श्रुतपाठीने त्रणे योग छतां थाय छे. ए प्रथम न्नेद.

२ उत्पादादिक एक पर्याये करी निर्वात स्थानरूना दीपकनी पेठे निष्प्रकप चित्तवान् थइने पूर्वलाथी विपरीत रहेवुं, ते वीजुं एकत्वपृथक्त्व अविचार शुक्लध्यान. ए ध्यान गमे ते एक योग थकां थाय छे. ए वे ध्यान यद्यपि पूर्वगत श्रुतावलंबीने होय छे, तथापि मरुदेव्यादिकने श्रुत विना पण थयां हतां, ए विशेषता छे.

३ तेरमा गुणठाणाने अंते मनोयोग तथा वचनयोग रुंध्या पछी काययोग रुंधतां होय, ते त्रीजुं सूक्ष्मक्रिया अनिवृत्ति नामे शुक्लध्यान. आ ध्यान एकला मात्र काययोगेज थाय छे.

४ शैलेशीगुणठाणे गये थके क्रियाविच्छेद थइने जे पाछुं पमवुं नहीं, ते चोथुं व्युच्छिन्नक्रिया

अप्रतिपाति शुक्लध्यान कहीए. ए ध्यान योगना अन्नावे थाय ठे. ध्यानपणुं पूर्व प्रयोग वडे थाय ठे, जेम दन्म वडे चक्र फेरवीने ते दन्म काढी ली-धा पठी पण पूर्वना प्रयोगथी चक्र फरतुंज रहे ठे, तेम जाणवुं. ए चार ध्यान कह्यां, पण अ-न्यतर तपमां मात्र धर्मध्यान अने शुक्लध्यान ए बे उपयोगी ठे, केमके ए बे मोक्षना कारण-न्नूत ठे.

हवे (उस्सग्गो वि अ के०) उत्सर्गोऽपि च, ए-टले उत्सर्ग ते कायोत्सर्ग तप पण द्रव्यथी तथा न्नावथी बे न्नेदे ठे. तेमां द्रव्योत्सर्गना चार न्नेद ठे, अने न्नावोत्सर्गना त्रण न्नेद ठे, तेमां प्रथम द्रव्योत्सर्ग कहे ठे

१ गन्ननो त्याग करी जिनकल्पादिक जे आ-दरवो, ते पहेलो गणोत्सर्ग, २ अणसणादिक व्रत लइने शरीरनो जे त्याग करवो, ते बीजो देहोत्सर्ग'

३ कल्पविशेषे उपधिनो जे त्याग करवो, ते त्रीजो उपध्युत्सर्ग, ४ अधिक अशनादिक लेवानो त्याग करवो तथा अशुद्ध जात पाणी एटले अशनादिक चारने लेवानो जे त्याग करवो, ते चोथो अशुद्धजत्तपाण उत्सर्ग ए चार प्रकारे द्रव्यथी उत्सर्ग जाणवो. उत्सर्ग एटले त्याग करवो, ए अर्थ समजवो.

हवे जावोत्सर्गना त्रण जेद कहे छे १ क्रोधादिक चारनो जे त्याग करवो, ते पहेलो कषायोत्सर्ग. २ नरकादिकना जवनुं आउखुं बांधवानां कारण, जे मिथ्यात्वादिक छे, तेनो जे त्याग, ते बीजो जवोत्सर्ग, अर्थात् संसारोत्सर्ग ३ बंधना हेतु जे ज्ञानावरणीयादिक कर्म ज्ञानप्रत्यनीकपणादिक छे, तेनो जे त्याग, तेने त्रीजो कर्मउत्सर्ग कहीए ए जावथी उत्सर्ग त्रण जेदे कह्यो, एथी कर्मनी निर्जरा थाय छे ए रीते ए छ प्रकारे (अजितरर्ज तवो के०) आज्यतरं तपः,

एटले आभ्यतर तप (होई के०) जवति, एटले छे, ए छ जेदने सम्यक्दृष्टि जीव तप करी माने. एम ए बार प्रकारनां तपे करी निर्जरा-तत्त्व कह्यु ॥ ३६ ॥

॥ इति श्री निर्जरातत्त्वविचारः समाप्तः ॥ ७ ॥

पूर्वोक्त बधतत्त्वना वार प्रकारनुं वर्णन करे छे--

पयइ सहावो वुत्तो, ठिइ कालाव-
हारणं ॥ अणुजागो रसो णेर्ज,
पएसो दलसंचर्ज ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

पयइ–प्रकृति
सहावो–स्वभाव.
वुत्तो–कह्यो छे.
ठिइ–स्थिति
कालावहारण–काळनु अव-
अणुभागो–अनुभाग.
रसो–रस.
णेओ–जाणवो.
पएसो–प्रदेश.
दल–दल.
सचओ–सचय

विस्तारार्थः—अहींयां चार प्रकारनो बंध, ते मोदकने दृष्टांते जाणवो. जेम सुंठ प्रमुख पदार्थ नाखीने मोदक करयो होय, ते वायुरोगनु हरण करे छे, जीरुं प्रमुख टाढी वस्तु नाखीने मोदक करयो होय, ते पित्तरोगनु हरण करे छे, इत्यादिक जे द्रव्यना संयोगे करी मोदक नीपन्यो होय, ते मोदक द्रव्यगुणानुसारे वात, पित्त तथा कफादिक रोगोनुं हरण करे छे, ते तेनो स्वभाव जाणवो. तेम ज्ञानावरणीय कर्मनो ज्ञान अपहारक स्वभाव छे, सामान्य उपयोगरूप जे दर्शन, तेने नाश करवानो दर्शनावरणीय कर्मनो स्वभाव छे, अनंत अव्याबाध सुखने टालवानो वेदनीय कर्मनो स्वभाव छे, सम्यक्त्व तथा चारित्रने टालवानो मोहनीय कर्मनो स्वभाव छे, अक्षय स्थितिने टालवानो आयुःकर्मनो स्वभाव छे, शुद्ध अवगाहनाने टालवानो नाम कर्मनो स्वभाव छे,

आत्माना अगुरुलघु गुणने टालवानो गोत्र कर्मनो स्वजाव ठे, अने अनंत दान, अनंत लाज, अनंत भोग, अनत उपजोग तथा अनत वीर्य, तेने टालवानो अंतराय कर्मनो स्वजाव ठे

तेम इहां प्रथम (पयड के०) प्रकृति, एटले प्रकृतिबंध, ते कर्मना (सहावो के०) स्वजाव, एटले स्वजाव (वुत्तो के०) कहेलो ठे

२ जेम ते मोदकनु पक्ष, मास, बे मास, त्रण मास तथा चार मास सुधी रहेवानु कालमान होय, तेने स्थिति कहीए, तेम कोइक कर्म पण जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्त स्थिति रहे, अने उत्कृष्टताए सीत्तेर कोमाकोमी सागरोपम प्रमाण स्थिति रहे, ते स्थितिनी बचमां जे कर्म जेटली रहेवानी स्थितिए बांध्यु होय, ते कर्म तेटलो काल रहे, तेने (कालावहारण के०) कालावधारण, एटले कालनं अवधारण–कालना निश्चय करवा

रूप (विइ के०) स्थितिः, एटले स्थितिबंध कहेवाय.

२ ते मोदक कोइ मीठो होय छे, कोइ कडवो होय छे, अने कोइ तीखो होय छे, तेमज कोइ मोदकनो एकठाणीयो रस होय छे, कोइकनो बे-ठाणीयो रस होय छे, इत्यादि अनेक प्रकारे अल्प विशेपत्व होय छे, तेम कोइ कर्मनो शुभ तीव्र, मंद, विपाक होय छे, अने कोइ कर्मनो अशुभ, तीव्र, मंद विपाक होय छे. जेम शाता-वेदनीयादिक कर्ममां कोइकनो शुभ रस अल्प होय, अने कोइकनो शुभ रस [illegible] होय, तेने बीजो (अणुभागो रस [illegible] रसो होय., एटले [illegible] रस-

[illegible]

थयो होय, अने कोइक वहुतर दलथी नीपन्यो होय एवी रीते मोदकनु जे दलपरिमाण तेने प्रदेश कहीए तेम कोइक कर्मपुद्गलनां दल थोडां होय छे, कोइनां वधारे होय छे, तेनुं परिमाण ते (दलमचउ के०) दलसंचय., एटले दलसंचयरूप चोथो (पएसो के०) प्रदेश., एटले प्रदेशबंध जाणवो ए रीते कर्मवध चार भेदे कह्यो. तेमां पण कर्मबंधना मुख्य चार हेतु छे, १ अज्ञान, २ अव्रत, ३ कषाय अने ४ योग, ए चारमाथी पण प्रकृति अने प्रदेशबंधनुं कारण योग छे, स्थितिबंध अने अनुभागबंधनुं कारण कषाय, अज्ञान अने अव्रत छे ॥ ३७ ॥

हवे आठे कर्मोनो स्वभाव दृष्टांते करी देखाडे छे

पडपडिहारसिमज्ज,—हडचित्तकुलाल-
भंडगारीणं ॥ जह एएसिं भावा,
[illegible] ाण तह भावा ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ मीना तूटा शब्दना अर्थ.

पड-पाटो	जह-जेम
पडिहार-प्रतिहार, पोळीओ.	एएसिं-ए (वस्तुओ).
असि-खड्ग, तरवार.	भावा-स्वभाव
मज्ज-मदिरा	कम्माणवि-कर्मनो पण
हड-हड	जाण-समज
चित्त-चितारो	तह-तेमज
कुलाल-कुभार.	भावा-स्वभावा.
भंडगारीण-भंडारी.	

विस्तारार्थ.-(पडपडिहारसिमज्जहडचित्तकुलालभंडगारीणं के०) पटप्रतिहारासिमद्यहडिचित्रककुलालभांडगारीणां, एटले पाटो १, प्रतिहार २, खड्ग ३, मदिरा ४, हड ५, चितारो ६, कुंभार ७ अने भंडारी ८, (एएसिं के०) एतेषां, एटले वस्तुओना (जह के०) यथा, एटले जे प्रमाणे (भावा के०) भावा., एटले भावो छे. (तह के०) तथा, ते प्रमाणे (कम्माणवि के०) कर्मणा-

मणि, एटले आठ कर्मोना जावोने (जाण के०) जानीहि, एटले (गुरु कहे ठे के, हे शिष्य !) तुं जाण—समज ते विस्तारथी कहे ठे— पहेलु ज्ञानावरणीय कर्म, तेनो स्वजाव आंख-ना पाटा समान ठे तेना पांच जेद ठे तेमा १ जेना उदयथी औत्पातिकी, वैनयिकी, कार्मणि-की, पारिणामिकी ए चार प्रकारनी बुद्धि न उपजे, ते प्रथम मतिज्ञानावरणीय कर्म २ जेना उदयथी जणवुं, गणवुं न आवडे, अथवा वाचवा तथा सांजलवा उपर रुचि उत्पन्न न थाय, ते बीजु श्रुतज्ञानावरणीय कर्म ३ जेना उदयथी अवधिज्ञान न उपजे, ते त्रीजु अवधिज्ञानावर-णीय कर्म ४ जेना उदयथी मन पर्यवज्ञान न उपजे, ते चोथुं मन पर्यवज्ञानावरणीय कर्म ते-मज ५ जेना उदयथी केवलज्ञान न [illegible]
[illegible] न [illegible] ीय कर्म कहीए

नावरणीय कर्म ते जीवना अनंत ज्ञानगुणने रोके छे.

बीजुं दर्शनावरणीय कर्म, ते पोळीया (छडी-दार) समान छे. जेम कोइ एक जीव राजानुं दर्शन करवा वांछे, पण पोळीयो दर्शन करवा न आपे, तेम जीवनो सामान्यपणे सर्व वस्तु देखवानो स्वभाव छे, पण दर्शनावरणीय कर्मना उदयथी न देखे, ते दर्शनावरणीय कर्म चार प्रकारे छे १ चक्षुदर्शनावरणीय, २ अचक्षुदर्शनावरणीय, ३ अवधिदर्शनावरणीय, अने ४ केवलदर्शनावरणीय तथा ए कर्मना उदयथी १ निद्रा, २ निद्रानिद्रा, ३ प्रचला, ४ प्रचलाप्रचला, अने ५ थीणद्धी, ए पांच प्रकारनी निद्रा पण होय. ए सर्व मळी नव प्रकारनां दर्शनावरणीय कर्म जीवनो अनंत दर्शनगुण रोकयो छे

त्रीजु वेदनीय कर्म, ते मधुलिप्त तीक्ष्ण खड्ग-नी धारानुं जे चाटवुं, ते समान छे जेम ते खड्गधाराने चाटतां तो मीठाश उपजे, पण जे वारे जीन कपाय, ते वारे अशाता थाय. एम शातावेदनीयनो विपाक मध चाटवा सरखो छे, अने अशातावेदनीयनो विपाक खड्गधारा चाटवा सरखो छे ससारमां शाता ते अशाताए मिश्रित जाणवी ए बे प्रकारनां वेदनीय कर्मनो स्वभाव जीवना अव्याबाध गुणने रोकवानो छे

चोथु मोहनीय कर्म, ते मदिरानी छाक समान छे जेम मदिरा पीधे थके जीव विकल थाय छे, हित अहित कांइ जाणतो नथी, तेम मोहनीयनो उदयथी पण जीव परवश थइ जाय, धर्माधर्मने न जाणे. ए कर्मनो जीवना सम्यक्त्वदर्शनगुण तथा अनंतचारित्रगुण रोकवानो स्वभाव छे.

पांचमुं आयुः कर्म, ते हडु समान छे. जेम हडुमां पडेलो प्राणी नीकलवा वांछे, पण राजाना हुकम विना नीकली न शके, तेम ए आयुःकर्म पण यद्यपि सुखदुःख कांइ पण पोते उपजावतुं नथी, तथापि चार गतिने विषे सुखदुःखनु आधारभूत जे शरीर, तेमांहि हडुनी पेरे जीवने राखे छे जेम अशुभ नरकादिकनी गतिनुं आउखुं भोगवतो छतो जीव त्यांथी नीकलवा वांछे, पण आयु पूर्ण कीधा विना नीकली न शके ए कर्मनो जीवना अविनाशी गुण रोकवानो स्वभाव छे

छट्ठु नाम कर्म, ते चितारा समान छे, जेम निपुण चित्रकार सारां तथा नरसां, काला धोला रंगनां, नानां मोटां अनेक प्रकारना रूप आलेखे, तेम ए कर्मना उदयथी जीव पण चित्ररूप संसारमां देव तथा मनुष्यादिकनां रूडा रूप

अनेक प्रकारनां करे, अने नरक तथा एकेंद्रियादिकनां माठां रूप पण अनेक प्रकारनां करे ए कर्मनो जीवना अरूपी गुण रोकवानो स्वजाव ठे

सातमुं गोत्र कर्म, ते कुंजार समान ठे. जेम कुंजार घृतादिकनो घडो घडे, ते पूजनीय कहेवाय, अने मद्यादिकनो घट बनावे, ते निंदनीय कहेवाय, तेम जीव पण ए कर्मना उदयथी उच्च गोत्रे उपजे, तो पूजनीय थाय अने ते नीच गोत्रे उपजे, तो निंदनीय थाय. ए कर्मनो जीवना अगुरुलघु गुण रोकवानो स्वजाव ठे.

आठमुं अंतराय कर्म, ते जंमारी समान ठे. जेम राजा दान देवरावे, पण जंमारी विपरीत थको न आपे, तेम ए कर्मना उदयथी जीव दानादिक करी शके नहीं ए कर्मनो अनंत दान, अनंत लाज, अनंत जोग, अनंत उपभोग अने अनत वीर्य, एवी अनंत शक्तिना गुणने रोकवानो स्वजाव ठे. जेम ए आठ पट्टादिक वस्तुनो

स्वजाव छे, तेम आठ कर्मनो पण तेमज स्वजाव छे.'ए आठ कर्मप्रकृतिनो स्वजाव कह्यो. ३८

ए आठे कर्मनी प्रत्येके उत्तरप्रकृतिनी संख्या कहे छे.

इह नाणदंसणावर,-णवेयमोहाउ-
नामगोआणि ॥ विग्घं च पणनवडु-
अ,-ठवीसचउतिसयडुपणविहं ॥३ए॥

गाथा ३एमीना छूटा शब्दना अर्थ.

इह—अहींयां	पण—पांच.
नाण—ज्ञानावरणीय	नव—नव
दसणावरण—दर्शनावरणीय	दु—बे
वेय—वेदनीय	अठ्ठवीस—अठ्ठावीश.
मोह—मोहनीय	चउ—चार.
आउ—आयु	तिसय—एकसो त्रण.
नाम—नाम.	दु—बे.
गोआणि—गोत्र.	पच—पांच
विग्घ—अंतराय.	विह—प्रकारे, भेदे.
च—अने.	

विस्तारार्थ.–(इह के०) आ शास्त्रने विषे (नाणदसणावरण के०) ज्ञानदर्शनावरणे, एटले ज्ञानावरणीय अने दर्शनावरणीय, (वेय के०) वेद॰, एटले वेदनीय, (मोह के०) मोह॰, एटले मोहनीय, (आउ के०) आयुः, एटले आयु, (नाम के०) नाम, एटले नाम, (गोआणि के०) गोत्राणि एटले गोत्र, पूर्वोक्त ठ पदोनो व्याकरणनी रीतिए द्वंद्व समास करतां एक पद थाय. तथा ज्ञान अने दर्शन ए बे पदोनो द्वंद्व समास कर्या पठी आवरणे पदनी साथे षष्ठी तत्पुरुष समास करतां एक पद थाय. (विग्घं के०) विघ्न॰, एटले विघ्न ते अंतराय ए आठ कर्मनां नाम कह्यां ए आठ कर्मनी (च के०) वली उत्तरप्रकृति अनुक्रमे कहे ठे, तेमां ज्ञानावरणीय कर्मनी (पण के०) पच, एटले पाच प्रकृति, दर्शनावरणीय कर्मनी (नव के०) नव, एटले नव प्रकृति वेदनीय कर्मनी (ड के०) बे, एटले बे प्रकृति,

मोहनीय कर्मनी (अठ्ठवीस के०) अष्टाविंशति·, एटले अठ्ठावीश प्रकृति, आयु· कर्मनी (चउ के०) चतस्र·, एटले चार प्रकृति, नाम कर्मनी (तिसय के०) त्रिशतं, एटले एकसो त्रण प्रकृति, गोत्र कर्मनी (दु के०) द्वे, एटले बे प्रकृति, अंतराय कर्मनी (पण के०) पञ्च, एटले पांच प्रकृति, अहीं पण सख्यावाचक आठ पदोना द्वंद्व समास करी प्रकार अर्थमां वा शब्दनी साथे अव्ययीभाव समास करवाथी एक पद थाय छे. (विह के०) विधं, एटले ए प्रकारे करीने, आठ कर्मनां नाम अने तेनी उत्तरप्रकृति एकसो अठावन संख्याए जाणवी ए प्रथम प्रकृतिबंध कह्यो ॥ ३९ ॥

हवे आठे कर्मोनो उत्कृष्ट स्थितिबंध कहे छे.

नाणे अ दंसणावरणे, वेअणिए चेव अंतराए अ ॥ तीसं कोमाकोमी, अयराणं ठिइ अ उक्कोसा ॥ ४० ॥

सत्तरि कोडाकोडी, मोहणिए वीस नामगोएसु ॥ तित्तीसं अयराइं, आउठिइबध उक्कोसा ॥ ४१ ॥

गाथा ४० मीना छूटा शब्दना अर्थ.

नाणे–ज्ञानावरणीय
अ–अने.
दसणावरणे–दर्शनावरणीय
वेअणिए–वेदनीय.
चेव–निश्चे
अतराए–अतराय.
अ–अने
तीस–त्रीश
कोडाकोडी–कोडाकोडी
अयराण–सागरोपमनी
ठिइ–स्थिति.
अ–अने.
उक्कोसा–उत्कृष्टी.

गाथा ४१ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

सत्तरि–सीत्तेर
कोडाकोडी–कोडाकोडी
मोहणिए–मोहनीय.
वीस–वीश
नाम–नाम
गोएसु–गोत्रने विषे
तित्तीस–तेत्रीश
अयराइ–सागरोपमनी.
आउ–आयु.
ठिइ–स्थिति
बध–बध.
उक्कोसा–उत्कृष्टो.

विस्तारार्थ·–(नाणे के०) ज्ञाने, एटले ज्ञाना वरणीय, (अ के०) च, एटले अने (दंसणावरणे के०) दर्शनावरणे, एटले दर्शनावरणीय, (वेअ-णिए के०) वेदनीये, एटले वेदनीय (चेव के०) चैव, एटले निश्चे (अंतराए के०) अंतराये एटले अंतराय, ए चारे कर्ममां (अयराण तीसं कोमा-कोमी के०) अतराणां त्रयस्त्रिशत्कोटिकोट्यः, ए-टले त्रीश कोमाकोमी, सागरोपम (ठिइ के०) स्थितिः, एटले स्थिति (उक्कोसा के०) उत्कृष्टा, एटले उत्कृष्टी जाणवी अने (सत्तरि कोमाकोमी के०) सप्ततिः कोटिकोट्यः, एटले सीत्तेर कोमा-कोमी सागरोपम (मोहणिए के०) मोहनीये, ए-टले मोहनीय कर्मने विषे स्थिति जाणवी. तथा वीस नामगोएसु के०) विंशतिर्नामगोत्रयोः, ए-टले वीश कोमाकोमी सागरोपम नामकर्म अने गोत्रकर्मने विषे स्थिति जाणवी तथा (तित्तीस

अपराइं के०) त्रयस्त्रिंशदत्तरा, एटले तेत्रीश सागरोपमनी (आउठिइबंध के०) आयु.स्थितिबंध. एटले आयुः कर्मनी स्थितिनो बंध (उक्कोसा के०) उत्कृष्ट, एटले उत्कृष्टो जाणवो ॥ ४० ॥ ४१ ॥

हवे आठे कर्मोनो जघन्य स्थितिबंध कहे छे–

वारसमुहुत्त जहन्ना, वेयणिए अठ नामगोएसु ॥ सेसाणंतमुहुत्तं, एयं बंधठिईमाण ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

वारस–बार	सेसाण–शेष, बाकी रहेलामा
मुहुत्त–मुहूर्त्त	अतमुहुत्त–अतर्मुहूर्त्त.
जहन्ना–जघन्य	एय–ए.
वेयणिए–वेदनीयने विषे	बध–बध
अट्ठ–आठ	ठिई–स्थिति.
नाम–नाम कर्म	माण–मान, प्रमाण.
गोएसु–गोत्र कर्मने विषे	

विस्तारार्थः-(वारसमुहुत्त के०) द्वादश मुहूर्त्तं एटले बार मुहूर्त्तनी (जहन्ना के०) जघन्या,एटले जघन्य स्थिति (वेयणिए के०) वेदनीये, वेदनीय कर्मने विषे जाणवी अने (अठ के०) अष्ट, एटले आठ मुहूर्त्तनी (नामगोएसु के०) नामगोत्रयोः, एटले नाम कर्म अने गोत्र कर्मने विषे जघन्य स्थिति जाणवी. (सेसाण के०) शेषाणां, एटले शेष बाकी रह्यां जे ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय आयु अने अंतराय ए पांचे कर्मनी (अंतमुहुत्तं के०) अंतर्मुहूर्त्तं, एटले अंतर्मुहूर्त्तनी जघन्य स्थिति जाणवी अहींयां जघन्य शब्द सर्वत्र जोरुवो. (एय के०) एतद्, एटले ए (बधठिईमाणं के०) स्थितिबंधमानं, एटले कर्मना बधनी स्थितिनुं मान, एटले प्रमाण सक्षेपथी कह्यु, अने विस्तार रुचिवंत जीवे पंचम कर्मग्रंथादिकोयकी सविस्तरपणे जोइ

लेवुं ॥ ४२ ॥ इति द्वितीय स्थितिवधस्वरूप समाप्तम् ॥

८ मूलकर्मनी स्थिति अने अबाधा

कर्म	उ० स्थि०	ज स्थि,	उ० अबा	ज अ
ज्ञानाव०	३० को को सा०	१ अंतर्मु०	३००० वर्ष	अंतर्मु०
दर्शना०	,,	,	,,	,,
वेदनीय	,,	१२ मुहूर्त्त	,,	,,
मोह०	७० को को सा०	१ अंतर्मु०	७००० वर्ष	,,
आयु	३३ सा०	अंतर्मु	साधिक पूर्व क्रोड वर्षनो त्रीजो भाग	,,
नाम	२० को, को सा०	८ मुहूर्त्त	२००० वर्ष	,,
गोत्र	,,	,,	,,	,,
अंतराय	३० को को	१ अंतर्मु	३००० वर्ष	,,

हवे त्रीजु रसबंधनुं स्वरूप संक्षेपथी कहीए छीए. त्यां रागादिके ग्रस्त जीव अभव्य जीवनी

राशिथी अनंत गुणा अने सिद्धना जीवोनी राशिने अनतमे जागे एटले परमाणुए निष्पन्न कर्मस्कंध समय समय प्रत्ये ग्रहण करे ठे. ते दलीयांने विषे परमाणु दीठ कषायना वशथकी सर्व जीवनी राशिथी अनंत गुणा रस विजागना परिछेद होय. ते रस तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम तथा मंद, मंदतर, मंदतमादिक अनेक प्रकारे होय तेमां अशुज ब्याशी पापप्रकृतिनो तीव्र रस संक्लेश परिणामे करी बंधाय, अने शुज बेंतालीश पुण्यप्रकृतिनो तीव्र रस विशुद्धिए करी बंधाय, तथा मंद रसनो तेथकी विपरीत होय ते आवी रीते–शुज प्रकृतिनो मंद रस संक्लेश परिणामे करी बंधाय, अने अशुज प्रकृतिनो मंद रस विशुद्धिए करी बंधाय.

हवे प्रकृतिना एकगणीया प्रमुख रस जेणे करी बंधाय, ते कहे ठे–अशुज प्रकृतिनो चोठा-

णीयो रस अनतानुबंधी या कषाये करी बंधाय, त्रिठाणीयो रस अप्रत्याख्यानी या कषाये करी बंधाय, बेठाणीयो रस प्रत्याख्यानी या कषायेकरी बंधाय, अने एकठाणीयो रस संज्वलन कषाये करी बंधाय, तथा शुन्न प्रकृतिनो रस तेथकी विपरीतपणे जाणवो ते आवी रीते-शुन्न प्रकृतिनो चोठाणीयो रस सज्वलन कषाये करी बधाय, तथा त्रिठाणीयो रस प्रत्याख्यानावरण अने अप्रत्याख्यानावरण कषाये करी बंधाय, बे-ठाणीयो रस अनतानुबधीया कषाये करी बंधाय, अने एकठाणीयो रस तो शुन्न प्रकृतिनो ठेज नहीं, अंतरायनी पाच प्रकृति देश घाती ठे, तथा एक केवलज्ञानावरण विना बाकीनी चार प्रकृति ज्ञानावरणीयनी तथा एक केवलदर्शनावरण विना त्रण प्रकृति दर्शनावरणीयनी तथा संज्वलन कषायनी चार प्रकृति,

एवं सोल थइ, अने सत्तरमो पुरुष वेद. ए स
त्तर प्रकृतिनो एकठाणीयो, वेठाणीयो, त्रिठा
णीयो अने चोठाणीयो रस पण बंधाय, अने शे
सर्व शुज अशुज प्रकृतिनो वेठाणीयो, त्रिठाणी
यो तथा चोठाणीयो रस बंधाय, पण एकठाणी
यो रस न बंधाय.

हवे शुजाशुज रसनुं स्वरूप कहे ठे. अशुज
पापप्रकृतिनो रस निंबना रसनी परे कटुक जा
णवो, अने शुज पुण्यप्रकृतिनो रस शेलमीन
रसनी परे मिष्ट जाणवो. जेम निंबनो रस अण
कढ्यो ते एकठाणीयो कटुक कहीए तथा अग्नि
उपर अर्ध कढ्यो, अने अर्ध राख्यो, ते वेठा
णीयो कटुकतर कहीए, तथा ते रसना त्रण
जाग करी वे जाग अग्नि उपर अवटावीए, अने
एक जाग रहे, ते चोठाणीयो अत्यंत कटुकतम
कहीए. एज रीते शुज प्रकृतिने विषे शेलमीने

मधुर रस पण जाणी लेवो इति रसबंधस्वरूपं तृतीयं समाप्तम् ॥

हवे चोथा प्रदेशबंधनुं स्वरूप कहे छे लोक ने विषे १ औदारिक, २ वैक्रिय, ३ आहारक, ४ तैजस, ५ जाषा, ६ श्वासोश्वास, ७ मन अने ८ कार्मण, ए आठ जातिनी कर्मवर्गणा छे. ते एकेकी वर्गणा जीवने ग्रहण योग्य तथा अग्रहण योग्य एवी बे बे प्रकारे छे तेमां प्रथम बे प्रदेशथी मांमीने अजव्यथी अनंतगुणाधिक प्रदेश लगे औदारिक वर्गणा, ते थोमा प्रदेश अने स्थूल माटे जीवने अग्रहण योग्य वर्गणा जाणवी ते वार पठी बीजी औदारिक ग्रहण योग्य ते पण अनंती वर्गणा जाणवी. ते वार पठी घणा प्रदेश अने सूक्ष्म परिणाम, माटे औदारिकने अग्रहण योग्य तथा वैक्रियनी अपेक्षाए थोमा प्रदेश अने स्थूल परिणाम, माटे वैक्रियने

पण अग्रहण योग्य एम वेउने ग्रहण करवाने अ-योग्य, ते पण अजघन्यथी अनंतगुणादिक वर्गणा जाणवी. ते वार पछी वैक्रियने ग्रहण योग्य वर्गणा जाणवी. एम सर्व आठ जातिनी वर्गणाने विषे ग्रहण योग्य अने अग्रहण योग्य वर्गणा जाणवी

समान प्रादेशिक स्कंध अनंता मळे, ते वारे एक वर्गणा थाय तेवी सर्व जातिनी समय समयने विषे जीव अनती वर्गणा लीए छे ए आठे वर्गणामांहेली उपली उपली वर्गणा अनुक्रमे एक बीजाथी सूक्ष्म सूक्ष्म जाणवी, अने अनंते अनंते प्रदेशे अधिक जाणवी तेनी क्षेत्रावगाहना अल्प अल्प जाणवी. सर्वने अवगाहना अंगुलनो असंख्यातमो भाग होय, पण पहेलीथी बीजी वर्गणाने असंख्यातमो भाग ऊंचो जाणवो.

ए आठमांहेली प्रथमनी चार वर्गणा आठ फरस युक्त होय, दृष्टिए गोचर आवे, अने आगली चार दृष्टि अगोचर सूक्ष्म परिणाम, माटे तेने ठेल्ला १ शीत, २ उष्ण, ३ रूक्ष, ४ स्निग्ध ए चार फरस होय बंध बे प्रकारे छे तेमां आत्माना प्रदेश साथे कर्मपुद्गलनु मांहोमांहे जे क्षीर-नीरनी पेठे मलवुं, ते द्रव्यबंध, अने जे आत्मानां शुभाशुभ परिणामे करी अष्ट प्रकारे कर्म बंधाय, ते भावबंध जाणवो इत्यादिक प्रदेशबंधनो अधिकार अल्प मात्र लख्यो विस्तारे पांचमा कर्मग्रंथ मध्ये प्रदेशबंधाधिकारे जोवुं ॥

॥ इति बंधतत्त्वविचार. समाप्त. ॥ ८ ॥



॥ हवे नवमा मोक्षतत्त्वने कहेता थका प्रथम मोक्षतत्त्वना नव भेद कहे छे—

संतपयपरूवणया, दव्वपमाणं च खित्त
फुसणा य ॥ कालो अ अंतर भाग,
भावे अप्पाबहू चेव ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

संतपय–छता पदनी	य–अने.
परूवणया–प्ररूपणाद्वार	अंतर–अंतरद्वार.
दव्वपमाण–द्रव्यप्रमाणद्वार	भाग–भागद्वार.
खित्त–क्षेत्रद्वार	भावे–भावद्वार.
फुसणा–स्पर्शनाद्वार	अप्पाबहू–अल्पबहुत्वद्वार
च–अने	चेव–निश्चे.
कालो–कालद्वार.	

विस्तारार्थ.–मोक्षने विषे छता पदनी प्ररूपणा ते गति प्रमुख मार्गणाद्वारने विषे सिद्धनी सत्तानुं निरूपण करवुं, एटले चौद मार्गणामां सिद्धपद कइ मार्गणाए छे? एवी प्ररूपणा करवी, ते पहेलु (संतपयपरूवणया के०) सत्पद-

प्ररूपणता, एटले छता पदनी प्ररूपणानुं द्वार. सिद्धनां जीवद्रव्यनुं प्रमाण करवुं, एटले सिद्धनां जीवद्रव्य केटलां छे? ते विचारवुं, ए बीजुं (दव्वपमाणं के०) द्रव्यप्रमाण, एटले द्रव्यप्रमाणद्वार (च के०) वली सिद्धने अवगाहना क्षेत्र केटलुं छे? ते विचारवुं, ए त्रीजुं (खित्त के०) क्षेत्रं, एटले क्षेत्रद्वार केटला आकाशप्रदेशने सिद्धना जीव फरसे? एम जे विचारवुं, ते चोथुं (फुसणा के०) स्पर्शना, एटले स्पर्शनाद्वार. अहीं जे क्षेत्र अवगाहीने रहे, ते अवगाहना, अने त्यां अवगाही रहेतां जेटलुं क्षेत्र फरसे, ते स्पर्शना जाणवी जेम परमाणुने एक प्रदेश अवगाहनारूप क्षेत्रने सात प्रदेशनी स्पर्शना होय (य के०) च, अने काल आश्रयी सिद्धने सादि अनंत रूप कहेवुं, ते पांचमुं (कालो के०) कालः, एटले कालनुं द्वार (अ के०) च, तथा सिद्धना जीवने

विपे जे आंतरुं कहेवुं, ते ठठुं (अंतर के०) अं तरं, एटले अंतरद्वार. ते सिद्धना जीव संसारी जीवोने केटलामे नागे ने? एम जे विचारवुं, ते सातमुं (नाग के०) नाग', एटले नागद्वार. नाव ते क्षायिकादिक पांच नाव ने, तेमां सिद्धना जीव कया नावे ने? एम जे विचारवु ते आठमु (नावे के०) नाव., एटले नावद्वार अही जगतना दरेक पदार्थ ५ नावमांथी कोइपण एकादि नावमां अंतर्गत होय ने तेमां मोहनीय कर्मना उपशमथी उत्पन्न थयो जे नाव, ते औपशमिक नाव, (उशधम समकित अने उपशम चारित्र, एम बे प्रकारनो आ नाव मात्र सकर्मक जीवनेज होय.) तथा कर्मना क्षयोपशमथी थयेलो जे नाव, ते क्षायोपशमिक नाव, (दाननोग-नोग-उपनोग-वीर्य क्षयोपशम-सम्यक्त्व-देश

विरति–सर्वविरति–मतिज्ञान-श्रुतज्ञान-अवधि० मन पर्यव०-चक्षुर्दर्शन-अचक्षुर्दर्शन, अवधिदर्शन-मतिअज्ञान-श्रुतअज्ञान-विभंगज्ञान एम अढार जेदे आ जाव सकर्मक जीवने होय) तथा कर्मना क्षयथी थयेलो जे जाव, ते क्षायिकजाव, (केवलज्ञान केवलदर्शन ५ दानादि लब्धि यथाख्यात चारित्र ने क्षायिक सम्यक्त्व एम नव प्रकारनो आ जाव जीवनेज होय) तथा कर्मना उदयथी थयेलो जे जाव, ते औदयिकजाव, (अज्ञान असिद्धत्व अविरति ६ लेश्या ४ कषाय ४ गति ३ वेद अने मिथ्यात्व, एम २१ प्रकारनो आ जाव सकर्मक जीवने होय) तथा जीव अने अजीवने अनादि स्वजावपरिणमनरूप जे जाव, ते पारिणामिक जाव, (जीवने जव्यत्व अजव्यत्व अने जीवत्व एम त्रण प्रकार

अने जीव अजीवने पोतपोताना स्वभावरूप अनेक प्रकार छे) ए प्रमाणे पांच भावनुं स्वरूप कह्यु अल्पबहुत्व जे सिद्धने कहेवुं, एटले पदर भेदे सिद्ध छे, तेमांहेला कया सिद्धना भेदना जीव थोडा अने कया सिद्धना भेदना जीव घणा? एम जे विचारवुं, ते नवमुं (अप्पाबहू के०) अल्पबहुत्वं, एटले अल्पबहुत्व नामे द्वार. (चेव के०) चेव, एटले निश्चे ए नव द्वार मोक्षतत्त्व नां विचारवां ॥ ४३ ॥

हवे अनुक्रमे नव भेदोना अर्थ कहेता थका प्रथम सत्पदप्ररूपणाद्वार कहे छे–

संतं सुद्धपयत्ता, विज्जंतं खकुसुमव्व
न असंतं ॥ मुक्खत्ति पयं तस्स उ,
परूवणा मग्गणाईहिं ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ मीना नूटा शब्दना अर्थ

सत–छतु छे	मुक्खत्ति–मोक्ष इति.
सुद्धपयत्ता–शुद्धपदपणु	पय–पद
विज्जत–विद्यमान	तस–तेनी
खकुसुमव्व–आकाशना फूलनी (परे	उ–वली.
न–नहीं	परूवणा–प्ररूपणा
असत–अछतु	मग्गणाईं–मार्गणाए करी

विस्तारार्थः–मोक्षपद ते (संतं के०) सत्, एटले छतुं छे, (सुद्धपयत्ता के०) शुद्धपदत्वात्, एटले शुद्ध पदपणाथी एटले एक पदपणाथी छतुं छे, केमके जगतमां जेटला एकपदवाची घटपटादिक पदार्थ छे, ते सर्व अवश्य छता छे, अने जे जे बे बे पदना पदार्थ छे, ते ते पदार्थ छता पण छे, ने अछता पण छे त्यां दृष्टांत कहे छे जेम अश्वशृंग, वंध्यापुत्र, ए बे पदनां नाम छे, ते अछतां छे, तेमज गोशृंग, महिषशृंग, राजपुत्र ए बे पदोनां नाम छे, ते छतां पण छे, माटे

मोक्षपद ते (विज्ञांत कें०) विद्यमान, एटले वि- द्यमान ले, पण (खकुसुमव कें०) खकुसुमत, ए- टले आकाशना फुलनी परे (न असंतं कें०) न असत्, एटले अछतुं नथी, एटले अविद्यमान नथी. (मुस्कत्ति पय कें०) मोक्ष इति पदं, ते मो- क्षपद ले. (तस्यतु कें०) तस्य तु एटले तेनी (परूवणा कें०) प्ररूपणा, एटले प्ररूपणा ते (मग्गणाईहि कें०) मार्गणाभिः, एटले गत्यादिक १४ मार्गणाद्वारे करी करवी.

त्यां नव द्वारमांहेला प्रथम सत्पदप्ररूपणा- द्वारने मार्गणाद्वारे प्ररूपतां प्रथम मूल चोद मार्गणा ले, तेनी उत्तर बासठ मार्गणा थाय ले, तेनां नाम कहे ले. जेणे करी सर्व जीव- द्रव्यने मार्गीए एटले विचारीए, तेने मार्गणा कहीए ॥ ४४ ॥

गइ इंदीएअ काए जोए वेए कसाय नाणे य ॥ संजम दंसण लेसा, नव सम्मे सन्नि आहारे ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

गइ–गति.	य–अने.
इंदीए–इंद्रिय.	संजम–संयम.
अ–अने.	दंसण–दर्शन.
काए–काय.	लेसा–लेश्या.
जोए–योग.	भव–भव्य
वेए–वेद.	सम्मे–सम्यक्त्व.
कसाए–कषाय.	सन्नि–सञ्ज्ञी.
नाणे–ज्ञान.	आहारे–आहार.

विस्तारार्थः–मनुष्य, देवता, नारकी अने तिर्यंच ए रीते प्रथम (गइ के०) गतिः, एटले गतिमार्गणा चार प्रकारे छे. एकेंद्रिय, बेंद्रिय, तेंद्रिय, चौरिंद्रिय अने पंचेंद्रिय, ए रीते बीजी

(इंदीए के०) इंद्रियं, एटले इंद्रियमार्गणा पांच प्रकारे ठे पृथ्वी, अप, तेज, वायु, वनस्पति अने त्रस, ए रीते त्रीजी (काए के०) कायः, एटले कायमार्गणा ठ प्रकारे ठे मन, वचन अने काया ए रीते चोथी (जोए के०) योगः, एटले योगमार्गणा त्रण प्रकारे ठे पुरुष, स्त्री ने नपुंसक ए रीते पांचमी (वेए के०) वेदः, एटले वेदमार्गणा त्रण प्रकारे ठे क्रोध, मान, माया ने लोज, ए रीते ठही (कसाय के०) कषायः, एटले कषायमार्गणा चार प्रकारे ठे मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव अने केवल ए पांच ज्ञान तथा मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान ने विभंगज्ञान, ए त्रण अज्ञान, एवी रीते सातमी (नाणे के०) ज्ञानं, एटले ज्ञानमार्गणा आठ प्रकारे ठे पांच चारित्रनां नाम प्रथम संवरतत्त्वमां कह्यां ठे, अने ठठुं देशविरति तथा सातमु अविरति, ए रीते

आठमी (सजम के०) संयम, एटले संयममार्ग-णा, सात प्रकारे छे चक्षु, अचक्षु, अवधि अने केवल, ए रीते नवमी (दसण के०) दर्शन, एटले दर्शनमार्गणा चार प्रकारे छे. कृष्ण, नील, का-पोत, तेजो, पद्म अने शुक्ल, ए रीते दशमी (ले-सा के०) लेश्या, एटले लेश्यामार्गणा छ प्रकारे छे भवसिद्धि ने अभवसिद्धि, ए रीते अग्यारमी (भव के०) भव्य., एटले मुक्तिगमन योग्यायोग्य नी अपेक्षाए भवसिद्धादि मार्गणा बे प्रकारे छे. ओपशमिक, सास्वादन, क्षायोपशमिक, क्षायिक, मिश्र अने मिथ्यात्व, ए रीते बारमी (सम्मे के०) सम्यक्त्व, एटले सम्यक्त्वमार्गणा छ प्रकारे छे. संज्ञी ने असज्ञी, ए रीते तेरमी (सन्नि के०) सज्ञी, एटले सज्ञीमार्गणा बे प्रकारे छे आहा री ने अणाहारी, ए रीते चौदमी (आहारे के०) आहार, एटले आहारमार्गणा बे प्रकारे छे

एम सर्व मली मूल चौद मार्गणानी उत्तरमार्गणा बासठ छे ॥ ४५ ॥

बासठ मार्गणास्थानमांथी जे मार्गणाए अतीतकाले सिद्ध थाय ते स्थानना नाम कहे छे–

नरगइपणिंदितसभव,-सन्निअहक्खाय-
खइअसम्मत्ते ॥ मुक्खोऽणाहारकेव-
ल,-दंसणनाणे न सेसेसु ॥ ४६ ॥

गाथा ४६ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

नरगइ–मनुष्यगति	मुक्खो–मोक्ष.
पणिंदि–पंचेंद्रियजाति.	अणाहार–अणाहारी.
तस–त्रसकाय	केवल–केवल
भव–भवसिद्धिक	दंसण–दर्शन.
सन्नि–सन्नी.	नाणे–ज्ञान.
अहक्खाय–यथाख्यात.	न–नथी.
खइअ–क्षायिक.	सेसेसु–बाकी रहेलाने विषे,
सम्मत्त–सम्यक्त्वत	

विस्तारार्थः–नरगइपणिंदितसनरसन्निश्रद्द-रकायखइअसम्मत्ते के०) नरगतिपचेंडियत्रस-जव्यसञ्ज्ञिक्षायिकसम्यक्त्वे, एटले पहेली गति-मार्गणा चार छे, तेमां मनुष्यगतिमां मोक्षप्राप्ति थाय छे. पण शेष त्रण गतिमां मोक्ष होय नहीं. कारण के सर्वविरति चारित्र विना मोक्षज नथी, नारक तथा देवने समकित होय, पण चारित्र न होय, ग० ति० पचेंड्रियने देशविरति चारि-त्रज होय तो होय. माटे मनुष्य विना त्रण ग-तिमां मोक्ष नथी बीजी इंड्रियमार्गणा पांच छे, तेमां पचेंड्रियमां मोक्ष प्राप्ति थाय छे, शेष चारे इंड्रियमां मोक्षप्राप्ति न थाय. कारण के पू-र्वोक्त रीते मनुष्यगतिमांज मोक्षप्राप्ति छे, अने ते मनुष्यगति पचेंड्रिय मार्गणामां अंतर्गत छे त्रीजी कायमार्गणा छ छे, तेमां त्रसकायमां मो-क्षप्राप्ति थाय छे, पण मनुष्यत्व विना शेष पांचे

कायमां मोक्षप्राप्ति न थाय. चोथी जव्यमार्गणा बे ठे, तेमां जव्य मोक्षे जाय ठे, पण अजव्यमां कोइ मोक्षे जाय नहीं. पांचमी संज्ञीमार्गणा बे ठे, तेमां संज्ञीमांथी मोक्षे जाय ठे, पण असंज्ञीमांथी कोइ मोक्षे जाय नांह कारण के विशिष्ट मनोविज्ञानवाळा संज्ञीज होय, ते विशिष्ट मनोविज्ञान विना चारित्र न होय, अने चारित्रना अजावे मोक्ष पण न होय. ठठी चारित्र मार्गणा सात ठे, तेमांथी यथाख्यात चारित्रवाला मोक्षे जाय ठे, शेष ठ चारित्रवाला कोइ मोक्षे जता नथी कारण के सर्वांशे शुद्ध एवा चारित्रथी मोक्ष थाय, ने तेवुं सर्वांशे शुद्ध क्षायिक यथाख्यात चारित्रज ठे. सातमी सम्यक्त्व मार्गणा ठ ठे, तेमांथी क्षायिक सम्यक्त्ववंत मोक्षे जाय ठे, शेष पांच सम्यक्त्ववंत मोक्षे जता नथी. कारण के पूर्वोक्त रीते क्षायिक यथा-

ख्यात चारित्रथीज मोक्ष थाय, अने ते चारित्र पण क्षायिक सम्यक्त्व विना होय नहीं. माटे पूर्वोक्त सात पदोनो व्याकरण प्रमाणे द्वंद्व समास करतां एक पद थाय छे तथा (अणाहार केवलदंसणनाणे के०) अनाहारकेवलदर्शनज्ञाने, एटले आठमी आहारमार्गणा बे छे, तेमां अणाहारी जीव मोक्षे जाय छे, परंतु आहारी मोक्षे जता नथी, कारण के आहार सयोगी जीवने होय, सयोगी जीवने मोक्ष नथी, माटे अणाहारीने मोक्षप्राप्ति कही नवमी दर्शनमार्गणा चार छे, तथा दशमी ज्ञानमार्गणा आठ छे, तेमांथी केवलदर्शन अने केवलज्ञान ए बे मार्गणास्थानवालामां (मुक्खो के०) मोक्ष , एटले मोक्षप्राप्ति थाय छे, परंतु शेष त्रण दर्शनवाला तथा चार ज्ञानवालामां मोक्ष नथी कारण के शेष त्रण दर्शन अने चार ज्ञान

क्षयोपशम भाववाळां छे, अने क्षयोपशम भावे मोक्ष नथी, पण क्षायिक भावेज मोक्ष होय, माटे ए रीते ए दश मार्गणास्थानमांथी मोक्षे जाय छे, अने (सेसेसु के०) शेषेषु, एटले शेष रहेली जे १ कषायमार्गणा, २ वेदमार्गणा, ३ योगमार्गणा अने ४ लेश्यामार्गणा, ए चार मार्गणास्थानने विषे वर्त्तनारा जीवो (न के०) मोक्षने पामता नथी कारण के मोक्ष ए स्थिर परिणामे–स्थिर भावे होय, ने योग तथा लेश्या अस्थिर परिणामरूप छे ए बे वडे जीवनी अस्थिरताथी मोक्ष न थाय, वळी ए बेनो अन्वय व्यतिरेक संबंध छे एटले योग त्यां लेश्या होय, अने योगाभावे लेश्यानो पण अभाव होय, तथा वेद तथा कषायना उदयमां उपशम यथाख्यात चारित्र न थाय, तो मोक्षना कारणरूप क्षायिक यथाख्यातनी वातज शी ? ते क्षा य. चा विना

मोक्ष नथी माटे पूर्वोक्त रीते सयोगी, सलेशी, संवेदी अने सकषायी ए चारने मोक्षप्राप्ति नथी. ए सत्पदप्ररूपणा नामे प्रथम द्वार कह्यु ॥४६॥

हवे द्रव्यप्रमाणादि बे द्वार कहे छे–

दव्वपमाणे सिद्धा,–णं जीव दव्वाणि हुंति णंताणि ॥ लोगस्स असंखिज्जे, भागे इक्को य सव्वेवि ॥ ४७ ॥

गाथा ४७ मीना छूटा शब्दना अर्थ

दव्वपमाणे–द्रव्यप्रमाणद्वारने विषे	लोगस्स–लोकना.
सिद्धाण–सिद्धना	असंखिज्जे–असंख्यातमे
जीवदव्वाणि–जीवद्रव्य	भागे–भागने विषे
हुंति–छे, होय छे.	इक्को–एक पण
णंताणि–अनंतां.	य–अने
	सव्वेवि–सर्व पण

विस्तारार्थ –(दव्वपमाणे के०) द्रव्यप्रमाणे, एटले द्रव्यप्रमाणद्वारने विषे विचारतां (सिद्धाण

के०) सिद्धानां, एटले सिद्धनां (जीवद्वाणि के०) जीवद्रव्य (हुंति के०) छे, (णताणि के०) अनंतानि, एटले सिद्धनां जीवद्रव्य अनंतां छे. ए बीजु द्वार कह्यु. हवे त्रीजु क्षेत्रद्वार कहे छे—लोगस्स असंखिज्जे जागे के०) लोकस्य असंख्याते जागे, एटले चौद राजलोकने असंख्यातमे जागे (इक्को य सव्वेवि के०) एकश्च सर्वेऽपि, एटले एक सिद्ध पण त्यां रहे छे, अने सर्व सिद्ध पण त्यां रहे छे, पण एक सिद्ध व्यासक्षेत्रापेक्षाए सर्व सिद्ध व्यासक्षेत्रनुं प्रमाण अधिक जाणवुं, परंतु ते क्षेत्रमान सर्व लोकने असंख्यातमे जागे जाणवुं, केमके उत्कृष्टी अवगाहनावालानुं एक गाउना छठा जाग जेटलुं शरीर होय, ते पण लोकनो असंख्यातमो जाग थयो, अने लघु अवगाहनावालानो पण लोकनो असंख्यातमो जाग थयो, तथा सर्व सिद्ध पण त्रणसो तेत्रीस

धनुः, एक हाथ ने आठ अंगुल जाडी तथा पीस्तालीश लाख योजनप्रमाण लांबी सिद्धशिलामां रहे छे, माटे ते पण चौद राजलोकनो असंख्यातमो भाग थयो. ए त्रीजुं द्वार कह्यु. ॥ ४७ ॥

हवे स्पर्शनादि त्रण द्वार कहे छे–

फुसणा अहिआ कालो, इग सिद्ध पडुच्च साइओणंतो ॥ पडिवायाभावाओ सिद्धाणं अंतरं नत्थि ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

फुसणा–स्पर्शना	णंतो–अनंतो.
अहिआ–अधिक.	पडिवाय–पडवानो
कालो–काल,	अभावाओ–अभाव
इग–एक	सिद्धाण–सिद्धने.
सिद्ध–सिद्ध.	अंतर–अंतर
पडुच–प्रतीत्य, आश्रित्य	नत्थि–नथी.
साइओ–सादि	

विस्तारार्थः–हवे स्पर्शनाद्धार कहे छे–पूर्वोक्त क्षेत्रथकी सिद्धना जीवोनी (फुसणा अहिआ के०) स्पर्शनाऽधिका, एटले स्पर्शना अधिक छे, केमके जेटला क्षेत्रमां सिद्ध भगवान रह्या छे, तेनी चारे बाजुनी तथा नीचे अने उपरनी सर्व दिशाउना आकाशप्रदेश स्पर्या छे. जेम एक आकाशप्रदेशे रह्यो जे पुद्गलपरमाणु, तेने सात आकाशप्रदेशनी स्पर्शना होय छे, माटे स्पर्शना अधिक जाणवी. तथा वली एक सिद्धना जीवनी अवगाहना क्षेत्रना एकेका आकाशप्रदेश प्रत्ये संक्रमीने प्रत्येके प्रत्येके अनंता सिद्ध रह्या छे. एम द्वि, त्रि, चतुः, पंचादि अंशनी अभिवृद्धि जाणवी. तथा तेवीज सिद्धावगाहना क्षेत्रना एकेका प्रदेश प्रत्ये छांमीने पण अनंता सिद्ध रह्या छे. एम मध्यादि प्रदेशप्रत्ये जाणवुं. एम प्रदेशनी वृद्धि हानि करतां जे अवगाढ छे,

ते पण अनंत छे, पूर्ण क्षेत्रावगाढ सिद्धथी प्रदेशावगाढ सिद्ध असंख्यगुणाधिक छे, ते माटे एक सिद्ध ते परस्परे अवगाढ एवा पोताना प्रदेशे करी अनंता सिद्ध प्रत्ये फरसे, अने क्षेत्रावगाहनानी नेद प्रदेश प्रदेशे ,करी असंख्य-गुणाधिक सिद्ध प्रत्ये फरसे, ते माटे क्षेत्रथकी स्पर्शना अधिक जाणवी इत्यादि संक्षेपथकी कह्यु छे. ए चोथुं स्पर्शनाद्वार कह्यु हवे पाचमुं कालद्वार कहे छे (कालो के०) काल., एटले काल, ते सिद्धना जीवने केटलो होय? (इग सिद्ध पकुच्च के०) एक सिद्धं प्रतीत्य, एटले एक सिद्धने आश्रित्य (साईअणंतो के०) साद्यनंत., एटले सादि अनतो काल होय. एटले जे समये जे जीव मोक्षे गयो ते वारे तेनी आदि थइ, अने फरी त्यांथी तेने (पमिवायाजावाउ के०) प्रतिपाताजावतः, एटले पमवानो अजाव छे,

एटले त्यांथी पाछुं चववुं नथी, माटे अथवा ते मोक्षनो अंत न होवाथी अनंत छे तेमज सर्व सिद्ध आश्रित्य विचारीए, तो प्रथम सिद्ध कोण थयो ? एवी आदि नथी, माटे अनादि पण छे. ए रीते अनादि अनंत जाणवो ए कालद्वार कह्यु. हवे छठुं अंतरद्वार कहे छे ज्यां सिद्धपणानो जाव प्राप्त थयो, त्यांथी पाछुं (पडिवायाजावार्ड के०) प्रतिपाताजावतः, एटले पडवानो अजाव छे, माटे (सिद्धाण के०) सिद्धानां, एटले सिद्धना जीवोने (अंतरं नहि के०) अंतरं नास्ति, एटले अंतर नथी, केमके सिद्धपणाथकी चवीने संसारमां आवी बीजो जव करी फरी सिद्धपणु पामवुं नथी. एटले जे पदवी पाम्या, ते पदवी जती रहे, फरी ते पदवी पामे, तेना वचगालाना कालने अंतर कहीए. माटे ते अंतर सिद्धने नथी, अथवा सिद्धने मांहोमांहे

अंतर नथी ज्यां एक सिद्ध छे, त्यां अनेक सिद्ध रह्या छे, माटे एकमां अनेक सिद्ध छे, एम एक बीजामां क्षेत्रने विषे आबाधारूप अंतर नथी. ए क्षेत्र आश्रयी सिद्धने मांहोमांहे अंतर नथी. ए अंतरद्वार कह्युं ॥ ४८ ॥

सातमुं भागद्वार तथा आठमुं भावद्वार कहे छे

सबजियाणमणंते, भागे ते तेसिं
दंसणं नाणं ॥ खइए भावे परिणा,–
मिए अ पुण होइ जीवत्तं ॥ ४९ ॥

गाथा ४९ मीनां छूटा शब्दना अर्थ.

सव्व–सर्व	नाण–केवलज्ञान
जियाण–जीवना.	खइए भावे–क्षायिक भावे.
अणते–अनंतमे.	परिणामिए–पारिणामिक (भावे
भागे–भागने विषे.	अ–अने
ते–ते (सिद्धना जीव).	पुण–वली,
तेसिं–तेमना (सिद्धना जीवनां)	होइ–होय.
दसण–केवलदर्शन	जीवत्त–जीवितपणुं.

विस्तार र्थ —(सव्वजियाणमणंते जागे के०) सर्वजीवानामनंते जागे, एटले सर्व संसारी जीवोने अनंतमे जागे (ते के०) ते, एटले ते सिद्धना जीव ठे, केमके अतीत, अनागत अने वर्त्तमान एवा त्रण कालमां जे काले ज्ञानीने पूछा थाय, ते काले ज्ञानी एम कहे, जे असंख्याती निगोद ठे, ते प्रत्येक निगोदमां अनंता जीव ठे तेमांहेलो एक निगोदनो अनंतमो जाग मोक्ते गयोछे, एहीज उत्तर देवाशे ए सातमुं जागद्वार कह्यु हवे आठमु जावद्वार कहे ठे. (तेसि के०) तेषां, एटले ते सिद्धना जीवोनां (दसण के०) दर्शनं, एटले केवलदर्शन अने (नाणं के०) ज्ञानं, एटले केवलज्ञान ते (खइए जावे के०) क्षायिके जावे, एटले क्षायिक जावे वर्त्ते ठे, (अ पुण के०) च पुनः, एटले अने वली (परिणामिए के०) पारिणामिक जावे (जीवत्त्वं के०) जीवत्वं;

एटले जीवितपणुं (होइ के०) जवति, होय ते एटले सिद्धना जीवने वे जाव वर्त्ते ले त्यां क्षायिक जाव नव जेदे ले तेमां दानादिक पांच लब्धि, तथा ठुं सम्यक्त्व, अने सातमुं चारित्र ए सात तो सिद्धमां न सजवे शेष एक ज्ञान, बीजु दर्शन, ए बे क्षायिक जावे वर्त्ते ले, अने पारिणामिक जावना त्रण जेद ले, तेमां एक जव्यत्व बीजो अजव्यत्व. ए बे जाव सिद्धमां न सजवे शेष एक जीवितपणु ते पारिणामिक जावे सिद्धमां वर्त्ते ले. यद्यपि सिद्धना जीवोने द्रव्यरूप प्राणदशक नथी, तथापि ज्ञानादि चतुष्टय जाव प्राण ले, माटे एने जाव जीवितपणुं कहीए ए आठमुं जावद्वार कह्यु ॥ ४ए ॥

हवे नवमुं अल्पबहुत्वद्वार कहे ले–

थोवा नपुंससिद्धा, थीनरसिद्धा कमेण संखगुणा ॥ इअ मुक्कतत्तमेअं, नव तत्ता लेसर्ज जणिआ ॥ ५० ॥

गाथा ५० मीना नूटा शब्दना अर्थ.

थोवा-थोडा	इअ ए
नपुस-नपुसक	मुरक-मोक्ष
सिद्धा-सिद्ध.	तत्त-तत्त्व
इत्थी-स्त्री.	एअ-ए
नर-पुरुष	नव तत्ता-नव तत्त्वो
सिद्धा-मोक्ष गया.	लेसओ-लेश मात्र
कमेण-अनुक्रमे.	भणिआ-कह्या
संखगुणा-संख्यात गुणा.	

विस्तारार्थ-(थोवानपुंससिद्धा के०) स्तोका-नपुंसकसिद्धा., एटले सर्वथकी थोका नपुंसक सिद्ध थाय छे, केमके जन्मनपुंसकने तो चारित्र प्राप्त न थाय, तेथी ते मोक्षे पण न जाय, अने जे पाछलथी कृत्रिम नपुंसक थया होय, ते उत्कृष्टा एक समयमां दश मोक्षे जाय, माटे सर्वथी थोका कह्या. ते नपुंसकथकी (स्त्रीत्थीनर-सिद्धा के०) स्त्रीनरसिद्धाः, एटले स्त्री, पुरुष तथा

मोक्षे जाय ते (कमेण के०) क्रमेण, एटले अनुक्रमे (संखगुणा के०) संख्यातगुणा, एटले संख्यात गुणा जाणवा एटले नपुंसकथी स्त्री संख्यात गुणी उत्कृष्टी एक समयमां वीश मोक्षे जाय छे, अने स्त्रीथकी वली पुरुष संख्यात गुणा उत्कृष्टा एक समयमां एकसो ने आठ मोक्षे जाय छे. ए प्रमाणे पूर्व जवना लिंग आश्री सिद्ध जीवोनुं अल्पबहुत्वद्वार कह्युं (इअ के०) एतद् एटले ए नवमुं (मुक्खतत्त के०) मोक्षतत्त्वं, एटले मोक्षतत्त्व कह्युं, ते पण द्रव्यथी अने जावथी एवा बे जेदे छे. त्यां आठ कर्मनुं आत्मप्रदेशथी जूदुं थवुं, ते द्रव्यमोक्ष, अने आठ कर्मना क्षयनो जे आत्मपरिणाम ते जावमोक्ष जाणवो (एअं के०) एवं, एटले ए रीते ए जीवादिक (नव तत्ता के०) नव तत्त्वानि, एटले नव तत्त्वो, ते (लेसर्ड के०) लेशत, एटले लेश मात्र

संक्षेपे करी (त्रणिआ के०) त्रणितानि, एटले कह्यां ॥ ५० ॥

हवे ए नव तत्त्वने जाणवानुं फल कहे छे–

जीवाइनवपयत्थे, जो जाणइ तस्स होइ सम्मत्तं ॥ भावेण सद्दहंतो, अयाणमाणेवि सम्मत्तं ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

जीवाइ–जीवादि.	सम्मत्त–सम्यक्त्व
नव–नव.	भावेण–भावे करी.
पयत्थे–पदार्थ	सद्दहंतो–सद्दहणा (श्रद्धा) राखे.
जो–जे.	अयाणमाणेवि–अजाण होय तेने पण
जाणइ–जाणे छे.	
तस्स–तेने.	सम्मत्त–सम्यक्त्व.
होइ–होय.	

विस्तारार्थः–ए (जीवाइ नवपयत्थे के०) जीवादि नव पदार्थोने, एटले जीवादिक जे नव

पदार्थ छे, तेने (जो के०) यः, एटले जे प्राणी (जाणइ के०) जानाति, एटले जाणे छे, (तस्स के०) तस्य, एटले ते प्राणीने (सम्मत्त के०) सम्यक्त्वं, एटले सम्यक्त्व (होइ के०) नवति, एटले होय, अने अपवादपदे तो जे "तमेव सच्चं निस्संकं जं जिणेहिं पवेइय इत्यादि" शुद्ध आत्मपरिणामरूप (नावेण के०) नावेन, एटले नावे करी ए जीवादिक नव पदार्थने विषे जे (सद्दहंतो के०) श्रद्दधत्, एटले सद्दहणा राखतो होय, ते (अयाणमाणेवि के०) अजानन्नपि, एटले जीवादिक नव पदार्थना ज्ञानथी अजाण एटले रहित होय, तोपण तेने (सम्मत्तं के०) सम्यक्त्वं, एटले सम्यक्त्व छे, एम जाणवुं ॥ ५१ ॥

हवे ते सम्यक्त्वनुं स्वरूप तथा ते केवी
(-?) ने होय? ते कहे छे—

संक्षेप करी (जणिश्चा के०) जणितानि, एटले कह्यां ॥ ५० ॥

हवे ए नव तत्वने जाणवानुं फल कहे छे–

जीवाइनवपयत्थे, जो जाणइ तस्स होइ सम्मत्तं ॥ नावेण सद्दहंतो, अयाणमाणेवि सम्मत्तं ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ मीना तूटा शब्दना अर्थ.

जीवाइ–जीवादि.	सम्मत्त–सम्यक्त्व.
नव–नव.	भावेण–भावे करी.
पयत्थे–पदार्थ	सद्दहंतो–सद्दहणा (श्रद्धा) राखे.
जो–जे.	अयाणमाणेवि–अजाण होय तेने पण.
जाणइ–जाणे छे.	
तस्स–तेने.	सम्मत्त–सम्यक्त्व.
होइ–होय.	

विस्तारार्थः–ए (जीवाइ नवपयत्थे, के०) जीवादि नव पदार्थान्, एटले जीवादिक जे नव

पदार्थ छे, तेने (जो के०) यः, एटले जे प्राणी (जाणइ के०) जानाति, एटले जाणे छे, (तस्स के०) तस्य, एटले ते प्राणीने (सम्मत्तं के०) सम्यक्त्वं, एटले सम्यक्त्व (होइ के०) भवति, एटले होय, अने अपवादपदे तो जे "तमेव सच्चं निस्संकं ज जिणेहिं पवेइयं इत्यादि" शुद्ध आत्मपरिणामरूप (भावेण के०) भावेन, एटले भावे करी ए जीवादिक नव पदार्थने विषे जे (सद्दहंतो के०) श्रद्दधत्, एटले सद्दहणा राखतो होय, ते (अयाणमाणेवि के०) अजानन्नपि, एटले जीवादिक नव पदार्थना ज्ञानथी अजाण एटले रहित होय, तोपण तेने (सम्मत्त के०) सम्यक्त्व, एटले सम्यक्त्व छे, एम जाणवुं ॥ ५१ ॥

हवे ते सम्यक्त्वनुं स्वरूप तथा ते केवी बुद्धिवाळाने होय? ते कहे छे—

सव्वाइ जिणेसरभा,–सिआइं वयणा-
इ नन्नहा हुंति ॥ इअ बुध्धि जस्स
मणे, सम्मत्तं निच्चलं तस्स ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ मीना त्रूटा शब्दना अर्थ.

सव्वाइ–सर्वे.	इम–एवी.
जिणेसर–जिनेश्वरोए	बुद्दी–बुद्धि
भासिआइं–भाखेलां.	जस्स–जेना.
वयणाइ–वचनो	मणे–मनने विषे
न–न.	सम्मत्त–सम्यक्त्व.
अन्नहा–अन्यथा	निच्चल–निश्चल.
हुंति–होय	तस्स–तेने

विस्तारार्थः–असत्य जापणना चार कषाय, भय, हास्य, अज्ञान अने अनाभोग ए आठ कारण छे, ए आठ कारणमांथी एकपण कारण श्री जिनेश्वरने असत्य बोलवामां संभवतुं नथी. एम समजीने (सव्वाइ जिणेसरभासिआइं के०)

सर्वाणि जिनेश्वरज्ञापितानि, एटले सर्वे तीर्थंकर देवे जाखेलां जे (वयणाइ के०) वचनानि, एटले वचनो, ते (नन्नहा हुंति के०) नान्यथा जवन्ति एटले अन्यथा न होय, (इअ बुद्धी जस्स मणे के०) इति बुद्धिर्यस्य मनसि, एटले एवी बुद्धि जेना मनने विषे होय, तस्स के०) तस्य, एटले तेनुं (सम्मत्तं निच्चलं के०) सम्यक्त्वं निश्चलं, एटले सम्यक्त्व निश्चल ठे, एम जाणवुं ए समकित ते श्री वीतरागप्रणीत तत्त्वश्रद्धानलक्षण रागद्वेष रहित एवुं निर्मल जे आत्मानुं परिणाम, तेने जाणवुं ॥ ५२ ॥

हवे सम्यक्त्व पाम्यानुं फल कहे ठे–

अंतोमुहुत्तमित्तं,–पि फासिअं हुज्ज जेहिं सम्मत्तं ॥ तेसिं अवड्ढपुग्गल,–
परिअट्टो चेव संसारो ॥ ५३ ॥

गाथा ५३ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

अंतोमुहुत्त–अंतर्मुहूर्त	तेसिं–तेने.
मित्तपि–मात्र पण	अवड्ढ–अर्द्ध.
फासिअ–फरस्युं,	पुग्गल–पुद्गल
हुज्ज–होय	परिअट्टो–परावर्त्त
जेहिं–जेणे	चेव–निश्चे
सम्मत्त–समकित	संसारो–संसार

विस्तारार्थः–(अंतोमुहुत्तमित्तपि के०) अंतर्मुहूर्त्तमात्रमपि, एटले एक अंतर्मुहूर्त्त मात्र पण एटले नव समयथी मांडीने एक समये न्यून बे घडी यावत्काल मात्र पण ग्रंथिभेद करी अनंतानुबंधीयानी चोकडी खपावीने (फासिअं हुज्ज जेहिं सम्मत्तं के०) स्पृष्टं भवेद्यै, सम्यक्त्वं, एटले जे जीवोए समकित फरस्युं होय, (तेसिं के०) तेषां, एटले ते जीवोनो (अवड्ढपुग्गलपरिअट्टो के०) अपार्धपुद्गलपरावर्त्तः, एटले अर्द्ध पुद्गलपरावर्त्त (चेव के०) चैव, एटले निश्चये (संसारो

के०) संसार., एटले संसार बाकी जाणवो, पण ते प्रचुर आशातनावंत आश्रयी एटलो काल जाणवो, परंतु शुद्ध सम्यक्त्व आराधनार तो कोइक तेहीज नवे, कोइक त्रीजे नवे, कोइक सातमे नवे, कोइक आठमे नवे, एम तुरतज सिद्धपणाने पामे ॥ ५३ ॥

हवे ते पुद्गलपरावर्त्तनुं मान कहे छे–

उस्सप्पिणी अणंता, पुग्गलपरिअ-
ट्टर्ठ मुणेअव्वो ॥ तेणंतातीअद्धा,
अणागयद्धा अणंतगुणा ॥ ५४ ॥

गाथा ५४ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

उस्सप्पिणी–उत्सर्पिणी	तेणता–तेत्रा अनता
अणता–अनंती	अतीअद्धा–अतीत काळे
पुग्गल–पुदगल.	अणागयद्धा–अनागत काळे
परिअट्टओ–परावर्त्त.	अणतगुणा–अनत गुणा
मुणेअव्वो–जाणवो	

विस्तारार्थः-(उस्सप्पिणी अणंता के०) उ॰त्सर्पिण्योऽनंताः, एटले अनंती उत्सर्पिणी अने अनंती अवसर्पिणी एटलो काल जे वारे जाय, ते वारे (पुग्गलपरिअट्टउ के०) पुद्गलपरावर्त्तः, एटले एक पुद्गलपरावर्त्त (मुणेअव्वो के०) ज्ञातव्यः, एटले जाणवो (तेणंता के०) तेऽनंताः, एटले तेवा अनंता पुद्गलपरावर्त्त (अतीअद्धा के०) अतीताद्धा, एटले अतीत काले गया, अने तेथी पण (अणतगुणा के०) अनंतगुणाः, एटले अनंत गुणा पुद्गलपरावर्त्त (अणागयद्धा के०) अनागताद्धा, एटले अनागत काले जशे ए पुद्गलपरावर्त्तनुं मान कह्युं ॥ ५४ ॥

॥ हवे सिद्ध जीवोना पन्नर भेद कहे छे–

जिण-अजिण-तित्थ-तित्था, गिहि-अन्न-सलिंग-थी-नर-नपुंसा ॥ पत्तेअ-सयं-

वुद्दा, वुद्दबोहि क्कणिक्कसिद्दा य (य-
सिद्द णिक्काय ॥ ५५ ॥

गाथा ५५ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

जिण-जिनसिद्ध.	नर-पुरुषलिंगसिद्ध
अजिण-अजिनसिद्ध	नपुंसा-नपुंसकलिंगसिद्ध.
तित्थ-तीर्थसिद्ध	पत्तेअ-प्रत्येकबुद्धसिद्ध
अतित्था-अतीर्थसिद्ध	सयबुद्धा-स्वयंबुद्धसिद्ध.
गिहि-गृहस्थलिंगसिद्ध	बुद्धबोहि-बुद्धबोधितसिद्ध.
अन्न-अन्यलिंगसिद्ध	इक-एकसिद्ध
सलिंग-स्वलिंगसिद्ध.	णिक्कसिद्धा-अनेकसिद्ध.
थी-स्त्रीलिंगसिद्ध	य-अने

विस्तारार्थः-पहेला जे तीर्थंकरपदवी पामीने मोक्षे गया, ते (जिण के०) जिनः, एटले जिन-सिद्ध जाणवा. बीजा जे तीर्थंकरपद पाम्या विना सामान्य केवली थइने मोक्षे गया, ते (अजिण के०) अजिनः, एटले अजिनसिद्ध जाणवा. त्री-जा तीर्थंकरने केवलज्ञान उपन्या पछी जे मोक्षे

ગયા, તે (તિજ્ઞ કે૦) તીર્થ, એટલે તીર્થસિદ્ધ જો-
ણવા. ચોથા તીર્થંકરને કેવલજ્ઞાન ઉપન્યા પહે-
લાં જે મોક્ષે ગયા, તે (અતિજ્ઞો કે૦) અતીર્થાનિ,
એટલે અતીર્થસિદ્ધ જાણવા. આ પૂર્વોક્ત ચારે
પદોના દ્વંદ્વ સમાસથી એક પદ થાય. પાંચમા
જે ગૃહસ્થના વેશે રહ્યા થકા મોક્ષે ગયા, તે
(ગિહિ કે૦) ગૃહી, એટલે ગૃહસ્થલિંગસિદ્ધ જા-
ણવા. (અન્નસલિંગ કે૦) અન્યસ્વલિંગે, એટલે
છઠ્ઠા યોગી, સંન્યાસી પ્રમુખ તાપસના વેશે જે
મોક્ષે ગયા, તે અન્યલિંગસિદ્ધ જાણવા તથા
સાતમા જે સાધુને વેશે મોક્ષે ગયા, તે સ્વલિંગ-
સિદ્ધ જાણવા આઠમા જે સ્ત્રીવેદપણુ પામીને
મોક્ષે ગયા તે (થી કે૦) સ્ત્રી, એટલે સ્ત્રીલિંગસિદ્ધ
જાણવા. નવમા જે પુરુષવેદપણુ પામીને મોક્ષે
ગયા, તે (નર કે૦) નરઃ, એટલે પુરુષલિંગસિદ્ધ
જાવા. દશમા જે કૃત્રિમ નપુંસકવેદપણું પામી

ने मोक्ष गया, ने (नपुंसा के०) नपुंसका., एटले नपुसकलिंगसिद्ध जाणवा अहीं पण द्वंद्व समासथी एक पद थाय. अग्यारमा कोइ पदार्थ देखीने एटले बाह्य प्रत्यय देखी प्रतिबोधाया थका जे चारित्र लइने मोक्षे गया, ते (पत्तेय के०) प्रत्येकं, एटले प्रत्येकबुद्धसिद्ध जाणवा. बारमा जे गुरुना उपदेश विना पोतानी मेळे जातिस्मरणादिके प्रतिबोध पामीने मोक्षे गया छे, ते (सयबुद्धा के०) स्वयबुद्ध., एटले स्वयबुद्धसिद्ध जाणवा अहीं पण पूर्वोक्त बे पदोनो द्वंद्व समास थएलो छे. हवे प्रत्येकबुद्ध अने स्वयबुद्धनो नेद प्रसगवशात कहे छे—स्वयबुद्ध बाह्य निमित्त विना जातिस्मरणादिकथी बोध पामे छे, ते पण तीर्थंकर अने अतीर्थंकर एम बे नेदे छे, परंतु आ अधिकारमां अतीर्थंकर स्वयबुद्ध सिद्ध लेवा. तथा प्रत्येकबुद्ध वृषनादि बाह्य निमित्तथी

बोध पामे छे, अने एकला विहार करे छे, सजातीय तथा विजातीय साथे गच्छवत विहार करता नथी. ए रीते बोधिभेद कह्यो. हवे उपाधिभेद कहे छे—स्वयंबुद्धने पात्रादि उपाधि १२ प्रकारनी होय छे, अने प्रत्येकबुद्धने जघन्यथी बे अने उत्कृष्टथी प्रावरण विना ए प्रकारनी होय छे. हवे श्रुतभेद कहे छे—स्वयंबुद्धने श्रुतज्ञान होय तो, पूर्वाधित श्रुतज्ञान होय, अन्यथा न होय, जो पूर्वाधीत श्रुतज्ञान होय तो, साधुवेष देव आपे, अथवा गुरु पासे जइ पोते ग्रहण करे, अने एकला विहार करवामां समर्थ होय तो करे, नहींतो गच्छवास करे, जो पूर्वाधीत श्रुत न होय, तो गुरु पासे जइ वेष ग्रहण करे, अने गच्छमांज रहे तथा प्रत्येक बुद्धने तो जघन्यथी ११ अंग ते उत्कृष्टथी किंचित न्यून १० पूर्व जे- ~_ पूर्वाधीत श्रुत होय. हवे वेषभेद कहे छे—

हवे ए पदर नेदना उदाहरण कहे छे–

जिणसिद्धा अरिहंता, अजिणसिद्धा य पुंमरिअपमुहा ॥ गणहारि तित्थसिद्धा, अतित्थसिद्धा य मरुदेवी ॥ ५६ ॥

जिणसिद्धा–जिनसिद्ध.	गणहारि–गणधर
अरिहंता–अरिहंत	तित्थसिद्ध–तीर्थसिद्ध
अजिणसिद्धा–अजिनसिद्ध	अतित्थसिद्धा–अतीर्थसिद्ध
य–अने.	य–अने.
पुंडरीअ–पुंडरीक.	मरुदेवा–मरुदेवी माता.
पमुहा–प्रमुख.	

विस्तारार्थ.–(जिणसिद्धा के०) जिनसिद्धाः, एटले जिनसिद्ध, ते ऋषभादिक (अरिहंता के०) अर्हंतः, एटले अरिहंत नगवान पोते जाणवा, (य के०) च, अने (अजिणसिद्धा के०) अजिनसिद्धा., एटले अजिनसिद्ध, ते (पुंमरिअपमुहा के०) पुंमरिकप्रमुखाः, एटले पुंमरीक गणधर प्र-

मुख जाणवा तीर्थंकरने केवलज्ञान उपन्या के-ड़े चतुर्विध संघनी स्थापना कया पछी जे सामान्य केवली यइने मोक्ष गया, गवा (गणहारि के०) गणधारिण , एटले गणधर, ते (तित्थसिद्धा के०) तीर्थसिद्धा., एटले तीर्थसिद्ध जाणवा, केमके गणधरपदवी नो तीर्थ स्थाप्या पछीज होय माटे गणधर मुख्य कह्या, अने (अतित्थसिद्धा के०) अतीर्थसिद्धा., एटले अतीर्थसिद्ध ते तीर्थ प्रवर्त्ताव्या पहेला जे सिद्ध थया, ते (मरुदेवी के०) मरुदेवी, एटले मरुदेवी माता प्रमुख जाणवा. (य के०) चकार ते पादपूरणार्थ छे ॥५६॥

गिहिलिंगसिद्ध भरहो, वक्कलचीरी य अन्नलिंगम्मि ॥ साहू सलिंगसिद्धा, थीसिद्धा चंदणापमुहा ॥ ५७ ॥

हवे ए पदर नेदनां उदाहरण कहे ले—

जिणसिद्धा अरिहंता, अजिणसिद्धा य पुंमरिअपमुहा ॥ गणहारि तित्थसिद्धा, अतित्थसिद्धा य मरुदेवी ॥ ५६ ॥

जिणसिद्धा–जिनसिद्ध	गणहारि–गणधर
अरिहंता–अरिहंत	तित्थसिद्ध–तीर्थसिद्ध
अजिणसिद्धा–अजिनसिद्ध	अतित्थसिद्धा–अतीर्थसिद्ध
य–अने.	य–अने.
पुंडरीअ–पुंडरीक.	मरुदेवा–मरुदेवी माता
पमुहा–प्रमुख	

विस्तारार्थः–(जिणसिद्धा के०) जिनसिद्धाः, एटले जिनसिद्ध, ते ऋषभादिक (अरिहंता के०) अर्हंतः, एटले अरिहंत जगवान पोते जाणवा. (य के०) च, अने (अजिणसिद्धा के०) अजिनसिद्धाः, एटले अजिनसिद्ध, ते (पुंमरिअपमुहा के०) पुंमरिकप्रमुखाः, एटले पुंमरीक गणधर प्र-

मुख जाणवा तीर्थंकरने केवलज्ञान उपन्या के-डे चतुर्विध संघनी स्थापना कर्या पछी जे सामान्य केवली थइने मोक्षे गया, एवा (गणहारि के०) गणधारिण , एटले गणधर, ते (तित्थसिद्धा के०) तीर्थसिद्धा, एटले तीर्थसिद्ध जाणवा, केमके गणधरपदवी तो तीर्थ स्थाप्या पछीज होय माटे गणधर मुख्य कह्या, अने (अतित्थसिद्धा के०) अतीर्थसिद्धा , एटले अतीर्थसिद्ध ते तीर्थ प्रवर्त्ताव्या पहेलां जे सिद्ध थया, ते (मरुदेवी के०) मरुदेवी, एटले मरुदेवी माता प्रमुख जाणवा (य के०) चकार ते पादपूरणार्थ छे ॥५६॥

गिहिलिंगसिद्ध भरहो, वक्कलचीरी य अन्नलिंगम्मि ॥ साहू सलिंगसिद्धा, थीसिद्धा चंदणापमुहा ॥ ५७ ॥

गाथा ५७ मीना तूटा शब्दना अर्थ.

गिहिलिंगसिद्ध–गृहस्थलिंगे सिद्ध	साहू–साधु.
भरहो–भरत चक्रवर्त्ती.	सलिंगसिद्धा–स्वलिंगे सिद्ध.
वल्कलचीरी–वल्कलचीरी,	थीसिद्धा–स्त्रीलिंगे सिद्ध.
य–अने	चंदणा–चंदनबाला.
अन्नलिंगम्मि–अन्यलिंगे.	पमुहा प्रमुख

विस्तारार्थ.–(गिहिलिंगसिद्ध के०) गृहिलिंगसिद्ध., एटले गृहस्थलिंगे सिद्ध थया, ते (जरहो के०) जरतः, एटले जरत चक्रवर्त्ती प्रमुख जाणवा. (वल्कलचीरी य के०) वल्कलचीरी च एटले वल्कलचीरी आदि लइने जे तापसना वेशे सिद्ध थया, ते (अन्नलिंगम्मि के०) अन्यलिंगे एटले अन्यलिंगे सिद्ध जाणवा. (साहु के०) साधवः, एटले साधु थया थका जे सिद्ध थया, ते (सलिंगसिद्धा के०) स्वलिंगसिद्धाः, एटले स्वलिंगसिद्ध जाणवा. जे (थीसिद्धा के०) स्त्रीसिद्धा, एटले स्त्री-

लिंगे सिद्ध थया, ते (चंदणापमुहा के०) चंदना-प्रमुखा., एटले चंदनबाला प्रमुख जाणवी ॥५७॥

पुंसिद्धा गोयमाई, गांगे(याई)यपमुह नपुंसया सिद्धा ॥ पत्तेयसयंबुद्धा, भ-णिया करकंडुकविलाई ॥ ५८ ॥

गाथा ५८ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

पुंसिद्धा–पुरुषलिंगे सिद्ध
गोयमाई–गौतमादिक
गांगेय–गांगेय
पमुह–प्रमुख
नपुंसया सिद्धा–नपुंसकलिंगे सिद्ध

पत्तेअ–प्रत्येकबुद्धसिद्ध
सयंबुद्धा–स्वयंबुद्धसिद्ध
भणिया–कह्या छे
करकंडु–करकंडु.
कविलाई–कपिलादि

विस्तारार्थ.–(पुंसिद्धा के०) पुरुषसिद्धा., एटले जे पुरुषलिंगे सिद्ध थया, ते (गोयमाई के०) गौतमादय, एटले गौतमादिक जाणवा, अने (गांगेयपमुह के०) गांगेयप्रमुखा, एटले गांगेय प्रमुख जे कृत्रिम नपुंसक थइने सिद्ध थया, ते

(नपुंसयासिद्धा के०) नपुंसका., सिद्धा, एटले नपुसकलिंगे सिद्ध जाणवा (पत्तेयसयबुद्धा के०) प्रत्येकस्वयंबुद्धा., एटले प्रत्येक बुद्धसिद्ध अने स्वयबुद्धसिद्ध, ते (करकडुकविलाई के०) करकंडुकपिलादय., एटले करकंडु तथा कपिल विगेरे अनुक्रमे (जणिया के०) जणिताः, एटले शास्त्रमां कह्या छे ॥ इति ॥ ५८ ॥

तह बुद्धबोहि गुरुबो,-हिया इगसमय
इगसिद्धा य ॥ इगसमएवि अणेगा,
सिद्धा ते णेगसिद्धा य ॥ ५९ ॥

गाथा ५९ मीना छूटा शब्दना अर्थ.

तह-तेमज	य-अने
बुद्धबोहि-बुद्धबोधितसिद्ध	इगसमयेवि एक समयमा पण
गुरुबोहिया-गुरथी बोध पामेला	अणेगा-अनेक
इग-एक	सिद्धा-सिद्ध थया.
समय-समयने विषे	ते-ते
इगसिद्धा-एक सिद्ध थाय, ते एकसिद्ध	णेगसिद्धा-अनेकसिद्ध.
	य-अने.

विस्तारार्थ.–(तह के०) तथा, एटले तेमज (बुद्धवोहि के०) बुद्धबोधिता, एटले बुद्धबोधित सिद्ध ते (गुरुवोहिया के०) गुरुबोधिता, एटले गुरुना उपदेशथी बोध पामीने जे मोक्षे गया, ते जाणवा, अने (इगसमय के०) एक समये, एटले एक समयने विषे महावीर स्वामीनी परे जे एकज मोक्षे जाय, ते (इगसिद्धा य के०) एकसिद्धाश्च, एटले एकसिद्ध कहेवाय, (इगसमएवि अणेगा के०) एक समयेऽपि अनेक, एटले एक समयमां पण जे अनेक (सिद्धा के०) सिद्धाः एटले सिद्ध थया, एटले ऋषभदेव स्वामीनी परे जे एक समयमां एकसो आठ मोक्षे जाय, (ते के०) ते (णेगसिद्धा य के०) अनेकसिद्धाश्च एटले अनेकसिद्ध कहेवाय ॥ ५९ ॥

इति मोक्षतत्त्वविचारः समाप्त ॥ ९ ॥

आ नव तत्त्व समाप्त करतां आचार्य पोतानुं नाम प्रगट करे छे–

इय नवतत्तवियारो, अप्पमइनाण-जाणणाहेउं ॥ संखित्तो उध्दरिओ लिहिओ सिरिधम्मसूरीहिं ॥ ६० ॥

गाथा ६० मीना छूटा शब्दनो अर्थ.

इय–आ
नवतत्तवियारो–नवतत्त्वविचार नामे ग्रंथ.
अप्पमइनाण–अल्प मतिज्ञान-वाला जीवोना
जाणणाहेउ–जाणवा माटे.
संखित्तो–संक्षिप्त
उद्धरिओ–उद्धर्यो
लिहिओ–लख्यो, रच्यो
सिरिधम्मसूरिहिं–श्री धर्म-सूरि महाराज.

---

१ हालमा प्रसिद्धपणे चालता नवतत्त्वमा आ ग्रंथना कर्त्ता आज आचार्य छे, ए निर्णय करनार कोइ प्रमाण नथी. तो पण जुनी हस्तलिखित प्रतमाथी आ नीचे बतावेली गाथा आवे छे. खरु तत्त्व ज्ञानी जाणे

विस्तारार्थ –(इय के०) अय, एटले आ (नव तत्तवियारो के०) नवतत्त्वविचार, एटले जेमां जीवादि नव तत्त्वोनो विचार छे, एवो नवतत्त्व-विचार नामे ग्रंथ, ते (अप्पमइनाणजाणणाहेउ के०) अल्पमतिज्ञान ज्ञानहेतवे, एटले अल्प मतिज्ञानवाळा जीवोना ज्ञान थवा माटे (सिरिधम्मसूरीहिं के०) श्रीधर्मसूरिभि, एटले श्री धर्मसूरी नामे आचार्य महाराजे श्रुतसागरमांथी (संखित्तो के०) संक्षिप्त, एटले संक्षिप्त एवो (उद्धरिउ के०) उद्धृत, एटले उद्धर्यो-काढ्यो, तथा (लिहिउ के०) लख्यो छे–रच्यो छे ॥ ६० ॥.

॥इति बालावबोधसहित नवतत्त्वप्रकरण समाप्त ॥



